मोहरिते सच्चवयणस्स पलिमंथू (ठाणंगसुत्त, ५२९)

अनुसन्धान - ७५(१)

स्वाध्याय खण्ड

प्राकृतभाषा अने जैनसाहित्य विषयक संपादन, संशोधन, माहिती वगेरेनी पत्रिका

संपादक : विजयशीलचन्द्रसूरि

कलिकालसर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य
नवम जन्मशताब्दी स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि - अमदावाद

September - 2018

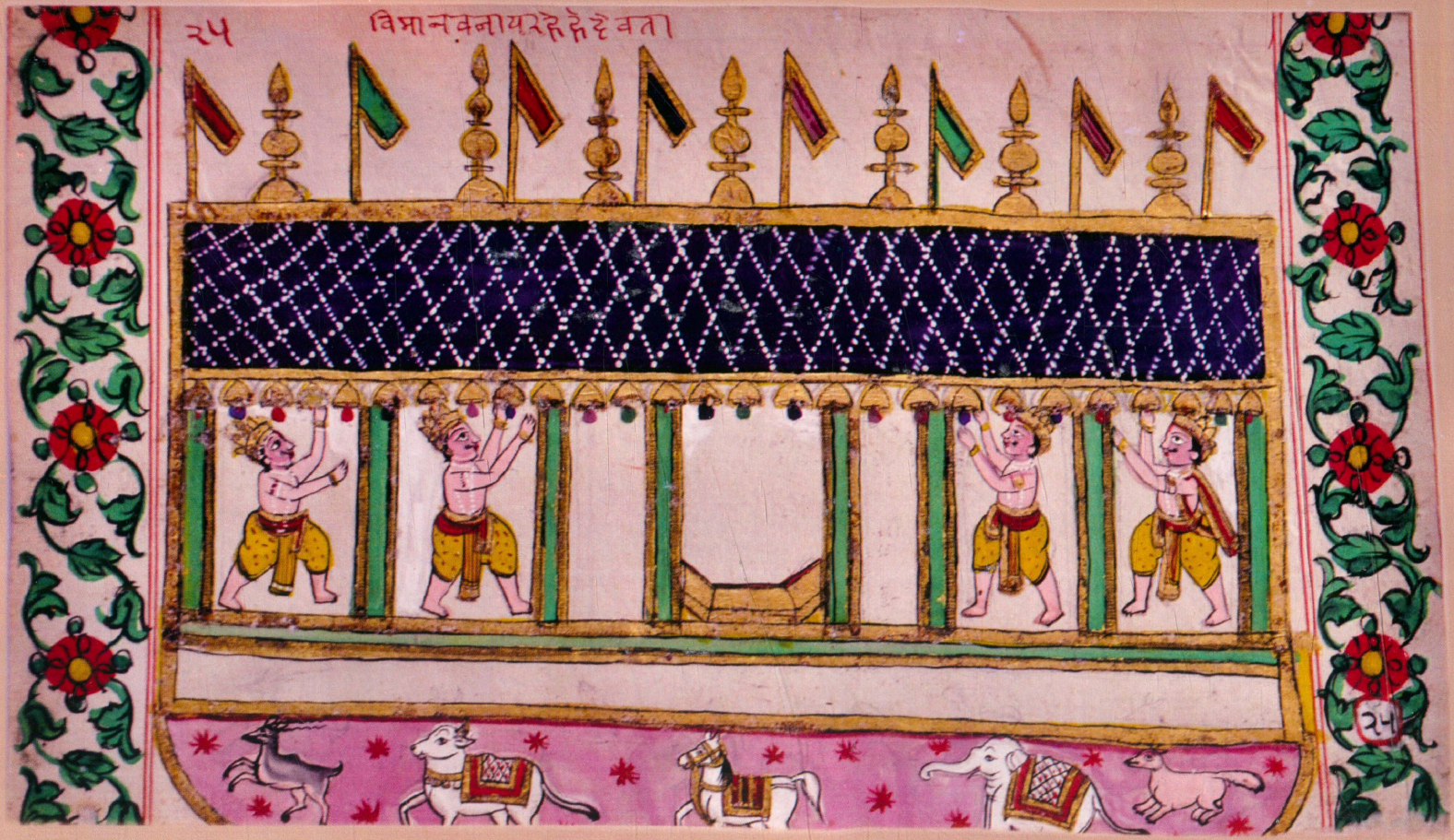

२५
विमान वनाय रहे है देवता
२५

मोहरिते सच्चवयणस्स पलिमंथू (ठाणंगसुत्त, ५२९)
'मुखरता सत्यवचननी विघातक छे'

अनुसन्धान

प्राकृतभाषा अने जैनसाहित्य-विषयक
सम्पादन, संशोधन, माहिती वगेरेनी पत्रिका

७५ (१)

स्वाध्याय खण्ड

सम्पादक :
विजयशीलचन्द्रसूरि

श्रीहेमचन्द्राचार्य

कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी
स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि
अहमदाबाद
सप्टेम्बर - २०१८

अनुसन्धान - ७५ (१)

आद्य सम्पादक : **डॉ. हरिवल्लभ भायाणी**

सम्पादक : **विजयशीलचन्द्रसूरि**

सम्पर्क : C/o. **अतुल एच. कापडिया**
A-9, जागृति फ्लेट्स, पालडी
महावीर टावर पाछळ, अमदावाद-३८०००७
फोन : ९९७९८ ५२१३५
E-mail : s.samrat2005@gmail.com

प्रकाशक : **कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि, अहमदाबाद**

प्राप्तिस्थान : (१) **आ. श्रीविजयनेमिसूरि जैन स्वाध्यायमन्दिर**
१२, भगतबाग, जैननगर, नवा शारदामन्दिर रोड,
आणंदजी कल्याणजी पेढीनी बाजुमां, अमदावाद-३८०००७
फोन : ०७९-२६६२२४६५

(२) **श्रीविजयनेमिसूरि ज्ञानशाला**
शासनसम्राट् भवन, शेठ हठीभाईनी वाडी,
दिल्ही दरवाजा बहार, अमदावाद-३८०००४
मो. ९७२६५ ९०९४९
E-mail : nemisuri.gyanshala@gmail.com

(३) **सरस्वती पुस्तक भण्डार**
११२, हाथीखाना, रतनपोल,
अमदावाद-३८०००१
फोन : ०७९-२५३५६६९२

प्रति : 250

मूल्य : ₹ 450-00 (सेट)

मुद्रक : **क्रिशना ग्राफिक्स, किरीट हरजीभाई पटेल**
९६६, नारणपुरा जूना गाम, अमदावाद-३८००१३
(फोन: ०७९-२७४९४३९३)

निवेदन

संशोधन एटले एक प्रकारनुं उत्खनन : Excavation.

पुरातात्त्विक अथवा आर्कियोलोजिकल उत्खननमां धरतीना अमुक प्रदेशविशेष पर खोदकाम करीने ते धरतीना नहि देखाता एवा पुरातन अंशने के स्वरूपने अनावृत-प्रगट करवानुं होय छे. उपरना अनेक थर हटे पछी भीतरमां दटायेलो भूतकाळ, भूतकालीन अवशेषो, अने ते द्वारा इतिहास, प्रगट थतो होय छे, जे घणीवार आपणने सेंकडो, बल्के हजारो वर्ष पूर्वेना कालखण्डनी यात्रा करावे छे.

कंईक ए ज रीते शब्दबद्ध कृतिगत शब्दो पर उत्खनन करवामां आवे त्यारे, कृतिना मूळ रचयिताने अभिप्रेत शब्द अने अर्थ सुधी आपणे पहोंचता होईए छीए. ज्यारे ए मूळ शब्द के पाठनी भाळ मळे त्यारे आपणने ख्याल आवे ते असल पाठ पर, समयना वहेवा साथे, केटला बधा थर जामी गया छे के जामता गया छे.

एक वार भायाणीसाहेबे 'जुगनू' (आगियो जीव) शब्द पर पोते करेलुं उत्खनन समजावतां तेनुं मूळ 'ज्योतिरिङ्गण'मां होवानुं दर्शावी आपेलुं. ते क्षणे शब्दोना पूर्व जन्मो के पूर्व रूपो विषे जाणवा माटे केटली सज्जता जोईए तेनुं भान पडेलुं; अने त्यारे पाठ-शोधननुं कार्य केटलुं महत्त्वनुं तेमज जवाबदारीभर्युं छे तेनो पण संकेत मळेलो.

पुरातत्त्वमां उत्खनन एटले आडेधड खोदी नाखवुं नहि; एक तज्ज्ञ के निष्णात पुरातत्त्ववेत्ता, जे भूमि पर उत्खनन करवानुं होय तेना इतिहासने बराबर जाणतो होय, ते स्थान पर जे प्रकारना बांधकामनो तेमने अंदाज होय तेना नकशा-पुरातात्त्विक नकशा तेना दिमागमां बराबर स्पष्ट होय; अने पछी ते जे ते स्थळ पर लाइनदोरी आंकी बतावे अने ते प्रमाणे मजूरो कोश-कोदाळी-त्रीकम वगेरे ओजारो चलावीने खोदकाम करे; जेथी अंदर दटायेला पुरावशेषोने नुकसान न थाय.

कंईक ए ज रीते शाब्दिक पाठ-शोधननुं पण छे. शब्द नजर सामे होय, तेना मूळनो नकशो शोधके बनाववानो होय छे, अने पछी भाषा, ध्वनि, समान सन्दर्भो, अर्थसंगति, प्रकरण इत्यादि ओजारोनो विनियोग करतां जईने ते शब्दना

मूळ स्वरूप सुधी पहोंचवानुं होय छे. आमां कशुं आडेधड न चाले : कल्पना तो हरगीज न चाले; हा, कल्पकता होवी जरूरी.

एक शब्द हतो 'मावठुं' : एक विद्वाने तेनी व्युत्पत्ति आपी : मा नी जेम वृष्टि ते मावठुं. (स्मरणने आधारे नोंध्युं छे. भूलचूक लेवी-देवी). हवे आमां कल्पकता ओछी छे ने कल्पना झाझी. 'मावठुं'नुं मूळ 'माघ-वृष्टि'मां छे. महा मासमां पडता कमोसमी वरसादने 'मावठां' तरीके ओळखवामां आवे छे. अहीं उत्खननमां कल्पनानुं ओजार जराक आडुं पडी जाय तो केवुं विचित्र अर्थघटन नीपजे ते समजवा जेवुं छे.

उपाध्याय विनयप्रभरचित 'गौतमरास'मां एक पंक्ति छे : **'तीरि तरंडक जिम ते वहता'** : अर्थात् 'ते - देवो तीर (अने) तरंडकनी जेम वहेता थया.' आ पाठ ने आ अर्थ परम्पराथी चाले छे; एमां कोईने क्यारेय प्रश्न थयो के थतो नथी. 'तीर' अने 'तरंडक' - आम बे उपमान एक वाक्यमां केम? ते युक्त छे के केम? - आवो कोई सवाल क्यांय उठतो नथी; यथातथ स्वीकार ज थतो रह्यो छे. 'तीर' एनी जाते सडसडाट केम वही जाय? - एम पूछवामां आवे तो तरत समाधान मली जाय के 'ए तो कोईए फेंक्युं होय तो वही ज जाय ने!' अहीं एक क्रिया वर्णववा माटे लगोलग बे उपमान आम कोई कुशल कवि प्रयोजे? - एवो प्रश्न नथी थतो.

आवो प्रश्न बधाने भले न थाय; संशोधकने थाय. डॉ. भायाणी तथा श्रीअगरचंद नाहटा जेवा ख्यात विद्वानोने आवो सवाल थयो, अने तेमणे आ शब्द के पाठना मूळनी गवेषणा करी, तो तेमने पाठ जड्यो : **'नीरि तरंडक जिम ते वहता'** अर्थात्, पाणीमां वहेता तरंडक-तरापा के होडीनी जेम ते-देवो वही गया.'

'तीरि' अने 'नीरि' - केटलो नानकडो तफावत! पण केटलो मोटो अर्थ-भेद! शब्दोना उत्खननती प्रक्रिया केवी सूक्ष्म अने केटली मर्म-सभर!

बधा ज ज्यारे 'तीर' ने साचो पाठ मानीने चालता होय त्यारे 'कोई'ने ए पाठमां गरबड होवानुं लागे त्यारे तेमना मनमां चालनारी प्रक्रिया कांईक आवी होय : सन्देह → जिज्ञासा → प्रश्न → कल्पकता → उत्तर. हा, संशोधक सदाय सन्देहशील पण होय, जिज्ञासु पण होय, अने तेथी तेने प्रश्न उद्भवता अने सतावता ज रहेता होय. पोतानी कल्पनाशक्ति द्वारा घणीवार उत्तर ते शोधे, तो मोटा भागे

तेने पुराणी हस्तप्रतिमां सचवायेला साचा पाठनुं प्रमाण पण जडी आवे. परन्तु, व्यवहारमां रूढ अने चलणी बनेला पाठने निरस्त करवो तथा तेना स्थाने शुद्ध, कर्ताने सम्मत पाठनी पुनः स्थापना करवी – ए आपणे मानी लईए एटलुं सहेलुं तो नहि ज. रूढ पाठ माटेनी दलीलो आवी होय : ''आ पाठ रहे तोय वांधो शुं? अर्थ तो बेसी ज जाय छे! अमने तो आ ज पाठ जीभे चडी गयो छे, एमां हवे फेरफार केम थाय? वळी, आ पाठ पण को'क प्रतमां वृद्धोए जोयो हशे तो ज छपाव्यो हशे ने? तेमने मळेली प्रतनो पाठ ज साचो – एवुं केम मानी लईए?'' – अने रूढिजड लोको साथे काम पाडनाराने बराबर खबर छे के आवी दलीलो हमेशां अकाट्य होय छे, बहुजनने ते मान्य रहे छे, अने तेथी संशोधक द्वारा स्थापवामां आवता शुद्ध पाठने पण अशुद्ध मानवानुं वलण अकबंध रहे छे.

साचो संशोधक आ बधांथी उभगे नहि, डरे के डगे नहि. तेनुं संशोधन काळनी कसोटीए खरुं ऊतरेलुं ज रहेवानुं छे; भले कोई तेनो अस्वीकार करे.

शब्द-उत्खननना बीजा एक-बे उदाहरण जोईए. 'मांगरोळ' अने 'वलसाड' – बे गाम (के शहेर)नां नाम छे. बन्नेमांथी एकेयनो शब्दार्थ जडतो नथी; शो अर्थ थाय ते ज समजाय तेम नथी. सहेजे सवाल तो जागे के अर्थ विनानां नाम तो केम संभवे?

थोडीक खणखोद करीए अने ध्वनिशास्त्र जेवा ओजारनी मदद लईए तो समजाय के 'मांगलोर'नुं 'मांगरोळ' थयुं छे, अने 'वडसाल'नुं 'वलसाड' थयुं छे.

मूळे मंगलपुर, तेमांथी शब्दनुं पतन थतां थतां मंगलउर → मंगलोर → मांगलोर ने पछी ध्वनि-परिवर्तन थतां बन्युं 'मांगरोल'. संस्कृत शब्दनुं पतन थाय त्यारे जे सर्जाय ते अपभ्रंश!

ए ज रीते नगरना पादरे पुष्कल वडनां वृक्षो होवाने कारणे ओळख बनी 'वडसाल'. पछी लपसेली जीभे ध्वनि-परिवर्तन करी आप्युं : 'वलसाड'. आजे तो वल्हाड!

तो, शब्दोनुं उत्खनन करतां आवडे तो तेमांथी पण शब्दना-पाठना-वाचनाना मूळ स्वरूप के स्रोत सुधी जरूर पहोंची शकाय, एटलुं ज अहीं कथयितव्य छे.

– शी.

आवरणचित्र–परिचय

गुजरात अने राजस्थान ए बे प्रदेशोनी विविध चित्रशैलीओ तेम ज पोथीचित्रो कलाजगतमां सुख्यात छे. पोथीनां चित्रो 'लघुचित्र' (Miniatures) तरीके ओळखाय छे. आम तो विविध धर्मना ग्रन्थो के पछी इतर ग्रन्थोनी पोथीओ सचित्र मळी छे; परन्तु तेमां जैन पोथीचित्रोनुं प्रमाण सौथी अधिक अने खूब विपुल मात्रामां छे. जैन पोथीचित्रो विविध शैलीओमां आलेखायेलां जोवा मळे : राजस्थाननी विविध शैलीओमां, राजपूत शैलीमां, मुघल शैलीओमां तेम ज मालवानी, माण्डूनी, जौनपुरनी, बंगाळनी – एवी अनेक चित्रशैलीओमां आलेखायेलां जैन चित्रो उपलब्ध छे. जैनोए विकसावेली पोतानी आगवी चित्रशैली, जे 'जैन शैली' तरीके जाणीती छे, तेमां तो अढळक पोथीचित्रो प्राप्त छे ज. कलाविदो आ जैन शैलीने गुजरात शैली, पश्चिम भारतीय शैली, अपभ्रंश शैली जेवां नामे ओळखवानुं वधु पसंद करे छे. तेने 'जैन' नामे ओळखवामां तेमने साम्प्रदायिकता के धार्मिकतानी बदबू आवे छे. जो के वैष्णव के स्वामीनारायण के बौद्ध पोथीचित्रोने ते ते धर्मना नामे ओळखवामां तद्विदोने तेवी बदबू नथी आवती, ते जाणवा जेवुं छे.

जैनोए ११माथी १९मा शतक सुधी कला अने कलाकारोने एकधारुं पोषण-प्रोत्साहन आप्युं छे. २०मा अने २१मा शतकमां पण पोथीलेखन अने चित्रो वडे पोथीओने शणगारवानां कार्यो जैनोए अविरतपणे जाळवी राख्यां छे, जेनो ख्याल बहु ओछाने हशे. गुजरात, मारवाड, महाराष्ट्र, ओरिस्सा वगेरे प्रान्तोना सेंकडो लहिया तथा चित्रकारोने आजे पण जैन समाज पोषे छे, अने तेमनी पासे कला-कार्य अने लेखन-कार्य करावी एक बाजु कलाने चिरंजीव बनावे छे, तो बीजी बाजु ते कारीगरोने रोजी-रोटी पूरी पाडे छे. आटलुं प्रासङ्गिक. हवे मूल वात :-

जैन आगमोनी एवी सेंकडो पोथी मळे, जेमां एक-बे के बे-चार चित्रो होय. पण आगमसूत्रनी आखी पोथी चित्रोथी भरेली होय एवुं बहु ओछुं बने. कल्पसूत्र तथा उत्तराध्ययनसूत्र जेवां सूत्रोनी पोथीओने बाजुए राखी ए तो, अन्य कोई आगमनी पोथीमां ६०-७० के तेथीये वधु चित्रो होवानी शक्यता नहिवत् ज गणाय.

अहीं जे चित्रो आवरण-पृष्ठो पर आपवामां आव्यां छे, ते आवी ज एक आगमपोथीनां चित्रो छे. वर्तमानमां उपलब्ध अने मान्य एवां ४५ आगमोमां **'रायपसेणीय'** नामे एक उपाङ्गसूत्र (आगम) छे. तेनी २०मा सैकामां (१९२३) आलेखायेली एक पोथी छे. २७१ पानांनी आ पोथीमां मूळ प्राकृत आगमसूत्र, तेनो टबार्थ (मारुगुर्जर भाषामां) तेम ज ७० लगभग सुन्दर चित्रो छे. केटलांक तो आखा पानानां चित्रो छे.

पोथी राजस्थानना भणसाली सुभकरणना पुत्र मुथरादास नामे गृहस्थे लखावी छे, अने तेमना सहोदर भाई गंगारामे लखी छे, तेवो उल्लेख पृ. २७१/२ परनी पुष्पिकामां जोवा मळे छे. 'रायपसेणीय'नुं संस्कृत रूपान्तर थाय 'राजप्रश्नीय'.

प्रस्तुत 'अनुसन्धान' ७५-१ मां ते पैकी ४ चित्रो आपवामां आव्यां छे. तेनो सामान्य परिचय आम छे :–

आवरण पृष्ठ १ : पोथीनुं आ प्रथम पानुं छे. तेमां लखाणवाळा हिस्सामां मध्यमां त्रण लाल अने एक काळा अक्षरो धरावती पंक्तिओमां सूत्रनो प्रारम्भिक मूळ पाठ छे. मथाळानी ३ पंक्तिमां तेनो बालावबोध (अर्थ) छे. चित्रना बे विभाग छे. खरेखर तो बे चित्रो ज छे. प्रथम चित्रमां, अरिहन्त (मध्यवर्ती, श्वेत), सिद्ध (लाल), आचार्य (पीळो), उपाध्याय (नील), साधु (श्याम), ए पांच परमेष्ठीनां चित्राङ्कन छे. शेष चार खानामां नवकारगत ते ५ना नमस्कारनो अर्थ तथा 'रायपसेणीय' सूत्रनो परिचय लखेल छे. तो बीजा चित्रमां, सूत्रमां जेनो उल्लेख थाय छे ते 'आमलकल्पा' नगरीनुं मनोरम दृश्य दर्शावायुं छे. एमां हवेली छे, उपवनो छे, राजमार्ग अने ते पर चालता नगरजनो छे, तो हाटमां बेसी वेपार करतां व्यापारीओ पण देखाय छे. देवमन्दिर पण मार्गनी वच्चोवच चोकमां देखाय छे. नगरने फरतो कोट पण, द्वार समेत, लाल रंगे दर्शाव्यो छे.

आवरण पृष्ठ ४ : आ पोथीनुं छेल्लुं-२७१मुं पत्र छे. ते परनी पुष्पिका (Colophan) आ प्रमाणे वंचाय छे : (१) टबो : **''इतीश्रीराजप्रसेन बीजा अंगना सूत्र तथा टबार्थ समाप्तं, टबा पुरा लीख्या माहा सुदि १५ को पुरा लीख्या''** ।

(२) मूलग्रन्थ : **''इतिश्रीरायप्रसेणीसूत्र टबा अर्थ समाप्तं । संवत १९२३ आषाड सूदि १४ बुधवासरे लिखतं । सुश्रावक पुन्यप्रभावक भणसालीगोत्रे साहजी श्री ५ सुभकरणदास ततपुत्र कूलदीपकं मुथरादासेन लिखावितं । आपणा आत्माहेते । लीखतं सहोदर भाई गंगारामेणं । श्रीकल्याणं ॥''**

(३) चित्र-परिचयनुं लखाण : **''सुसाधुजी रायप्रसेनी वाच रहे छे : मुथरादास सपरिवार सांभलइ छइ''** ।

लखाण पूरुं थाय त्यां चित्र छे. सुन्दर उपाश्रयनुं चित्र. तेमां उपर पाकुं धाबुं अने ते पर नाना मोटा गवाक्ष. कमाननी सरस रचना मकानने त्रण विभागमां वहेंची आपे छे. मध्यना बृहद् विभागमां पीठ पर साधु बेठा छे, तेमनी सामे ठवणी (सापडा) उपर 'रायपसेणी' ग्रन्थनी पोथी छे, तेनुं नाम वंचाय छे. सामे बे जणा बेठा छे : पाघडी अने उत्तरासंग (खेस) परिधान करेला ते बेमां १ **मुथरादास** अने २

कन्हइयालाल तरीके ओळखावेल छे. तेमनी पाछळ, त्रीजा के जमणा विभागमां बेठेला बे जणनां नाम - **'चुनीलाल', 'हिरालाल'** एवां लख्यां छे. साधु उपरनुं लखाण - **'साधु मुनिराज बखान रायप्रसेनी का करइ छइ'** ए प्रमाणे वंचाय छे. ज्यारे तेमनी पाछळना, डाबा अथवा पहेला विभागमां एक गृहस्थ बेठेला देखाय छे, तेनो परिचय : **'गंगादास सहोदरने लिखी'** एम वंचाय छे. उपाश्रयनी बन्ने तरफ बतावेलां वृक्षो, उपाश्रय कोई वाडी (बगीचा) वाळा स्थानमां होवानुं सूचवे छे.

आवरण पृष्ठ २ अने ३ : आ आगमसूत्रमां **'सूर्याभ'** नामे एक देवनी वात विशेषे आवे छे. ते पूर्वावस्थामां राजा हतो, अने मरीने देव थतां भगवान महावीरनी भक्ति माटे पोतानी समग्र ऋद्धि साथे ते 'आमलकल्पा'मां भगवान छे त्यां आवे छे. त्यां समवसरेला भगवान सामे ते पोतानी देवशक्तिथी ३२ नाटको निर्मे छे, अने नाट्य-नृत्य-वाद्य-गीत वगेरे द्वारा भगवाननी भक्ति करे छे. ते देवविमानमां परिवार साथे आवे त्यारे एक विमान दिव्य शक्तिथी बनावी तेमां बेसीने आवे. ते विमाननुं निर्माण (Construction) देवो द्वारा केवी रीते थाय तेनो चितार आवरण २ मां आपेल चित्र आपे छे. आम तो देवशक्तिथी पलकारामां ज बधुं थाय, परन्तु चित्रकारे देवो द्वारा थतुं विमाननुं बांधकाम दर्शावीने पोतानी सर्जनात्मक कल्पनाने एक नवो ज आयाम आप्यो छे. चित्रना मथाळे- **'विमान बनाय रहे है देवता'** एम लखेलुं छे ते आ कल्पनाने पुष्टि आपनारुं छे. चित्र ३ मां निर्माण पामेलुं समग्र विमान जोई शकाय छे. मध्यमां 'सूर्याभ' देव, आगळ-पाछळ तेनो परिवार, नीचे द्वाररक्षको, सौथी मोखरे वाजिंत्रकारो, पहेले के सौथी उपरना मजले एक सुन्दर देवयुगल, तेमनी सामे विमानगत देवभवन तेमज कल्पवृक्षो-खचित उद्यान. बधुं ज जाणे एकमेकनुं पूरक बनीने अनिवार्य अंगरूप बनतुं अनुभवाय ! मथाळे लखायुं छे : **'सोधर्म देवलोक के मधमधमें थइ विमाने बेठा सपरिवार गाजाबाजा गाजत हुवा जाय छै.''**

आ प्रति अद्यावधि अजाणी छे. अमारा साधु, सरलस्वभावी, पंन्यास श्रीचन्द्रकीर्तिविजयजी गणिए तथा तेमना पिता-गुरु स्व. मुनि श्रीदर्शनविजयजीए ते प्रतिने घणी संभाळपूर्वक साचवी छे. तेमना सौजन्यथी तेनां चित्रो अनु. ७५-१/२मां पहेलीवार प्रगट थाय छे.

चित्रोनी शैली राजस्थाननी छे. चित्रोमां घणी विलक्षणताओ जोवा मळे छे. सूर्याभ देव अने तेनां नाटको विषेनां चित्रो कदाच भाग्ये ज अन्यत्र क्यांय होय ! ए रीते जोईए तो आ प्रति बहु विशिष्ट ज गणवी पडे. तेनां सघळां चित्रोनो सम्पुट प्रगट थाय तो कलानी दुनियाने एक नवो ज खजानो लाधे.

* * *

अनुक्रम

विभाग - १ : ७५मा अङ्कना सुअवसरे

७५मा अङ्कना सुअवसरे...	विजयशीलचन्द्रसूरि	१
'अनुसन्धान' : एक अवलोकन	मणिभाई प्रजापति	८
'अनुसन्धान'ना विज्ञप्तिपत्र विशेषांको	डॉ. कान्तिभाई बी. शाह	२८
मारी नजरे - 'अनुसन्धान' सामयिक तथा तेना स्वप्नद्रष्टा, सर्जक, सम्पादक	मुनिश्री कीर्तिचन्द्रविजयजी (बन्धुत्रिपुटी)	४१
'अनुसन्धान'नो समृद्ध ज्ञानवारसो	डॉ. मालती किशोरकुमार शाह	४७
निरंजनभाईने पत्र : 'अनुसन्धान' विषे	मनोज रावल	४९
हजी अेक दरवाजे दीवो बळे छे...	निरंजन राज्यगुरु	५४
'अनुसन्धान' : समृद्धि अने समन्वय	छेलभाई व्यास	६१
आशीर्वचना तथा शुभकामनाओ		

विभाग - २ : संशोधन

विहंगावलोकन	उपा. भुवनचन्द्र	७१
एक दुर्लभ प्रतिमालेख	उपा. भुवनचन्द्र	७३
भारतीय संस्कृतिना पुरोधा : ऋषभदेव	विजयशीलचन्द्रसूरि	७६
जैनस्त्रोतनी रासनी कृतिओ : स्वरूप-सन्दर्भे	डॉ. हसु याज्ञिक	८३
कवि लावण्यसमय	राजेश पंड्या	९४
मथुराना देव निर्मित स्तूपनी प्रतिमाओ अने शिल्पोनी विशेषता	डॉ. रेणुका पोरवाल	१०१

संत-समागम कीजे... साधो... मारी हेली	डॉ. नाथालाल गोहिल	११०
प्रभास-पाटणमां जैन धर्म	हसमुख व्यास	११७
महाकाव्यो जेवी रचनाओमां प्रक्षेपोनो प्रश्न	शिरीष पंचाल	१२४
तिर्यञ्च स्त्री से देवों के अल्पबहुत्व की तटस्थ समीक्षा	आ. श्रीरामलालजी म.	१३५
बृहत्कल्पचूर्णि - बृहत्कल्पबृहद्भाष्य के पीठिकाखण्ड की प्रस्तावना	विजयशीलचन्द्रसूरि मुनि त्रैलोक्यमण्डनविजय	१४६
नवां प्रकाशनो		२०६

: सौजन्य :

अनुसन्धान – ७५(१-२)ना प्रकाशन माटे
श्री आदीश्वर जैन देरासर ट्रस्ट - पालघर
श्रीसंघनी श्राविकाबहेनोए ज्ञानद्रव्यनी
आवकमांथी उदार सहयोग आपेल छे.

अनुमोदना

७५मा अङ्कना सुअवसरे...

'अनुसन्धान'ना अद्यावधि प्रकट थयेला अङ्को पर एक ऊडतो दृष्टिपात करवा बेठो त्यारे मनमां प्रगटेली केटलीक लागणीओ अहीं रजू करवी छे.

सौथी पहेली लागणी अचंबानी अथवा तो विस्मयनी छे. एक सामयिक चलाववा माटेनो अभ्यास नहि, आयास नहि, अहेसास पण नहि, अने छतां ते, २५-२६ वर्षे पण, ७५मा मुकाम पर पहोंच्युं, तेनो अचंबो केमेय ओछो नथी थतो. एम थाय के कशी पद्धतिसरनी तालीम नथी, अने सामयिक चलाववानी कोई शिस्त नथी जाणतां, तोय आटली मजल कापी शकाई, तो जो तेवी तालीम अने शिस्त आवी होत के आवी जाय, तो तो केटला वेगथी अने केटली वधु सारी रीते आगळ आवी शकाय?

अलबत्त, शिस्त अने तालीम - बधुं हवे तो भविष्यना सम्पादकने माटे; आपणे तो हवे 'पाका घडे कांठा क्यां चडवाना?'.

बीजी लागणी 'क्षोभ'नी छे. पाछला अङ्को उथलावती वेळाए अनेक क्षतिओ ने खामीओ नजरे चडी. ए जोतां ख्याल आवे के अमे केटला उतावळा-अधकचरी दृष्टिवाळा हता ! सम्पादकीय शिस्त, चोकसाई, चोक्कस धोरणो अने मापदण्डो — आ बधुं होत तो आम न बनत. मुद्रणना दोषो ठेर ठेर जडे. सम्पादननी कचाश पण जोई शकाय. उत्साहवश कृतिओ पूर्वे अन्यत्र प्रकाशित-सम्पादित होय तोय छपाई जाय. आ बधुं जोतां अणघडता परत्वे क्षोभ अनुभवायो.

आ सामयिक-साहसमां साथ-सहयोग आपनारा अनेक मित्रो के वडीलोनी स्मृति पण चित्तने प्लावित करी गई. सर्व प्रथम बे नाम स्मृतिपटमां ऊग्यां : आचार्य श्रीविजयसूर्योदयसूरि महाराज अने डो. हरिवल्लभ भायाणी.

पूज्य सूर्योदयसूरि महाराज मारा गुरु हता. मारा माटे ए माता पण, पिता पण, गुरु पण अने मित्र पण हता. मारा जीवननी थोडीक पण उजळामण तेम ज सफलता सहुने देखाती होय तो तेनुं कारण तेओ छे. तेमनी केळवणी अने तेमनो कडप - बन्नेए मने घड्यो छे. हस्तलिखित पोथीओने फेंदवा-उकेलवाना अने कशुंक नवुं शोधवाना चाळे पण मने तेओ ज चडावेलो. ए चाळो आजे तो जीवननुं व्यसन थई पड्यो छे. मारी कोई इच्छाने तेमणे नकारी के उवेखी नथी.

आज्ञा, शिस्त अने मर्यादाना पालननी पद्धतिने कारणे, मनमां उद्भवती रचनात्मक इच्छा हुं तेमनी समक्ष पेश करुं के तरत तेने संमति मळती. ते माटेनी गोठवणो पण करी आपता. एटले ज्यारे भायाणीसाहेबे सूचवेली 'अनुसन्धान' पत्रिका प्रकाशित करवानी दरखास्त में तेओ आगळ रजू करी, तेमणे तत्क्षण तेने वधावी, राजीपो दर्शावी अनुमति आपी, अने ट्रस्टनी ते दिवसोमां आर्थिक सम्पन्नता न होवा छतां तेने माटे नर्चिंत रहेवानुं जणाव्युं. आम, 'अनुसन्धान' तेना आरम्भथी आज सुधी डगमग्या वगर - अस्खलित रीते चाल्युं छे, चाले छे, तेमां मारा गुरुनो आ अनुग्रह हेतु छे - एवुं, अतिशयोक्ति वगर कहेवुं जोईए.

हवे भायाणी साहेबनी वात करुं. हेम-नवम-शताब्दी-पर्वे साहित्य परिषदे प्रगट करेली, सुरेश दलाल-निर्मित डायरी मने मोकलीने तेवी हेम-डायरी बनाववा तेमणे मने उश्केर्यो - त्यारथी तेमनो सत्सङ्ग. १९९३मां अपभ्रंश शीखवाना बहाने तेमनो विशेष सत्सङ्ग माण्यो. मने श्रद्धा हती के मने अपभ्रंश आवडवानुं नथी, छतां ते शीखवाना बहाने भायाणीजीनो २-३ कलाकनो समागम मळतो होय तो भणवानो ने आवडवानो डोळ करवामां कांई खोटुं नहि - एवा खयालातो ते दिवसोमां हता. सप्ताहमां ३ के ४ दहाडा अमे बेसता. दरेक बेठक २-३ कलाकनी. अलकमलकनी पण सात्त्विक ने साहित्यिक वातो तेओ लावे-बोले. तेमनी सामाने समजाववानी ने नवुं नवुं जणाववानी धगश एक मुग्ध तरुणने शोभे तेवी. तेमनुं खिलखिलाट स्मित ने खडखडाट हास्य, अने क्यारेक 'मन्यु'थी रातोचोळ बनी जतो चहेरो - बधुं मन भरीने त्यारे माण्युं. एवी एक बेठकमां तेमणे प्राकृत-अपभ्रंश-संस्कृत भाषाना साहित्यमां जे काम थयुं छे, थाय छे, ते बधांनी माहिती न मळवाने कारणे घणा गुंचवाडा थाय छे, अने केटलांक कामो बेवडाय छे. आ माटे अेक सामयिक पत्रिकारूपे प्रगट करवुं छे, परन्तु तेनी आर्थिक व्यवस्थानो प्रश्न अघरो छे, एवी वात करी. मने तेमनी वातमां रस पड्यो. तेमना मनमां आवी पत्रिका विषे जे रूपरेखा होय ते विगते समजवा यत्न कर्यो, अने में, 'मारा गुरुजी मारी आ दरखास्त स्वीकारशे ज' एवा विश्वास साथे, तेवी पत्रिका 'हेमचन्द्राचार्य ट्रस्ट' करशे तेवो विश्वास तेमने आप्यो. तेमणे 'अनुसन्धान' नाम नक्की कर्युं. प्रारम्भिक सघळुं आयोजन तेओए करवानुं ठर्युं. अने १९९३मां आ सामयिक शरु थयुं.

'अनुसन्धान'नुं ऐतिह्य, वीगते, ५०मा अङ्कमां आप्युं छे, एटले बधी विगतोनुं पुनरावर्तन नहि करुं. तो प्रथम-द्वितीय अङ्कोमां आ पत्रिकाना उद्देशो विषे पण निवेदन आपेलुं छे ज. आ क्षणे तो आ पत्रिकाना पायामां भायाणीजी छे, अने आना १७ अङ्को पर्यन्त आनुं सम्पादन-संचालन पण मुख्यत्वे तेमणे ज संभाळ्युं हतुं, एटलुं ज कहेवानुं प्राप्त छे. आ अनियत पत्रिकाने चालु राखी शकाई अने ७५मा अङ्क सुधी लावी शकाई ते जेम आनन्दनो विषय बने छे तेम, उपर उल्लेखेला बन्ने स्वनामधन्य गुरुजन तथा विद्वज्जनने अंजलिसमान पण बने छे.

*

'अनुसन्धान'नी आ यात्रामां भायाणीजी अने जयन्तभाई कोठारीनी शब्दचर्चा, आ पत्रिकाने वास्तवमां शोधपत्रिकानुं स्वरूप बक्षती रही. तेओ बन्नेनी विदाय पछी शब्दचर्चा बंध थतां एक जातनो खालीपो वर्तातो रह्यो छे. ए पछी पत्रिका महदंशे कृति-सम्पादनपरक रही छे. जो के विविध विद्वज्जनोना लेखो पण अवारनवार प्रगट थतां रह्या छे खरा. केटलोक समय जयपुरना श्रीविनय-सागरजीए पत्रिकामां ऊंडो रस लीधो. तेओ जीव्या त्यां लगी रस लेतां रह्या. अमारा समुदायना ज आचार्य विजयसोमचन्द्रसूरिजीना बे शिष्यो मुनि सुयशचन्द्र-विजयजी अने मुनि सुजसचन्द्रविजयजीए पण आ पत्रिकामां खूब रसपूर्वक सहयोग कर्यो छे. तेमनी तीक्ष्ण शोधक दृष्टिनी प्रशंसा ढांकीसाहेबे पण करेली. तेमनी उपस्थिति वगर अङ्क जरा अधूरो रही जाय छे एम अनुभवाय.

मारा साथी मुनिवरो धर्मकीर्तिविजय-कल्याणकीर्तिविजय वगेरेए पण आ पत्रिका-कार्यमां मने घणी सहाय करी छे. त्रैलोक्यमण्डनविजयजीनो आ पत्रिकाना क्षेत्रमां प्रवेश थयो त्यारथी तो मोटा भागनी जवाबदारी तेमणे ज संभाळवा मांडी छे. तो तेमनी सम्पादित कृतिओ, तत्त्वपरक लेखो तथा नोंधो पण सतत प्रगट थती रहे छे. आवतीकालनुं सम्पादन सक्षम हाथमां हशे तेवुं विचारतां घणी हळवाश अनुभवाय छे.

एक खास नाम लेवुं छे उपाध्याय भुवनचन्द्रजीनुं. पत्रिका साथे दिलोजानीथी तेओ जोडाया छे. 'विहङ्गावलोकन'मां तेमनी शोधक-विवेचक-समीक्षक मुद्रा सतत जोवा मळे छे. तेमनी तीक्ष्ण दृष्टि कोई पण सम्पादनमां ज्यां क्यांय वाचनदोष,

मुद्रणदोष, विगतदोष होय तेने बहु सहजताथी पकडी पाडे छे, अने अत्यन्त सलूकाईथी तेओ ते ते क्षतिओ तरफ ध्यान दोरी आपे छे. 'विहङ्गावलोकन'थी पत्रिकानी सामग्रीनुं मूल्य घणुं वधी जतुं होय छे, ए निःशङ्क छे.

छेल्ला याद करुं हरजीभाईने अने भाई किरीटने. हिन्दी-संस्कृत टाइप-सेटिंग करवुं ए आजे बोरिंग-कंटाळाजनक बन्युं छे. गुजरातमां आ बाबते भारे ऊणप के अछत छे. उपरान्त, गुजराती ने अंग्रेजी कामो ढगलाबंध मळतां होय छे. संस्कृत-हिन्दीना टाइप-सेटर के कम्पोजिटर मळतांय नथी, अने नवा कोई तैयार पण थतां नथी. आ स्थितिमां आ बन्ने पिता-पुत्रे 'अनुसन्धान'नुं काम खरा हृदयना सद्‌भावथी करवानुं चालु राख्युं छे ते, तेमना पर भायाणीसाहेबे मूकेला भरोसाने सार्थक ठरावनारुं छे, अने ते माटे तेमने साधुवाद घटे छे.

*

'अनुसन्धान'मां मुख्यत्वे प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, गुजराती कृतिओ सम्पादित थईने छपाती होय छे. केटलाक शोधपरक लेखो तथा केटलीकवार टूंक नोंधो पण आवे छे. ७५ अङ्कोमां घणी बधी अप्रगट कृतिओ प्रकाशमां आवी छे.

प्रारम्भ थयो त्यारे एवो आशय हतो के संशोधन-प्रकाशनना क्षेत्रे अनेक विद्वानो, मुनिवरो, व्यक्तिओ, संस्थाओ वगेरे द्वारा चालतां शोध-सम्पादन-सर्जन-कार्यो विषे माहितीना आदान-प्रदान माटे आ पत्रिका एक सबळ माध्यम बनी जशे. प्रारम्भना ३-४ अङ्कोमां तेवुं थयुं पण खरुं. परन्तु पछी आपमेळे ए प्रवृत्ति बंध पडती गई अने कोईने तेवो रस रह्यो नहि. एटले पछी अनायासे जे कोई प्रकाशनो जोवामां आवे तेने विषे परिचयात्मक नोंध अपाती रही, जे थोडा अङ्को सुधी चाली.

एक तबक्के सम्पादित प्रकाशनो विषे समीक्षा आपवानुं पण शरु कर्युं हतुं. तेमां ते ते प्रकाशन के सम्पादननी मूल्यवत्ता तथा उपादेयताने लक्ष्यमां राखवापूर्वक तेमां रहेली के थयेली क्षतिओ अंगे पण नोंध अपाती हती. गुजराती तेमज अन्य भाषाओना साहित्यिक प्रकाशनो विषे समीक्षा अने टिप्पणी करवानी एक तन्दुरस्त प्रथा आपणे त्यां व्यापक छे. जे ते प्रकाशननी गुणवत्तानी चर्चा करतां जईने तेमां तेना सर्जक के सम्पादकना हाथे थयेली क्षतिओ के नबळाईओ

प्रत्ये पण अङ्गुलिनिर्देश थाय. कांईक आवी ज साहित्यिक ने शोधक दृष्टिथी आ समीक्षा चालती हती. आशय एटलो ज के सम्पादन करनारा विद्वान् मुनिजनोने दिशासूचन मळे अने सज्जता वधे. परन्तु आ बाबत लगभग कोईने ना गमी. 'तमे दोषदृष्टिथी ज बधुं जुओ ने लखो छो' एवो आक्षेप वहेतो थयो. सुष्ठु सुष्ठु अने प्रशंसात्मक ज सांभळवा टेवाई गयेलां कान समीक्षात्मक वातो सांभळीने अकळावा मांड्यां. एटले पछीथी वृथा अने अकारण द्वेष-दुर्भावनो भोग बनवानुं अने तेवा आक्षेप व्होरवानुं छोडी देवुं वधु मुनासिब मान्युं. घणीवार, घणाये अनर्थरूप अने भविष्यमां खोटाने ज साचा मानवानी नोबतरूप प्रकाशनो जोवामां आवे छे. गलत संशोधनो पण ध्यानमां आवे छे, परन्तु हवे ते विषे कलम चलाववानुं मन नथी थतुं.

क्वचित् विवादरूप नोंधो पण लखवानी आवी छे. 'संशोधन विरुद्ध कट्टरता' (३६), 'समयनो तकाजो' (३५), 'आ विरोध नहि, वेदना छे' (६२) 'पत्रचर्चा' (६०, ६६), भगवान महावीरना गर्भापहारनी घटना विषे डॉ. जगदीशचन्द्र जैननी नोंध, जेने छापतां पं. दलसुख मालवणिया जेवा आधुनिक विचारना विद्वानो पण डरता ते अनुसन्धाने (४६) छापी छे; आ बधी नोंधो तेनां उदाहरण गणाय. परन्तु एक पत्रिकानी ए कडवी फरज होवानी प्रतीतिथी ज ते नोंधो थई छे. तेमां क्यांय द्वेषभावना के अंगत हिसाब वसूलवानी दानत नथी रही, एवुं निःसन्देह कही शकुं. एक नोंध हेमचन्द्राचार्यना व्याकरणमां लेवामां आवेला दुहाओना कर्तृत्व विषे पण करी छे. ते दुहा चारण कविनी रचना छे, अने आचार्ये ते उठावेला छे, आचार्यना पोताना नथी - तेवी आक्षेपात्मक रजूआत अन्यत्र थई तेना तर्कबद्ध प्रतिवादरूप नोंध पण करवानी थयेली (२९). टूंकमां एक सामयिक पासे अपेक्षित मध्यस्थता तथा स्पष्ट वलण - आ बन्ने दाखववामां अनुसन्धाने क्यांय पाछी पानी नथी करी.

'अनुसन्धान'नी स्वस्थ प्रणाली छे के तेनी भूल के खामी कोई दर्शावे अने ते समुचित होय तो ते स्वीकारे अने छापे पण. 'विहङ्गावलोकन' तेनो उत्तम दाखलो छे. उपरान्त, अन्य कोई पण जो भूल तरफ निर्देश करे तो तेनो स्वीकार होय छे. दा.त. अङ्क ३६मां आनन्दघनजी विषे एक टिप्पणी सम्पादके लखेली, पण ते ऐतिहासिक दृष्टिए भूलभरेली होवानुं ध्यान श्रीविनयसागरजीए दोरतां ३८मा अङ्कमां तेमणे आपेल क्षतिनिर्देशनी नोंध प्रगट करी हती. आवां विविध

उदाहरणो आपी शकाय.

भूल तो थाय; सहज छे. ते तरफ कोई ध्यान दोरे त्यारे तेनो स्वीकार करवानी तथा सुधारवानी तत्परता तेमज सज्जता होय तो ज संशोधननां तथा ज्ञानवृद्धिनां कामो थाय. तेटली तैयारी न होय तो आ प्रकारनां कार्योमां उजास न आवे - ए निश्चित छे.

१०,००० लगभग पृष्ठवाळां ७५ पुस्तकोमां पथरायेली आ पत्रिकाए विशेषाङ्को पण घणा कर्या छे. पं. मालवणिया, डॉ. भायाणी, डॉ. ढांकी, मुनि श्रीजम्बूविजयजी, श्रीहेमचन्द्राचार्य, आ. श्रीसूर्योदयसूरिजी इत्यादि व्यक्तिविशेषोनी स्मृतिमां अङ्को थया, तो विज्ञप्तिपत्र-विशेषाङ्कना ४ भाग पण, ते प्रकारना, विशिष्ट अङ्को थया. अने हवे थशे ७५मो विशेषाङ्क.

*

जैन कर्तृत्व साथे संकळायां होय तेवां केटलांक शोध-सामयिकोनां नाम लईए तो – जैन साहित्य संशोधक (पूना, मुनि जिनविजयजी), पुरातत्त्व (विद्यापीठ, मुनि जिनविजयजी), जैन सत्यप्रकाश (अमदावाद, शा. चीमनलाल गोकलदास रतिलाल दीपचंद देसाई) वगेरे. तो गुजरातमांथी प्रकाशित थतां गुजरातीमां होय तेवां शोध-सामयिकोमां 'स्वाध्याय' (वडोदरा), 'सामीप्य' (भो. जे., अमदावाद) वगेरे. ए ज शृङ्खलामां एक अदनो प्रयास ते 'अनुसन्धान'. एक रीते जोईए तो आ शोखनी प्रवृत्ति गणाय. साहित्यिक धून दिमाग पर सवार थवी जोईए, तो अने त्यां सुधी आवी प्रवृत्ति नभे छे. बाकी तेनो मोटे भागे अकाळे अन्त आवतो होय छे. 'अनुसन्धान'ने २५ वर्ष थयां छे, अने हजी आवा अन्तनी नोबत नथी आवी, ते घणुं सुखदायक लागे छे.

आ दीर्घ निवेदन पूरुं करतां पहेलां 'श्रीहेमचन्द्राचार्य निधि' (ट्रस्ट)नुं स्मरण करवुं ज जोईए. आ ट्रस्टे तथा तेना ट्रस्टीओए कोई पण रोक-रुकावट विना के ननु-नच वगर 'अनुसन्धान'नी यात्रा सुखपूर्वक चालवा दीधी छे, बल्के एमां पूरो साथ-सहकार आप्यो छे, ते एक सुखद तेमज विरल घटना छे, तेनी सहर्ष नोंध लेवामां औचित्य छे.

७५मा अङ्क माटे शोधपत्र, सम्पादित कृति, प्रतिभावपत्र, वगेरे पैकी कोई पण रूपे पोतानी सामग्री मोकलवा, 'अनुसन्धान' नियमित रीते मेळवनार

तमाम लोकोने विज्ञप्ति लखी मोकली हती. तेना प्रत्युत्तरमां थोडाक आचार्यादि मुनिवरोना प्रतिभाव-पत्र आव्या छे. आशा तो घणाबधा पासे राखेली; केम के शास्त्रज्ञो तथा संशोधको घणाबधा छे. परन्तु तेमणे मात्र उपेक्षा ज सेवी.

बन्धुत्रिपुटी, मनोज रावल, जयंतभाई मेघाणी, नाथालाल गोहिल, निरंजनभाई, मालतीबेन आ बधा वडील मित्रो आ पत्रिकाना सतत चाहक रह्या छे. *पत्रिकाना योग-क्षेम तथा विकास माटे तेमणे हमेशां निसबत सेवी छे. तेमना* प्रतिभाव-पत्रो आ अङ्कनी ज नहि, पण आ सामयिक-प्रवृत्तिनी शोभा वधारनारा छे. अन्य पत्रो पण ऊंडी शुभकामना दर्शावनारा छे.

श्रीमणिभाई प्रजापति एक विद्वान् तो छे ज, उपरान्त विद्यानुं कार्य क्यांय पण थतुं होय तो तेमां रसपूर्वक सहयोग करवानुं विद्याव्यसन पण तेमने छे. अमे तेमने सूचव्युं के 'अनुसन्धान'ना ७५ अङ्कोने अवलोकीने एक सरस परिचयात्मक आलेख लखी आपो. तेमणे तरत ते सूचना स्वीकारी अने एक विशद आलेख आप्यो छे, जे आ अङ्कने मूल्यवान बनावे छे. अस्तु.

आपणा साक्षरो-साहित्यकारो-साहित्यरसिको बधानी एक फरियाद रही थे के जैन साहित्यमां जैन धर्मनी परिभाषा खूब वपराय छे, ते साम्प्रदायिक होवाथी समजवानुं कठिन होय छे, आ कारणे अमने तेमां रस नथी पडतो.

दायकाओथी, सैका उपरांतना समयथी, साक्षरोनी आ फरियाद रही छे, जे आजे पण यथावत् छे.

'अनुसन्धान' ए एक एवो मंच छे जेना द्वारा आ फरियादनुं निराकरण आवी शके. जो फरियाद करनारो वर्ग जैन साहित्यनी उपेक्षा करवानुं के ते प्रत्ये अरुचि राखवानुं टाळी शके, अने थोडीक जिज्ञासा दाखवे, तो आ फरियाद अवश्य उकेली शकाय तेम छे.

विज्ञान अने गणितनी, नित्यनवी अने विकट परिभाषाने जो समजवानुं शक्य होय; अन्यान्य सम्प्रदायोनी परिभाषाओने समजी शकाती होय; विदेशना विद्वानो जो जैन परिभाषाने आत्मसात् करी शकता होय, तो आपणा लोको माटे जैन परिभाषाने समजवानुं कठिन तो नथी ज. सवाल अरुचिनो अने उपेक्षानो छे. ते दूर करवा जेटली उदारता क्यारे प्रगटशे ?

— शी.

'अनुसन्धान' : एक अवलोकन

– मणिभाई प्रजापति

१. प्रस्तावना

गुजराती भाषामां जैन धर्म-दर्शन अने साहित्यना संशोधनने वरेल संशोधन-सामयिकनी आवश्यकताने पिछाणीने अपभ्रंश, प्राकृत, जूनी गुजराती अने संस्कृत भाषाओना प्रकाण्ड विद्वान, विश्वविश्रुत भाषाविज्ञानी अने संशोधक हरिवल्लभ भायाणीसाहेबे प्राकृत अने जैनसाहित्यनी प्रवर्तमान गतिविधिओनी जाणकारी व्यापक समुदायने सतत मळती रहे ते हेतुसर एक पत्रिका 'अनुसन्धान' एवा नामे प्रकाशित करवा माटे भारपूर्वक भलामण मुनिश्री शीलचन्द्रविजयजी महाराजने (हवे आचार्यश्री विजयशीलचन्द्रसूरिजी) करतां आ बन्ने विद्वद्जनोना सम्पादकत्व हेठळ अनियतकालीन सामयिक 'अनुसन्धान'नो प्रारम्भ १९९३मां करवामां आव्यो हतो, जे सतत आजपर्यन्त चालु रहेतां तेना ७४ अङ्को प्रकाशित थई चुक्या छे. भायाणीसाहेबनुं वर्ष २००० मां अवसान थया बादथी अर्थात् अङ्क १८ थी आचार्यश्री स्वयं 'अनुसन्धान'नुं सम्पादन करी रह्या छे, जेनुं प्रकाशन 'कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि', अमदावाद द्वारा करवामां आवी रह्युं छे.

आचार्यश्रीए 'अनुसन्धान' शरु करवानुं हार्द स्पष्ट करतां नोंध्युं छे के : 'ऊहापोह ए शोध / अनुसन्धाननुं चालक बळ छे. कोई पण मुद्दा परत्वे 'आ आम ज छे' एवो एकान्त न सेवतां ते मुद्दा परत्वे मध्यस्थ, समतोल तथा साधार शोध / विमर्श चलावववो तेनुं नाम छे अनुसन्धान. 'अनुसन्धान' आ दृष्टिथी प्रगट थती पत्रिका छे'. आ ज वातने समर्थन पूरुं पाडतो पडघो 'अनुसन्धान'ना ध्यानमन्त्र 'मोहरिते सच्चवयणस्स पलिमंथू' (ठाणंगसूत्र ५२९) – 'मुखरता सत्यवचननी विघातक छे' मां संभळाय छे'. संशोधननी पायानी आ विभावना केन्द्रस्थाने राखीने 'अनुसन्धान'नुं कार्यक्षेत्र अने मर्यादा प्राकृत भाषा अने जैन साहित्य विषयक सम्पादन, संशोधन, माहिती वगेरे सुधी मर्यादित राखवामां आव्युं छे. आ पत्रिकाना अहीं उपर निर्देशित महत उद्देशने

ध्यानमां लईने तेना प्रथम अंकथी ज जैन धर्म-दर्शन अने साहित्यनी संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश अने जूनी गुजराती - मारु-गुर्जर, राजस्थाननी अने हिन्दी भाषाओमां रचायेली अने विविध ज्ञानभण्डारोमां संग्रहायेली के जे अद्यावधि अप्रकाशित रही छे तेवी महत्त्वपूर्ण कृतिओनी शोध-खोळ करी सम्पादित करवामां आवेली कृतिओ, संशोधन-लेखो, संशोधन करवा प्रेरे के अगाउनां थई गयेलां संशोधनो विशे पुनर्विचारणा करवा बाध्य करे के वधु संशोधन करवा प्रेरे तेवी नवीन विचारोत्तेजक टूंक नोंधो, गुजरात के गुजरात बहार जैनविद्याविषयक हाथ धरवामां आवेलां संशोधनकार्यो, ताजेतरना समयगाळामां प्रकाशित थयेलां के प्रकाशनाधीन पुस्तको, प्रसंगोचित अहेवालो / सटिप्पण समाचार, आवरणचित्रोनो परिचय, ऊहापोहने प्रोत्साहित करतां चर्चापत्रो, विहङ्गावलोकन वगेरे सामग्रीनो समावेश करवामां आवे छे.

'अनुसन्धान'नुं अवलोकन करतां तेमां प्रगट थयेली सामग्रीनी महत्ता अने तेनी खासयितो नीचे दर्शाव्या मुजब जोवा मळी छे.

२. सम्पादकीय लेखो

सामान्यतः कोई पण पत्र / पत्रिकाना तन्त्रीलेखो / सम्पादकीय लेखोमां सम्बन्धित पत्र / पत्रिकाए स्वीकारेला नीतिविषयक आदर्शो / सिद्धान्तोनुं प्रतिबिम्ब जोवा मळतुं होय छे. आ रीति-नीति अनुसार 'अनुसन्धान'नां 'निवेदनो'-'सम्पादकीय लेखो' पण तेना मूळभूत उद्देश - संशोधन-ने नजर समक्ष राखीने तेनी सैद्धान्तिक चर्चा, ऊहापोह करता - कोलाहल करता नहि - जोवा मळ्या छे. सम्पादक आचार्यश्रीए आ पत्रिकाना प्रारम्भिक केटलाक अङ्को बाद करतां तेना प्रत्येक अङ्कमां संशोधननी विभावना अने हार्द, संशोधनना गुणो अने तेनी (संशोधकनी) पासे अपेक्षित सज्जताओ, शोधकनी दृष्टिनुं संमार्जन, संशोधन एक ज्ञानकार्य / ज्ञानयात्रा, विवेक वगेरे आनुषंगिक बहुविध पासांओ विशे मर्मग्राही चर्चा करी छे, जेमां आचार्यश्रीनां अध्यनशीलता अने चिन्तनप्रज्ञानां सहज दर्शन थाय छे. तेमनां आ बधां लखाणोनुं संकलन-सम्पादन थाय तो 'संशोधन'नी पायानी समज पूरी पाडती चिन्तनप्रेरक पुस्तिका विद्याजगतने सुलभ थई शके.

आवो, आपणे आचार्यश्रीनां 'संशोधन' विषयक केटलांक विचारमौक्तिकोनुं पठन करी चिन्तन करीए :

- संशोधन एक विज्ञान छे, ज्ञानना क्षेत्रनी एक वैज्ञानिक पद्धति छे.
- संशोधन ए सतत चालनारी प्रक्रिया छे, तेनो वास्तविक आधार स्वाध्याय छे. जेम सारुं प्रवचन स्वाध्याय विना न संभवे, तेम साचुं संशोधन पण स्वाध्याय विना न थई शके. स्वाध्याय एटले अध्ययन तेम ज अध्ययन करेल बाबतो विशे परिशीलन.
- एक सारा संशोधकमां समतोलता, निर्भयता, अनाग्रह अने सत्याग्रह, सहिष्णुता अने उदारता - आटलां वानां तो, ओछामां ओछां होवां जोईए.
- परम्परा श्रद्धागम्य, आज्ञाग्राह्य बाबत छे, ज्यारे संशोधन ते बुद्धिगम्य पदार्थ छे.
- संशोधन ए कोई प्राचीन-अर्वाचीन सर्जक / लेखकनी भूल शोधवा - सुधारवाना मिशन साथे करवानी प्रवृत्ति नथी. संशोधन तो, पूर्वग्रह - आग्रह, जडता-संकुचित मनोवलणो इत्यादिथी पर बनेला चित्तथी, पोताना ज्ञान अने समजणमां वृद्धि थाय, अने साथे साथे आडपेदाशरूपे पूर्वसूरिओना काममां के लेखनमां कोईकवार कशीक क्षति रही गई जणाय तो तेनुं शुद्धीकरण पण थई शके ए माटे थतुं उमदा अने आवश्यक ज्ञानकार्य छे.
- सम्मार्जन - संशोधन - सम्पादन करनार क्यारेय मनमानी रीते वर्ती शके नहि, पण पोतानी जागृत विवेकशीलता साथे ज ते काम करी शके, अने तो ज तेनुं संशोधन उपादेय बने.
- शास्त्रसंशोधन ए मात्र शास्त्रमां ज शोधन करे एवुं नहि, ए शोधकनी दृष्टिनुं पण शोधन-सम्मार्जन करे छे.
- संशोधन ए सर्जनात्मक प्रवृत्ति के प्रक्रिया होवा छतां 'सर्जन'थी साव जुदी बाबत छे.
- संशोधन, आपणी विचारसरणीने वधु विशद, वधु निर्मळ न बनावे तथा

आपणी मान्यताने हठाग्रहमां फेरवाती न अटकावे, तेवा संशोधनकार्यथी अळगा रहेवुं.

- संशोधन एक यात्रा छे, शोधयात्रा अथवा ज्ञानयात्रा; व्यवसाय नहि, अने कशुंक रळी लेवानो धंधो तो नहीं ज.
- संशोधनना क्षेत्रमां रळी लेवा लायक वानां बे ज छे : सत्यनिष्ठा अने विश्वास.
- संशोधननो सम्बन्ध प्रबुद्धता साथे छे. प्रबुद्धता जेम जेम विकसती जाय तेम तेम स्वीकृत तथा परम्पराप्राप्त वातोना रहस्यार्थो स्फुट थई उघडता आवे; जेने लीधे परिमार्जन, स्पष्टीकरण, संवर्धन अने आवश्यक परिवर्तन थतां रहे.
- आघात जन्मावे तेवा संशोधननो अस्वीकार के तिरस्कार करे तेनुं नाम सम्प्रदाय. संशोधनना सत्यनो इन्कार ज धर्मने साम्प्रदायिक संकोच भणी धकेली मूके छे.
- पारम्परिक मान्यता साथे अन्धश्रद्धा जोडाई जाय अने संशोधन साथे अविवेक जोडाई जाय त्यारे 'सत्य' ढंकाई जतुं होय छे अने 'असत्य'नुं चडी वागतुं रहे छे.
- संशोधन एटले प्रवाहप्राप्त के परम्पराप्राप्त मान्यताओमां प्रवेशेल गरबडोनुं निवारण, तो क्यारेक रूढ अने न मानवालायक गणाती बाबतोनुं समर्थन करवुं ते पण संशोधन ज.
- संशोधननी अनिवार्य शरत छे सज्जता. संशोधक स्मृतिसज्ज, सन्दर्भसज्ज, भाषासज्ज, ज्ञानसज्ज, माहितीसज्ज, कल्पकता - कल्पनाथी सज्ज अने तर्कसज्ज पण होवो जोईए.
- शास्त्रना अभ्यासी अने संशोधकने शास्त्रनां, एटले के पूर्वसूरिओनां वचनो, प्रतिपादनो, मतो, विधानो, शब्दो माटे आग्रह होय - होई शके, परंतु पोते विचारेली के स्वीकारेली बाबतो माटे तेने आग्रह न होय.
- जो धर्म अने शास्त्रनां सत्य तथा तथ्य पामवां होय, प्रीछवां होय, तो संशोधननी प्रक्रिया प्रत्ये के संशोधको प्रत्ये तिरस्कार राखवो पालववो

न जोईए; अने आ बन्ने - सत्य तथा तथ्य - अमारी पासे ज छे, अमने ज समजाय - बीजाने नहि, एवुं मिथ्याभिमान पण छूटी जवुं जोईए.

'संशोधन' विषयक आ चिन्तनकणिकाओनां विश्लेषणोनी साथे साथे प्रसङ्गोचित चर्चा दरम्यान प्रवर्तमान समयमां थई रहेलां पीएच.डी. डिग्री हेतुनां निम्न स्तरनां संशोधनो, हस्तप्रतो आधारित कृतिसम्पादनो तथा प्रतिभाशाळी विद्वानो द्वारा गत शताब्दीमां करवामां आवेलां गौरवशील सम्पादनो के जे हालमां प्रायः अप्राप्य छे ते ग्रन्थोना पुनःसंशोधित / संवर्धित संस्करणना नामे प्रवर्ती रहेल नाम रळी लेवानी मनोवृत्ति, समृद्ध ग्रन्थालयना सङ्चालकनुं असंवेदनशील अने असहकारी वलण अने रुग्ण मानसिकता वगेरे प्रति अङ्गुलिनिर्देश करीने आ बधांए कयो कल्याणपथ अपनाववो जोईए तेनो दिशानिर्देश पण कर्यो छे. ज्ञानना प्रचार-प्रसारमां ग्रन्थालयनी महत्त्वपूर्ण भूमिका विशे पोताना गुरुदेव विजयनेमिसूरिना सुचिन्तनीय विचारो उद्धृत कर्या बाद आचार्यश्रीए नोंधेल शब्दो : 'आपणे ज्ञानना रखेवाळ बनीए, संवर्धक बनीए, वारसदार पण बनीए; पण ज्ञानप्रसारमां अवरोध ऊभो करे तेवा चोकीदार न बनीए. विधाप्रसारमां अवरोध ऊभो थाय तेम वर्तवुं ते तो एक प्रकारनो प्रज्ञापराध छे' - सौ ग्रन्थालय-व्यवसायिको माटे सुचिन्तनीय बनी रहे छे. एक विद्याप्रेमी आचार्य तरीके 'जैनसाहित्यसंशोधक', 'जैनसत्यप्रकाश', 'पुरातत्त्व' वगेरे जेवां सामयिकोमांथी पसंदगीना लेखो पसंद करी तेना सम्पुट तैयार करवा, व्यवहारिक दृष्टिए उपयोगी एवा 'जैन पारिभाषिक कोश'नुं सम्पादन हाथ धरवुं वगेरे सूचनो करी तेनी उपयोगिता पण समजावे छे. क्वचित् परम्परागत मान्यताओथी बद्ध अने संशोधनोथी प्राप्त सत्यो प्रति उदासीन वलण धरावता जैन समाजने पण निर्भीकपणे जणावे छे के 'रूढ, पछी ते पारम्परिक शोध होय अने तद्दन विकृत पण होय - तेवी मान्यताओने सिद्धान्तलेखे तेमज इतिहासलेखे स्वीकारीने चालवुं ए वर्तमान जैन संघ / समाजनी सहज प्रवृत्ति छे. रूढ मान्यतामां कशुं ज परिवर्तन करी शकाय नहि, तेम करवुं ए मोटो जघन्य अपराध छे, एवी दृढ धारणा आ प्रवृत्तिना मूळमां छे' (४७). आ उपरांत एक जागरूक आचार्य अने समाजना संत्री तरीकेनी छाप, संभाजी ब्रिगेड द्वारा पुनाना भाण्डारकार प्राच्यविद्या

प्रतिष्ठान उपर हुमलो करी भारे नुकसान पहोंचाड्युं हतुं ते प्रसंगे करेल विरोध अने आ समस्या उद्‌भववा पाछळनां कारणोना करेल विश्लेषणमां जोवा मळे छे. आ सन्दर्भे तेमणे नोंध्युं छे के आ हुमला पाछळ वीरपूजक मानस जवाबदार छे. आवां कृत्योथी आपणी सम्पत्तिने ज नुकसान थाय छे. वस्तुतः आवां अणछाजतां लखाणोनुं खण्डन करतां प्रमाणभूत अने अधिकृत लखाणो तैयार करीने तेनो फेलावो करी तेमना मलिन आशयने उघाडो करवो जोईए. अन्यथा आपणा तोडफोडवाळा व्यवहारो आपणे जे नरवीरनी पूजा करीए छीए ए नरवीर पण आमना जेवा ज हशे एम मानवा प्रेरशे. वधुमां, आ घटना सन्दर्भे K. R. N. Swamy ए ता. १ फेब्रुआरी, २००४ना 'Deccan Herald'मां रिपोर्टिंग करतां ब्रिटिश लाइब्रेरीमां संगृहीत भारतीय हस्तप्रतो तरफ ईशारो करतां विधान करेल के 'Thank God it is not in India'. अर्थात् आ हस्तप्रतो भारतमां होत तो तेनी दशा पण आम ज थात ! आ विधानमां रहेल अंगेजो अने अंग्रेजियतनी मानसिक गुलामी जोईने आचार्यश्रीए प्रश्न कर्यो छे के अमेरिकन अने ब्रिटिश दळोए ईराकनी सांस्कृतिक सम्पदानो नाश कर्यो, अंग्रेजो भारतमांथी हस्तप्रतो अने सांस्कृतिक सम्पदा लई गया वगेरेने तमे शुं कहेशो ?

३. विहंगावलोकन

सामयिक साहित्यना विश्वमां भाग्ये ज कोई सामयिक हशे के जेना प्रत्येक अङ्कनुं नियमित रीते अवलोकन प्रसिद्ध थयुं होय अने तेना प्रत्येक अङ्कनी सघळी सामग्रीनुं कोई एक व्यक्ति द्वारा वांचन करवामां आव्युं होय, सिवाय के सम्पादक अने प्रूफवाचक द्वारा. आ दृष्टिए 'अनुसन्धान' एक अपवादस्वरूप सामयिक छे के जेमां समाविष्ट प्रायः सघळी सामग्रीनुं अस्खलित रीते मर्मग्राही अवलोकन करवामां आवी रह्युं छे अने ते पण एक ज समीक्षक द्वारा. आ सामयिकना वर्ष १९९३ थी ओगस्ट, २०१८ सुधी कुल ७४ अङ्को प्रगट थया छे. आ अङ्को पैकी अङ्क नं. १४ थी ७३मा अङ्क सुधीनुं अवलोकन उपाध्याय भुवनचन्द्रजी महाराज द्वारा करवामां आवतां तेनुं प्रकाशन आ ज सामयिकना परवर्ती अङ्कोमां करवामां आव्युं छे. महाराजश्रीनुं प्रत्येक अवलोकन तेमनां स्वाध्यायनिष्ठा, व्यापक वांचन, जैनविद्याविषयक आधिकारिक

ज्ञान अने रस-रुचिनुं द्योतक बनी रहे छे. मल्लिनाथी सूत्र 'नाऽमूलं लिख्यते किंचित्'ने ध्येयमन्त्र तरीके स्वीकारीने सम्बन्धित अङ्कमां प्रकाशित सम्पादित कृति, लेख, टूंक नोंध वगेरे विशे सुस्पष्ट छतां 'अनेकान्तवाद'ने केन्द्रमां राखीने विनम्रभावे पोतानुं मन्तव्य जणावता जोवा मळ्या छे. उदा. तरीके 'श्रावकविधिरास'ना अवलोकनमां नोंध्युं छे के अपभ्रंशभाषानी सुन्दर कृति छे. आना कर्ता पद्मानन्दसूरि नहीं पण गुणाकरसूरि जणाय छे. कृतिपाठ संशोधन मागे छे. वाचनभूलोनुं प्रमाण विशेष छे. क. १५ : 'जाहन'ने स्थाने 'जांह न', क. २० : 'वसाउ'ना स्थाने 'ववसाउ' वगेरे (५२.१०३). आ उपरांत पोताना द्वारा पूर्वेनी समीक्षामां कोई क्षति थई होय तो तेनो भूलस्वीकार करता पण जोवा मळे छे. प्रत्येक सम्पादित कृतिनां ग्रन्थकर्तृत्व, काव्यतत्त्व, छन्द, भाषा, व्याकरण, शब्दप्रयोगो, पाठनिर्धारण, ऐतिहासिक महत्त्व वगेरे बाबतोने संक्षेपमां आवरी लेवानी साथे महत्त्वपूर्ण कृतिने तारवी आपी तेना कर्ता अने कृतिनी समतोल विवेचना करवी ए तेमनी आगवी खासयित छे. तेमनां अवलोकनो संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, जूनी गुजराती अने कच्छी भाषाओ उपर तेमना भाषाप्रभुत्वनी साहेदी पूरे छे.

तेमना अवलोकननी विशेषता ए छे के तेमनी नजरमां हमेशां कृति रहे छे नहीं के सर्जक / सम्पादक व्यक्ति. सम्पादक आचार्यश्री विजयशीलचन्द्र-सूरि महाराज द्वारा सम्पादित 'सारस्वतोल्लास'नुं अवलोकन करतां नोंध्युं छे के 'शारदामन्त्रना जापनी पराकाष्ठाए कविने स्वप्नमां माता सरस्वतीनां दर्शन थाय छे. आ घटना माटे श्रीशीलचन्द्रसूरि तेमना प्रास्ताविकमां 'साक्षात्कार' शब्द वापरे छे. वस्तुतः आ साक्षात्कार नथी, पण मानसिक भास-आभास छे... विद्वान संशोधक आचार्यश्री कृतिने वधु स्पष्ट करवानो समय नथी मेळवी शक्या एम जणाई आवे छे. निरांते परिशीलन करतां वधु शुद्ध थई शके एम छे. केटलीक अशुद्धिओ अहीं नोंधुं छुं....'(१६.२४०-२४१). आ साथे आवश्यकतानुसार कृतिना सम्पादकने मार्मिक टकोर पण करता जोवा मळे छे. जेम के 'मुनिवरसुरवेली'ना सन्दर्भे नोंध्युं छे के 'लेखक एटले के लहियाना हाथे थयेली भूलोने सम्पादकोए जेमनी तेम राखवानी जरूर न होय. संशोधके मूळ रचनाकारनी निकट आववानुं छे. पादनोंधमां के प्रस्तावनामां

आवी बाबतोनी नोंध लई शकाय. अने मूळ वाचनामां संशोधित पाठ मूकाय. चौदमा ढाळनी कडीओनुं वाचन भूलभरेलुं थयुं छे' (१६.२३७). ज्यारे विज्ञप्तिपत्रोनुं तलस्पर्शी अवलोकन करतां नोंध्युं छे के 'संस्कृत वि.पत्रोमां काव्यात्मक वर्णन विशेष होय छे, ज्यारे गूर्जर भाषानां वि.पत्रोमां स्थूळ वर्णननी विगतो वधु सांपडे छे... उत्तरोत्तर संस्कृत भाषानुं स्तर नीचुं आवेलुं देखाय छे. अमुक पत्रोमां तो अगडंबगडं संस्कृत चलावामां आव्युं छे' (६७.१५४). आ ज रीते ढांकीसाहेबना 'नन्द्यावर्त' लेख विशे नोंध्युं छे के 'नन्द्यावर्त' विशे तो ढांकीसाहेबनो लेख लांबा समयथी चाली आवती भ्रान्तियुक्त मान्यताने प्रकाशमां लावे छे. संशोधन द्वारा ज आवी भ्रान्तिओनुं परिमार्जन थई शके. संशोधन द्वारा आवी माहिती मळ्या पछी एनो यथास्थाने अमल करवानी फरज संघनायकोनी छे.' (७२.१२७). आम, समग्रतया तेमनी समीक्षामां तटस्थता, निर्भीकता अने सम्बन्धित विषयना ज्ञाननो त्रिवेणीसंगम कलकल निनाद करता झरणानी जेम वह्या करतो जोवा मळे छे. महाराजश्रीनी समीक्षाओ आ सामयिकने गति अने बळ पूरुं पाडवा उपरांत नवोदितो माटे मार्गदर्शक बनी रहे छे. अने तेथी ज सम्पादक - आचार्यश्री विजयशीलचन्द्रसूरि महाराज अने प्रद्युम्नसूरिजी महाराज प्रसंगोपात्त परितोष व्यक्त करता जोवा मळ्या छे. आ बधां अवलोकनो उपरांत मुनिराज श्रीधुरन्धरविजयजी द्वारा पण प्रथम पांच अङ्कनी समीक्षा करवामां आवी छे. आ साथे केटलाक लेखोना प्रतिभाव स्वरूपे प्राप्त पत्रो अने सम्बन्धित लेखको द्वारा करवामां आवेली स्पष्टताओ पण खुल्ला मने अहीं प्रकाशित करवामां आवी छे.

४. विशेषाङ्को

– व्यक्तिविशेष स्मृतिअङ्को

'अनुसन्धान'ना स्मृतिविशेषाङ्को तेनी आगवी विशेषता बनी रहे छे. आ अन्वये व्यक्तिविशेषना स्मृतिविशेषाङ्को पैकी सौप्रथम पं. दलसुख मालवणिया स्मृति विशेषाङ्क (१७) अने त्यारबाद हरिवल्लभ भायाणी स्मृति विशेषाङ्क (१८), मुनिराज श्रीजम्बूविजयजी महाराजनी पुण्यस्मृतिमां समर्पित अङ्क (५२.२) श्रीविजयसूर्योदयसूरीश्वरजी महाराजनी पुण्यस्मृतिने समर्पित अङ्क (५६) अने डो. मधुसूदन ढांकी विशेषाङ्क (७१) प्रगट करवामां आव्या छे.

आ बधा ज दिवंगत महानुभावोनुं जैनधर्म-दर्शन अने साहित्य-संशोधन क्षेत्रे घणुं मोटुं प्रदान होवा उपरांत आ सामयिकरूपी ज्ञानयज्ञने चालु राखवा माटे तेमना बहुमूल्य लेखो मोकली आपी 'होता' तरीकेनी भूमिका अदा करवामां के अन्य रीते तेमनुं गौरववंतुं प्रदान रह्युं छे. आ बधा व्यक्तिविशेषो माटे संस्मरणात्मक तेम ज तेमना प्रदानने मूलवता लेखो खास आमन्त्रणथी मेळवीने प्रकाशित करीने जैन विद्याजगत वती सम्पादक आचार्यश्री विजयशीलचन्द्र-सूरिजीए तेमनुं ऋण अदा कर्युं छे. आ पैकी पं. मालवणिया विशेषाङ्कमां मालवणियासाहेब विशे फक्त त्रण लेखो पैकी आचार्यश्री विजयशीलचन्द्रसूरिजीए तेमना निर्भीक अने उमदा व्यक्तित्वनां पासां उजागर कर्यां छे, ज्यारे जितेन्द्र शाहे मालवणियासाहेबनी साहित्योपासना अन्तर्गत विस्तृत वाङ्मयसूचि (पृ. २३४-२६४) आपी छे, जे ध्यानार्ह बनी रहे छे. आम छतां अहीं मालवणियासाहेबना प्रदानने मूलवता लेखोनो अभाव जोवा मळे छे. आ ज रीते मुनिराज जम्बूविजयजीने अर्पण करवामां आवेल अङ्क (५०.२)मां मुनिराज विशे स्मरणांजलिओ अने अन्यविषयक २० लेखो समाविष्ट छे. आ पैकी मुनिराज जम्बूविजयजी अकस्मातमां काळधर्म पाम्या ते समयनी सहयात्री शिष्या Hiroko Matsuokaनी डायरी (पृ. २४९-२५७) ऐतिहासिक धरोहर समान दस्तावेजी मूल्य धरावे छे. आ ज क्रममां डो. हरिवल्लभ भायाणीसाहेब अने डो. मधुसूदन ढांकी विशेषाङ्को तेमनी प्रतिभाने उजागर करता तथा संस्मरणात्मक लेखोथी समृद्ध छे. देश-विदेशना विद्वानोए उलट हैये आ बंने प्रतिभापुरुषो माटेना विशेषाङ्को माटे लेखो मोकली आप्या जे तेमना प्रति आस्थाना प्रतीतिकारक बनी रहे छे. कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य विशेषाङ्क, भाग १ अने २ (अङ्क नं. ५३ अने ५४) ए हेमचन्द्राचार्यनी आचार्यपद प्राप्तिना ९०० मा वर्षनी पुण्यस्मृतिना उपलक्ष्यमां प्रकाशित करवामां आवेल छे. आ बन्ने अङ्कोमां हेमचन्द्राचार्यना विविध विषयक प्रदानने मूलवता १४ लेखो तथा १५ अन्य विषयक लेखोनो समावेश करवामां आव्यो छे. आ साथे ज आचार्यश्रीए सम्पादकीय निवेदनमां हेमचन्द्राचार्यने संशोधनना पर्याय गणावीने 'त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित' (पर्व १०, सर्ग १२, श्लोक ७८-९५) ना आधारे नोंध्युं छे के भारतमां सौथी प्रथम पुरातात्त्विक उत्खनन राजा कुमारपाळे हेमचन्द्राचार्यना निर्देशथी सिन्धुदेशना वीतभयपत्तन नगरमां भगवान

महावीरनी चन्दनकाष्ठनिर्मित प्रतिमा माटे कराव्युं हतुं. आ उत्खननथी प्रतिमा अने दानपत्र मळ्यां हतां, जे पाटणमां लाववामां आव्यां हतां. आ बाबतने डॉ. उमाकान्त शाहे भारतमां पुरातात्त्विक शोधखोळनुं प्रथम उदाहरण गणावेल छे.

आ खास विशेषाङ्को उपरांत भारतीय अने जैनविद्याना दिवंगत थयेला विद्वानो विशे काळजीपूर्वक श्रद्धांजलिओनी नोंधो प्रसङ्गोपात्त प्रकाशित करवामां आवी छे, जेमां जयंत कोठारी, डॉ. अर्नेस्ट बेन्डर, चन्द्रभाल त्रिपाठी, महोपाध्याय विनयसागर वगेरेनो समावेश करवामां आव्यो छे जे बहुविध रीते आवकार्य बनी रहेशे. आ बधा विशेषाङ्कोनुं अवलोकन करतां जणायुं छे के प्रत्येक विशेषाङ्कमां जे ते प्रतिभापुरुष विषयक लेखो उपरांत अन्य विषयोना लेखो समाविष्ट करवामां आव्या छे. आ व्यवस्थाना विकल्पे व्यक्ति स्मृति विशेषाङ्क मात्र अने मात्र सम्बन्धित प्रतिभापुरुषविषयक ज होय के जेमां जीवनचरित्र, संस्मरणात्मक लेखो, पुस्तकोनी समीक्षा, समग्र प्रदाननुं मूल्याङ्कन करता लेखो, वाङ्मयसूचि, तवारीख वगेरेनो समावेश करवामां आवे ते बहुविध रीते सुसंगत अने उपयोगी बनी रहेशे.

विज्ञप्तिपत्र विशेषाङ्को

४ विज्ञप्तिपत्र विशेषाङ्को (अं.नं. ६०, ६१, ६४ अने ६५) ए हकीकतमां 'अनुसन्धान'नो नवो पडाव ज छे. आ विज्ञप्तिपत्रो सामान्यतः जैन मुनिओ द्वारा अथवा जैन संघो द्वारा गुरुभगवन्तो / गच्छाधिपतिओने लखवामां आवता होय छे. जेमां जिनवन्दना, गुरुवन्दना, पत्रलेखकना नगर/गामनुं अलङ्कृत शैलीमां काव्यमय वर्णन, धर्मकार्यो, जिनालयो, पर्युषणपर्व प्रसंगेनी प्रवृत्तिओ, श्रावक-श्राविकाओ अने मुनिओनां नामो, क्षमापना वगेरे वर्णववामां आवे छे. आ पत्रो जैन मुनिपरम्परा तथा गच्छपरम्परानी काळक्रमानुसार यादी तैयार करवा, जे ते स्थळविशेषनी ऐतिहासिक-भौगोलिक माहिती, साहित्य, भाषा, लिपि, चित्रकळा, इतिहास वगेरे सम्बन्धी माहिती माटे दस्तावेजी मूल्य धरावे छे.

समग्र भारतीय साहित्य परम्परा अन्तर्गत एक मात्र जैन साहित्यमां खेडायेल विज्ञप्तिपत्रलेखननी आगवी अने समृद्ध परम्परानी उपयोगिता अने महत्ताने पिछाणीने आचार्यश्री विजयशीलचन्द्रसूरिजी महाराजे गुजरात अने

राजस्थानना ज्ञानभण्डारोमां संगृहीत आ अणमोल विरासतने उजागर करी आपीने न केवळ जैन साहित्यनी, परंतु समग्र भारतीय साहित्यनी महती सेवा करी छे. आ चारेय विशेषाङ्कोमां कुल १३५ विज्ञप्तिपत्रो समाविष्ट छे, जे पैकी ९३ पत्रो संस्कृत अने ४२ पत्रो मारु-गूर्जर भाषामां लखवामां आवेला छे, जेनो रचनाकाळ १५मी सदीथी २०मी सदीनो पूर्वार्ध रह्यो छे. आ बधा पत्रो पैकी मुनि सुयशचन्द्रविजय अने मुनि सुजसचन्द्रविजय - ८०, मुनि त्रैलोक्यमण्डन-विजय - ३१, विजयशीलचन्द्रसूरि - १४, पं. महोपाध्याय विनयसागर - ४, कल्याणकीर्तिविजय - २, अने मुनि श्रीधुरन्धरविजयजी तथा साध्वी समयप्रज्ञाश्री द्वारा १-१ पत्रनुं सम्पादन करवामां आव्युं छे. आ बधा सम्पादकोए पण पत्रना प्रारम्भे तेनो परिचय करावीने पत्रमां प्रयोजायेला अघरा के अप्रचलित शब्दोना अर्थ पण आप्या छे. अहीं समाविष्ट पत्रो पैकी लांबामां लांबो पत्र औरंगाबादमां बिराजमान तपगच्छपति श्रीविजयदेवसूरिने सरोतरा नगरे रहेला तेमना पट्टशिष्य विजयसिंहसूरि द्वारा वि.सं. १६९९ मां संस्कृत भाषामां लखवामां आव्यो छे, जेनुं सम्पादन मुनि धुरन्धरविजयजी द्वारा करवामां आव्युं छे.

सम्पादक आचार्यश्रीए जे ते अङ्कमां समाविष्ट विज्ञप्तिपत्रनुं सारगर्भित अध्ययन रजू करीने तेना विषयवस्तुना विश्लेषण उपरांत काव्यतत्त्व, छन्दो, अलङ्कारो, ऐतिहासिक तथ्यो, पत्र कया ज्ञानभण्डार के व्यक्तिगत संग्रहनो छे अने कोना माध्यमथी प्राप्त थयो, कोणे प्रतिलिपि तैयार करी, कोणे सम्पादन कर्युं वगेरे सम्बन्धी विगतो वर्णवी छे. आ बधा पत्रोना सघन अध्ययन अने अवलोकनोमां प्रस्फुटित थतो आचार्यश्रीनो संशोधनात्मक अभिगम ध्यानार्ह बनी रहे छे. आ सन्दर्भे तेमनी नोंध द्रष्टव्य छे : 'ऐतिहासिक विगतोनी अल्पताने नजरअंदाज करीए तो काव्यतत्त्व अने गुरुभक्तिनी रीते आ पत्रसाहित्य बेजोड छे. जगतनी अन्य कोई गुरु-शिष्य परम्परामां आवा पत्रो आटला विपुल प्रमाणमां लखायानुं जाणमां नथी... पत्र लखती वखते तेणे हैयुं गुरुबहुमानमां वहावी दीधुं होय तेवी प्रतीति थाय छे.... घणाखरा श्लोको काव्यकला के कल्पनावैभवनी दृष्टिए उत्कृष्ट कोटिना छे.... पत्रलेखकनुं व्याकरणज्ञान अत्यन्त प्रगल्भ लागे छे... महासमुद्रदण्डक छन्दमां एक ज

श्लोकमां पत्रलेखनपद्धतिना समग्र क्रमनो काव्यचमत्कृति साधतां जईने निर्वाह करवो ए बहु मोटा गजानी काव्यप्रतिभा सिवाय असम्भवित छे.... आवी रचनाओने 'आ तो पत्र छे' एवुं कहीने उपेक्षा करवा योग्य नथी. अन्यथा 'मेघदूत' पण आम जुओ तो एक पत्र ज छे'. आ उपरांत विज्ञप्तिपत्र विशेषाङ्क अङ्क नं.६० मां आ पत्रोनो परिचय आपतां पूर्वे आचार्यश्रीए विज्ञप्तिपत्र लेखनपरम्परानी संक्षेपमां छतां ठोस विकासरेखा वर्णवी छे, जे तेमने आ क्षेत्रना एक आधिकारिक ज्ञाता तरीके प्रस्थापित करी आपे छे. तेमां तेमणे १२-१३मी सदीथी पत्रलेखनपरम्परानो प्रारम्भ गणावीने आ परम्परानो सर्वश्रेष्ठ अने सर्वप्रथम कहेवाय तेवो पत्र 'त्रिदशतरङ्गिणी', १५मा सैकानो 'विज्ञप्तित्रिवेणी', मुनि जिनविजयजी सम्पादित 'विज्ञप्तिलेखसंग्रह', डॉ. हीरानन्द शास्त्री कृत 'Ancient Vijnaptipatras' तथा अन्य स्रोतोमां प्रकाशित पत्रोनी चर्चा करी छे.

५. कृतिसम्पदा

आपणा ज्ञानभण्डारोमां संगृहीत हस्तप्रतोनो समृद्ध खजानो, हस्तप्रतोनां प्रकाशित सूचिपत्रो अने तेनी सामे प्रकाशित कृतिओ उपर दृष्टिपात करतां आचार्यश्री विजयशीलचन्द्रसूरि महाराजना मन्तव्य 'एमां जेटली प्रकाशित छे ते करतां अप्रकाशित रचनाओनो जथ्थो बहु मोटो छे' साथे संमत थवुं ज रह्युं. आ ज्ञानवारसाने 'अनुसन्धान'ना माध्यमथी प्रकाशमां आणवानो आचार्यश्रीनो प्रयास पण श्लाघनीय बनी रहे छे. आ लेखमां छेल्ले दर्शावेल आंकडाकीय सर्वेक्षण अनुसार 'अनुसन्धान'ना ७४ अङ्कोमां संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, जूनी गुजराती - मारु गुर्जर, राजस्थानी वगेरे भाषाओनी अंदाजित ६७४ जेटली नानी-मोटी कृतिओ सम्पादित करीने प्रथम वखत प्रगट करवामां आवी छे, जेमां विषयवैविध्य पण भरपूर मात्रामां रह्युं छे. जेम के मध्यकालमां प्रचलित विविध साहित्यस्वरूपो - काव्य, खण्डकाव्य, महाकाव्य, स्तोत्र, स्तवन, फागु, रास, भास, हरियाळी वगेरे, व्याकरण, शब्दकोश, जैन धर्म-दर्शन, टीका, सुभाषितसंग्रह, ज्योतिष वगेरेनो समावेश थाय छे. अहीं प्रकाशित प्रत्येक कृतिनुं प्रथमादर्श प्रत अथवा कोई एक के एकाधिक प्रतोना आधारे सम्पादन करवानी साथे साथे प्रारम्भमां कर्ता अने कृतिनो परिचय करावववानी साथे साथे

क्वचित् कृतिमां वपरायेला अघरा / अप्रचलित शब्दोना अर्थ पण आपवामां आव्या छे. कोई परिस्थितिवशात् अगाउ मुद्रित थयेल कृति अहीं पुनःमुद्रित थयानी जाण थतां सम्पादक आचार्यश्री परवर्ती अङ्कोमां तेनी नोंध अने / अथवा पुनःप्रकाशित करवा पाछळ अगाउनी मुद्रित कृतिनी मर्यादाओ वगेरे विशे स्पष्टता करता पण जोवा मळ्या छे.

''अनुसन्धान'मां प्रकाशित कृतिओ पैकी आ साथे नमूनास्वरूप दर्शाववामां आवेली केटलीक कृतिओ विषयवस्तु अने रचनाविधाननी दृष्टिए ध्यानार्ह बनी रहे छे : १. साध्वी दीप्तिप्रज्ञाश्रीजी द्वारा सम्पादित 'विमलसूरि कृत देशीनाममालोद्धार' (१६.३२-२१६), २. ईसरसूरि विरचित 'ललिताङ्ग चरित्र' अपर नाम 'रासक चूडामणि', संपा. विजयशीलचन्द्रसूरि अने हरिवल्लभ भायाणी (८.१-६१), ३. १२मा सैकाथी अप्राप्त आगमग्रन्थ - जिनचरित्रोनुं निरूपण करतो ग्रन्थ 'पढमाणुओग'नी उपलब्ध वाचना (६.१-४२), ४. कवि ऋषभदास कृत 'व्रतविचार रास' (१९.१-११२), ५. व्याकरण अने मन्त्रविज्ञान विषयक ग्रन्थ सरस्वतीधर्म कृत 'मातृकाप्रकरण' (१२.१-४८), ६. आचार्य विजयनेमिसूरि विरचित 'महाकवि कालिदास कृत रघुवंश द्वितीय सर्ग टीका', संपा. मुनि धर्मकीर्तिविजय (२६.८-१००), ७. कवि ऋषभदास कृत 'श्रीमल्लिनाथनो रास' (५०.११२-१४१), ८. श्रीहेमविमलसूरीश्वरजीना प्रशिष्य अनन्तहंस कृत 'चित्कोशप्रशस्ति', ९. अज्ञातकर्तृक 'सारस्वतोल्लास काव्य' (१५.१-२६), १०. जैनकवि कृत 'सूक्तावली' संपा. नीलांजना शाह (१४.९२-१०५), ११. जयतिलकसूरि कृत चित्रकाव्य 'सवृत्तिकः चतुर्हारावली चित्रस्तवः' (२०.१-२९), १२. वाचक मुक्तिसौभाग्यगणि कृत 'स्तवनचोवीसी', संपा. अभय दोशी (२५.७८-९६), १३. श्रीविजयसेनसूरिनी प्रशस्तिरूपे हेमविमलगणि कृत 'कीर्तिकल्लोलिनी', १४. 'नालिकेरसमाकाराः' वाक्यना ४० अर्थोवाळी एक पाननी कृति, १५. विस्तृत सम्पादकीय नोंध साथे मुनि सुयशचन्द्रविजय अने मुनि सुजसचन्द्रविजय द्वारा सम्पादित 'श्रीमुनिदेवसूरिरचित अभयाभ्युदय-महाकाव्य' १ थी ४ सर्ग (४६.१-२७), १६. १८मी सदीना महो. मेघविजयजीकृत ज्योतिषशात्र विशेनो 'धर्मलाभशास्त्र', संपा. म. विनयसागर (३०.१-१०) वगेरे.

६. संशोधन लेखो अने टूंकी नोंधो

आ सामयिक मूलतः कृतिना सम्पादन अने संशोधनने वरेलुं छे अने तेथी ज तेना प्रादुर्भावकाळथी ज जैनविद्या विषयक पसंदगीना अध्ययनशील लेखोनो समावेश करवामां आवी रह्यो होई तेना नाम - 'अनुसन्धान'- ने सार्थक करी रह्युं छे. आ उपरांत केटलीक परम्परागत मान्यताओ अने नवीन अभ्यासो-संशोधनोना आधारे प्राप्त तारणोना परिप्रेक्ष्यमां आ विषयक्षेत्रना अभ्यासुओने पुनः सघन विचारणा करवा प्रेरे तेवी समस्यास्वरूप टूंकी नोंधो पण प्रगट करवामां आवे छे. जो के अत्रे उल्लेख करवो रह्यो के सम्पादक - आचार्यश्री विद्वत्तापूर्ण लेखो मेळववा माटे आ सामयिकना माध्यमथी संस्कृतनी सुख्यात गद्योक्ति 'एको ध्यानं, द्विरध्यायी, त्रिभिः पन्थाः' नी भावनाने ध्याने लई आ शोधयात्रामां जोडावा माटे प्रसंगोपात्त जाहेर अपील करता रहे छे. आम छतां तेमनी अपेक्षा मुजबना लेखो न मळता होवानो अफसोस व्यक्त करतां नोंधे छे के शुं सम्पादके लेखकनी भूमिका पण निभाववी पडशे ? तेम ज, 'अत्यारे तो पुराणी रचनाओनां सम्पादनोनो संचय एवुं आ पत्रिकानुं स्वरूप बन्युं छे' (३१). आज सुधी प्रगट थयेला अङ्कोमां जैनविद्याक्षेत्रना विविध विषयो सम्बन्धी १८० जेटला लेखो अने ११० जेटली टूंक नोंधो प्रगट थई शकी छे. एक खास उल्लेखनीय बाबत ए के भायाणीसाहेब तेमना अवसानपर्यन्त आ सामयिकमां पोताना लेखो / शब्दचर्चा मोकलता रह्या हता. आ साथे ज जयंत कोठारी, के. आर. चंद्रा, अनीता बोथरा, म. विनयसागर, सागरमल जैन, मधुसूदन ढांकी, बळवंत जानी, हसु याज्ञिक, नलिनी जोशी, नगीनभाई शाह, कान्तिभाई शाह, आचार्यश्री विजय-शीलचन्द्रसूरिजी, त्रैलोक्यमण्डनविजयजी, उपाध्याय भुवनचन्द्रजी वगेरेना अधीतनो लाभ आ सामयिकना वाचकोने प्रसङ्गोपात्त मळतो रह्यो छे, जेनाथी आ सामयिक रळियात बनी रह्युं छे. आ विषयक्षेत्रना नवा अध्यापको / संशोधको आ सामयिकमां प्रकाशन माटे लेख न मोकलता होवाना वलण पाछळ सम्भवतः युजीसीना नियम मुजब अध्यापकोना केरिअर एडवान्समेन्ट, प्रमोशन वगेरेना लाभो माटे तेमना लेखो I.S.S.N. (International Standard Serial Number) नंबर धरावता जर्नल के जे युजीसी द्वारा मान्य होय तेमां

प्रकाशित थयेला होवा जोईए ते कारण जवाबदार होई शके.

७. शब्दचर्चा

आ पत्रिकानी आगवी मूडी समान जूनी गुजराती, अपभ्रंश, प्राकृत अने संस्कृत शब्दोनी शब्दचर्चा. आ शब्दचर्चा भायाणीसाहेबे शरु करी हती, जे तेमनी हयाती सुधी चालु रही हती. आ चर्चामां जयंत कोठारी अने रमेश ओझाए पण थोडुंक प्रदान कर्युं हतुं. आ अन्वये १४० जेटला शब्दोनुं मूळ, यथासम्भव जे ते समयनी विविध कृतिओमां थयेला तेना प्रयोगो अने आधुनिक युगमां मध्यकालीन कृतिओनां सम्पादनोमां चर्चा हेठळना शब्दनो मूळ संस्कृत शब्द, सम्बन्धित कृतिमां कया अर्थमां प्रयोजवामां आव्यो छे अने सम्पादक के विविध सम्पादको द्वारा करवामां आवेल अर्थघटनो विशे सोदाहरण अने तुलनात्मक परिप्रेक्ष्यमां ऊंडाणभरी रसप्रद चर्चा करवामां आवी छे. क्वचित् शब्दना प्रयोजके साचा अर्थमां प्रयोजेल होय, परन्तु तेना टीकाकारे तेनुं खोटुं अर्थघटन कर्युं होय ते पण दर्शाववामां आव्युं छे. उदा. भायाणीसाहेबे 'प्रा. 'कसरक्क' शब्दनी चर्चा करतां 'वज्जालग्ग'नी गाथामां अने हेमचन्द्राचार्यए अपभ्रंश व्याकरण विभागना उदाहरणमां 'स्वादपूर्वक केरडाना कटका माणवा'ना अर्थमां प्रयोज्यो छे, ज्यारे 'वज्जालग्ग'ना टीकाकार रत्नदेवे 'कळी' एवो अर्थ कर्यो छे. 'वज्जालग्ग'ना सम्पादक पटवर्धने हेमचन्द्रे आपेला प्रयोगनी नोंध लीधी छे. (पृ. ४४९-४५०), परन्तु टीकाकारना अर्थ विशे कशी शङ्का करी नथी.' (८.१०८-१०९) विगते नोंध करी छे. वधुमां जे ते सन्दर्भित कृतिओनी वाङ्मयसूचिगत माहिती पण काळजीथी आपी छे, जे ध्यानार्ह बनी रहे छे.

८. आवरणचित्र समृद्धि

जैनशैली, जैन-गूर्जर शैली या मारु-गुर्जर शैलीनी चित्रकळाना विकासमां जैनाचार्यो अने जैनसमाजनुं पायानुं योगदान रह्युं छे. आ उपरान्त गुजरातमां शिल्प-स्थापत्यकळाना विकासमां जैन श्रेष्ठीओ अने जैन अमात्योनो फाळो सुवर्णाक्षरे अङ्कित छे. जैन ज्ञानभण्डारोमां सचवायेली अने सविशेषतः जैनकृतिओमां दोरवामां आवेलां लघुचित्रो तेम ज जिनालयोमां उपलब्ध प्रतिमाओ, धातुप्रतिमाओ, काष्ठशिल्पो वगेरे कलावारसाना केटलाक उत्तम

नमूनाओना फोटोग्राफ्सने 'अनुसन्धान'ना आवरणपृष्ठ उपर स्थान आपवामां सम्पादक आचार्यश्रीनां कलादृष्टि, आ अणमोल वारसानो जिज्ञासुओने परिचय करावनुं वलण अने तेना संरक्षण माटेनी निसबतनां दर्शन थाय छे. आ आवरणो उपर वैविध्यपूर्ण कलावारसो प्रदर्शित करवामां आव्यो छे. उदा. तरीके वि.सं. १२८४मां लखायेली 'सिद्धहेमशब्दानुशासन'नी ताडपत्रीय पोथीनां चित्रो (अङ्क-५४), १८मा शतकनुं राजस्थानी शैलीनुं चित्र 'नारी-अश्व पर सवार श्रीकृष्ण' (४८), वि.सं. १६०१ नुं लोकपुरुषनुं चित्रात्मक यन्त्र (४२), गिरनार उपर वस्तुपालनिर्मित जिनालयमां प्रशस्तिलेख (७२), १७मा शतकना काष्ठशिल्पकलामण्डित देरासरनी पद्मावतीदेवीनी काष्ठप्रतिमा, खम्भात (५०), उपाध्याय विनयविजयजीना हस्ताक्षर (६०), हेमचन्द्राचार्य अने राजर्षि कुमारपाळनी प्रतिमाओ, गिरनार (५३), १९मा शतकनी चित्रपृष्ठिका उपरनुं चित्र (५२), झघडियाजी तीर्थनी सं. १२२०नी सरस्वतीदेवीनी प्रतिमा (६६), वि.सं. १२५७मां निर्मित हेमचन्द्राचार्य (सं. ११४५-१२२९)नी प्रतिमा, धंधुका (५९) वगेरे. आ बधां चित्रो उपरांत स्मृतिअङ्कोनां आवरणपृष्ठो उपर मालवणियासाहेब, भायाणीसाहेब, मुनिराज जम्बूविजयजी, आचार्यश्री सूर्योदयसूरीश्वरजी वगेरेना फोटोग्राफ्स पण मुन्द्रित करवामां आव्या छे.

आ बधां आवरणचित्रो सम्बन्धी खास नोंधपात्र बाबत ए छे के आचार्यश्रीए आ कलावारसाना नमूनाओ मात्र मुद्रित करीने सन्तोष न मानतां प्रायः प्रत्येकनो ऐतिहासिक - सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्यमां परिचय करावतां हालमां आ कृति क्यां उपलब्ध छे अने तेनो फोटो कोना द्वारा सुलभ थई शक्यो तेनी पण काळजीपूर्वक नोंध लीधी छे. आ सम्बन्धी एकाद-बे चित्रोनो उदाहरण तरीके परिचय जोईए : वि.सं. १२८४मां लखायेली 'सिद्धहेमशब्दानुशासन'नी ताडपत्रीय पोथी श्री हेमचन्द्राचार्य जैन ज्ञानमन्दिर, पाटणमां संग्रहायेली छे. आ पोथीनां बे पानांनी उठांतरी थई गई छे. आ चित्रो आ पूर्वे कोई प्रख्यात जैन संस्थानी प्रदर्शनीमां प्रदर्शित करवामां आव्यां हतां. आ चित्रो तेना मूळ मालिकने (पाटणना ज्ञानमन्दिर) परत करवा प्रयास करवा छतां सफळता मळी नथी ते सन्दर्भे विगतवार नोंध कर्या बाद आचार्यश्रीए जणाव्युं छे के 'एक ऐतिहासिक दस्तावेजनो तथा पुरातन पोथीनो नाश थवानी

आ स्थिति आ रीते सर्जाय ते केटलुं दुःखद छे ? ए संस्थाना अधिकारीओने सन्मति जागे अने ते चित्रो, जो अद्यावधि मूळ जग्याए पुनः प्रस्थापित न थयां होय तो पुनः प्रस्थापित थाय तेवी आशा सेवीए'. अहीं आपणे आचार्यश्रीनी वेदना स्पष्ट अनुभवी शकीए छीए. 'चन्दनबाळा अने मृगावती' तथा 'सती द्रौपदी अने नारद ऋषि' (६८) नां चित्रोनी पौराणिक पृष्ठभूमि वर्णवीने चित्रनी नजाकत उजागर करवानी साथे साध्वीजीने पलंग न होय छतां चित्रकारे लीधेली छूटनी नोंध लेवानुं आचार्यश्री चुक्या नथी.

९. सूचि

आपणे सौ जाणीए छीए के कोई पण साहित्य-विषय, ग्रन्थालय के सामयिकमां समाविष्ट सामग्रीनी शोध माटे सूचि आवश्यक छे. अनुभवे जणायुं छे के सूचि / शास्त्रीयसूचिविहोणां ग्रंथालयो, सामयिको के विषयोनी सामग्रीनी शोध प्रायः दुष्कर बनी रहे छे अने तेना अभावमां तेनुं अस्तित्व पण अर्थहीन पुरवार थाय छे. सूचिनी उपयोगिता अने महत्ताने ध्याने लईने सम्पादकश्रीए 'अनुसन्धान'नी समयान्तरे सूचिओ तैयार करावडावी तेना अङ्कोमां प्रकाशित पण करी छे, जे आ सामयिकनी पोतीकी विशेषता बनी रहे छे. आ सूचिओ तैयार करवानुं श्रेय मुनिश्री धर्मकीर्तिविजयजी अने मुनिश्री त्रैलोक्यमण्डनविजयजीना शिरे जाय छे. आ दृष्टिवन्त परिश्रमशील कार्य माटे 'अनुसन्धान'नुं विद्याजगत तेमनुं ऋणी बनी रहेशे.

आ पैकी अङ्क १ थी ५० नी सळंग संकलित सूचि अङ्क नं. ५१ (पृ. २१ थी १५५)मां अने अङ्क ५१ थी ६७नी सळंग सूचि अङ्क नं. ६८ (पृ. ८८-१४१)मां प्रकाशित करवामां आवी छे. आ सामयिकनी आ बन्ने बृहत् सूचिओ उपरान्त थोडाक-थोडाक अङ्कोनी सूचिओ पण प्रगट करवामां आवी छे. आ बृहत् सूचिने मुख्य त्रण विभागो 'सम्पादनखण्ड', 'लेखनखण्ड' अने 'प्रकीर्णखण्ड'मां विभाजित करवामां आवी छे. त्यारबाद 'सम्पादनखण्ड'मां भाषा अनुसार कृतिओने पद्य अने गद्यमां, तेम ज पद्य कृतिओने स्तोत्रात्मक अने वर्णनात्मकमां वर्गीकृत करीने अकारादिक्रममां गोठवीने पुनः आदिपदानुक्रम अने आदिवाक्यना अकारादिक्रममां सूचि आपवामां आवी छे अने छेल्ले कर्तासूचि : निश्चितकर्तृक अने अज्ञातकर्तृकमां विभाजित करीने तैयार करवामां

आवी छे. 'लेखनखण्ड' अन्तर्गतनी सामग्री लेखो अने टूंक नोंधो गुजराती, हिन्दी अने अंग्रेजी भाषानुसार सूचि वगेरे, शब्दचर्चा अने विहंगावलोकनना पेटाविभागोमां वर्गीकृत करीने जे ते सामग्री अङ्कना क्रमानुसार गोठवीने रजू करवामां आवी छे. अन्तिम 'प्रकीर्णखण्ड'मां माहिती वगेरे, महत्त्वना पत्रो, प्रकाशन परिचय (ग्रन्थावलोकनो वगेरे), आवरणचित्र, अवसाननोंध अने 'अनुसन्धान'ना अङ्को प्रगट थयानी तवारीखनी विगतो अङ्कना क्रमानुसार गोठवीने रजू करवामां आवी छे. आम, आ सूचि प्रत्येक अङ्कमां प्रकाशित आवरणचित्रथी शरु करीने तमाम सामग्रीने वर्गीकृत करीने तैयार करवामां आवी छे. अत्रे नोंधवुं रह्युं के प्रारम्भना केटलाक अङ्को जोईने आ लखनारे 'अनुसन्धान'नी सूचि तैयार करवा मनोमन संकल्प करी कार्यारम्भ पण कर्यो हतो. परंतु, आ सुनियोजित सूचिनुं अवलोकन कर्या बाद सूचि तैयार करवानुं मांडवाळ करी दीधुं छे. जो के अत्रे जणाववुं रह्युं के आ सूचि घणीबधी रीते उपभोक्ताकेन्द्री होवा छतां तेनी केटलीक मर्यादाओ आगामी संस्करणमां दूर करवी जरूरी बनी रहे छे. आ मर्यादाओ पैकी पद्यकृतिओनुं तेना स्वरूप अनुसार विभाजन. उदा. तरीके स्तवन, स्तोत्र, रास, भास, फागु, हरियाली, समस्याश्लोक, महाकाव्य, खण्डकाव्य वगेरे, संशोधनात्मक लेखो अने टूंकनोंधोनुं विषयानुसार विभाजन, अंजलिलेखोनुं विभाजन सम्बन्धित व्यक्तिविशेषना नामना वर्णानुक्रममां, आवरणचित्रो आवरणचित्रना नामना / विषयना वर्णानुक्रममां गोठववां जरूरी बनी रहे छे. अथवा हालनी आ व्यवस्था यथावत् राखीने आ उपरांत जे ते कृति, लेख, चित्र, वगेरेनां नोंधपात्र पदोना आधारे अकारादिक्रममां एक सळंग उल्लेखसूचिनी तेम ज ज्यां ज्यां अङ्कोना क्रमानुसार माहिती दर्शाववामां आवी छे त्यां त्यां अक्षरादिक्रममां माहितीनी गोठवणीनी आवश्यकता बनी रहे छे.

आ सामयिकनी सूचिओ उपरांत मुनि त्रैलोक्यमण्डनविजयजी महाराज द्वारा सम्पादित 'प्रकाशित विज्ञप्तिपत्रोनी सूचि' (६८. ३८-८७) नी शास्त्रीयता अने विविध १० वर्गोमां विभाजन अभिनन्दनीय छे. आ सूचिमां 'अनुसन्धान'मां प्रकाशित विज्ञप्तिपत्रो उपरांत अन्य स्रोतोमां प्रकाशित विज्ञप्तिपत्रोनो पण समावेश करवामां आव्यो छे, जे ध्यानार्ह बनी रहे छे.

१०. अनुसन्धान अङ्क १ थी ७४ : आंकडाकीय परिप्रेक्ष्यमां (अनुमानित)

		पद्य	गद्य	कुल
१.	कृति सम्पादनो			
०	जूनी गुजराती, मारु-गुर्जर वगेरे	२८८	१९	३०७
०	अपभ्रंश	२१	—	२१
०	प्राकृत	१०६	—	१०६
०	संस्कृत	१८०	६०	२४०
	कुल	५९५	७९	६७४
२.	संशोधन - लेखो			
	० गुजराती अने हिन्दी	१४०		
	० अंग्रेजी	४०		
	कुल	१८०		
३.	प्राचीन ग्रन्थ परिचय	१६		
४.	टूंकनोंधो (१२ अंग्रेजी, १०१ गुजराती)	११३		
५.	विज्ञप्तिपत्रो	१३५ + ११		
६.	पत्रो	६०		
७.	प्रकीर्ण माहिती (संशोधन समाचार, परिसंवादो वगेरे)	२६		
८.	ग्रन्थपरिचय (ग्रन्थसमीक्षा, प्रकाशन सूचना वगेरे)	३८०		
९.	आवरणचित्रो (व्यक्ति विशेषना फोटा सिवाय : लघुचित्रो, प्रतिमा अने प्रतिमा लेखो, विज्ञप्तिपत्रो, उत्कीर्ण प्रशस्तिओ, कर्ताना हस्ताक्षरोनी प्रतो वगेरेना फोटा.)	९४		
१०.	कुल मुद्रित पृष्ठसंख्या	१०१००		

११. समापन

'अनुसन्धान'मां प्रगट थती वैविध्यशील अने सुचिन्तनीय वाचन सामग्री अने तेनुं साहित्यिक मूल्य, सम्पादक-आचार्यश्रीनो अणथक ध्येयनिष्ठ

पुरुषार्थ, गुजराती भाषामां जैनविद्या क्षेत्रना विद्वद्भोग्य सामयिकनो प्रायः अभाव अने सामे छेडे घटता जता अभ्यासनिष्ठ संशोधकीय वलणने ध्याने लेतां 'अनुसन्धान' तेनुं अनुसन्धान चालु राखे ते ज समयनी अने विद्याजगतनी अनिवार्य आवश्यकता छे. जैनविद्यानां फ्रेन्च विदुषी प्रो. नलिनी बलबीर आ सामयिकने सेतु गणावे छे ते बहुविध रीते यथार्थ ज छे. आ सामयिकथी एक मोटो फायदो ए थई रहयो छे के जैन साधु-साध्वी महाराजसाहेबोने अध्ययनशील बनी रहेवामां प्रेरणारूप बनी रह्युं छे, जेनी प्रतीति घणां बधां महाराजसाहेबोनां अहीं प्रगट थयेलां अधीतो थकी थई रहे छे. २०मी सदीना जैन मुनिभगवन्तोनी गुरु-शिष्य-प्रशिष्यनी गौरवशील परम्परा अने तेमनां विद्याकीय प्रदानथी आपणे सौ परिचित छीए तेनुं विहंगम दर्शन करतां गर्व अनुभवीए छीए अने आ साथे कंईक अंशे निराशा पण अनुभवीए छीए के मुनिभगवन्तोनी पेढीनो हवे अस्त थई गयो ? तेवा समये आचार्यश्री विजयशीलचन्द्रसूरि महाराज अने अन्य आचार्यो, मुनिभगवन्तोनी निश्रामां आ परम्परा सतत धबकती रहे अने तेमां 'अनुसन्धान' ऋत्विजनी असरकारक भूमिका पूरी पाडे तेवी श्रद्धा सेवीए. आ साथे ज नोंधवुं रह्युं के उपाध्याय मुनि भुवनचन्द्रजी महाराजे प्रत्येक अङ्क उपर अङ्क नम्बरनी साथे ज प्रकाशन मास अने वर्षनी नोंध तथा जे ते अङ्कना लेखकोनां सरनामां नोंधवा माटे सूचन कर्युं छे ते योग्य ज छे. आ उपरांत प्रत्येक लेख शरु थाय ते पृष्ठ उपर नीचेना भागमां लेखक, लेखनुं शीर्षक, सामयिकनुं नाम, अंक नंबर, वर्ष अने लेखना प्रारम्भनो अने अन्तनो पृष्ठाङ्क पण दर्शाववो जोईए. प्रपत्तिभावपूर्वकनी आ श्रुतभक्ति माटे विद्याजगत आचार्यश्री विजयशीलचन्द्रसूरि महाराज, कलिकालसर्वज्ञ श्रीहेमचन्द्राचार्य नवम जन्मशताब्दी स्मृति संस्कार शिक्षणनिधि अने 'अनुसन्धान'ना नियमित वाचक अने सुज्ञ समीक्षक मुनिभगवन्त भुवनचन्द्रजी महाराजनुं सदाय ऋणी बनी रहेशे.

* * *

'अनुसन्धान'ना विज्ञप्तिपत्र विशेषांको

— डो. कान्तिभाई बी. शाह

आद्य सम्पादक डो. हरिवल्लभ भायाणीना सम्पादन हेठळ आरम्भायेली अने वर्तमानमां पूज्य आचार्यश्री विजयशीलचन्द्रसूरिजीना सम्पादनमां कार्यरत, मुख्यतः जैन साहित्य विषयक संशोधन अने सम्पादननी आ 'अनुसन्धान' पत्रिका अेना ७५मा पडावे पहोंची छे. ज्ञानभण्डारोना दाबडाओ अने पोटलांओमां सचवायेली संस्कृत, प्राकृत अने मध्यकालीन गुजराती-मारुगुर्जर आदि प्रादेशिक भाषानी नानी-मोटी अप्रगट कृतिओने प्रकाशमां आणवा माटे 'अनुसन्धान'नी पुस्तिकाओ अति महत्त्वनुं माध्यम बनी रही छे. अे पुस्तिकाओमां सम्पादकश्री अवारनवार शोध, संशोधन अने सर्जन वच्चेनो भेद समजावी, संशोधननी विभावना स्पष्ट करता रही, संशोधननी साची केडी चींधता रह्या छे. सम्पादित कृतिओनी साथे साथे तज्ज्ञोना स्वाध्यायलेखोनो लाभ पण मळतो रह्यो छे.

'अनुसन्धान'नी आ गतिविधि परत्वे सहेज पाछळ नजर करतां ऊडीने आंखे वळगे अेवुं कोई काम थयुं होय तो ते छे - अेक मोटा प्रकल्प स्वरूपे जैन विज्ञप्तिपत्रोनुं संशोधन-सम्पादन अने तेनुं चार विशेषाङ्कोमां थयेलुं प्रकाशन. अधधध बोलाई जवाय अेवी विपुल संख्यामां 'अनुसन्धान'ना ६०, ६१, ६४, ६५मा (अनुक्रमे खण्ड १-२-३-४) विज्ञप्तिपत्र विशेषाङ्कोमां आ रचनाओ प्रकाशित थई छे.

आ चार विशेषाङ्कोमां १२० विज्ञप्तिपत्रो छे. उपरान्त अगाउना अङ्कोमां प्रकाशित ९ अने पछीना अङ्को (६७, ६९)मां प्रकाशित ४ मळी १३३नी संख्या थाय. साथे सूचिमां प्रसादीपत्र आदिना दर्शावायेला अलग विभागना १६ विज्ञप्तिपत्रो समावी लेतां अत्यारसुधीमां कुल १३३+१६ = १४९ विज्ञप्तिपत्रो 'अनुसन्धान'मां प्रकाशित थया छे. आने अेक अणमोल खजानानी उपलब्धि ज मानवी पडे.

'अनुसन्धान'ना आ प्रकल्प अगाउ अन्यत्र विज्ञप्तिपत्रोना सम्पादन-प्रकाशन अंगे जे काम थयुं छे अेनी माहिती आ. श्री विजयशीलचन्द्रसूरिजीअे प्रास्ताविक लखाणमां आपी छे. अे कामोमां मुख्यत्वे श्री मुनिचन्द्रसूरिजीअे पोताना

गुरु श्रीदेवसुन्दरसूरिजी पर संस्कृतमां लखेला विज्ञप्तिपत्र 'त्रिदशतरङ्गिणी'नो अेक अंश 'जिनस्तोत्ररत्नकोश' नामे तेम ज बीजो अंश 'गुर्वावली' नामे प्रकाशित छे. मुनिश्री जिनविजयजीअे 'विज्ञप्तिलेखसंग्रह'मां २७ कृतिओनुं सङ्कलन-सम्पादन कर्युं छे. वाचक जयसागरजीअे संस्कृतमां लखेल 'विज्ञप्तित्रिवेणी' स्वतन्त्र पुस्तक रूपे प्रकाशित छे.

'अनुसन्धान'ना १४९ विज्ञप्तिपत्रोमां संस्कृत भाषाना ९७ पत्रो छे. प्राकृतमां ३, मध्य-गुजरातीमां ३०, राजस्थानीमां १३, हिन्दीमां ५ अने षट्भाषिक १ छे. परन्तु भाषाना आ वर्गीकरणने चुस्त रीते समजवानुं नथी. संस्कृत साथे पत्रना केटलाक अंशो प्राकृतमां, गुजराती साथे राजस्थानी-मारवाडी, हिन्दी साथे गुजराती अेम मिश्रण थयुं होय.

पद्य-गद्यना माध्यमथी विचारतां १०७ विज्ञप्तिपत्रो पद्यमां, १९ गद्यमां अने २३ गद्य-पद्यमिश्रित छे. पद्यात्मक विज्ञप्तिपत्रोमां श्रीसंघनी विज्ञप्ति जेवा केटलाक अंशो गद्यमां जोवा मळे.

चातुर्मास दरमियान पर्वाधिराज पर्युषणनी आराधना पछी शिष्य पोताना गुरुजनने क्षमापना-वन्दना पाठवतो पत्र लखे ते विज्ञप्तिपत्र. संस्कृत भाषामां विज्ञप्तिपत्र लखवानी परम्परा १५मी सदीथी मांडीने छेक १९मी सदीना अन्त सुधी चालु रही छे. अेथी ज मोटा भागना पत्रो संस्कृतमां लखायेला उपलब्ध थया छे. साधुभगवंत गमे ते प्रदेशना होय पण विज्ञप्तिपत्र तो संस्कृतमां ज लखवानो होय अेवी अेक परिपाटी दृढ थई हती. अेटलुं ज नहीं, विज्ञप्तिपत्रना स्वरूपनो, विषयालेखन अने अेना अनुक्रमनो अेक ढांचो निर्माण पाम्यो हतो.

सौ प्रथम आरम्भे पत्रनुं मङ्गलाचरण करवामां आवे. अेमां सामान्यतया ऋषभदेव, शान्तिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ अने महावीरप्रभु अे पांच उपकारी जिनेश्वरोनी स्तुति करवामां आवती. क्यारेक चोवीसेय तीर्थङ्करप्रभुनी स्तुति होय तो क्यारेक स्थानिक जिनालयना प्रभुनी पण स्तुति होय. अे पछी पत्र ज्यां मोकलायो होय अे नगरनुं वर्णन, पछीना क्रमे पत्र ज्यांथी मोकलायो होय अे नगरनुं वर्णन, चातुर्मास दरम्यान थयेलां धर्मकार्योनुं वर्णन, पर्युषणपर्वनी आराधना (अमारिप्रवर्तन, तपश्चर्या, कल्पवाचन, चैत्यपरिपाटी, संघवात्सल्य व.)नुं वर्णन, गुरुगुणस्तवना, गुरुनी चरणवन्दना, विज्ञप्ति (क्षमापना, वन्दनास्वीकार), सहवर्ती

मुनिगणने अनुवन्दना, पत्रलेखकना सहवर्ती मुनिगण तरफथी गुरुजीने वन्दना, मुनिगणनी नामावलि, संघ द्वारा वन्दनानुं निवेदन करी विज्ञप्तिपत्रनुं समापन करवामां आवे.

समयान्तरे संस्कृत भाषालेखनमां शिथिलता आवती गई तेम १७मा शतकथी प्रादेशिक भाषाओमां विज्ञप्तिपत्रो लखावा मांड्या. अेमां भाषाना मिश्र प्रयोगो पण जोवा मळे. मङ्गलाचरण संस्कृतमां होय, गुरुगुणस्तवना मध्य. गुजरातीमां होय तो श्रीसंघनी विज्ञप्ति मारवाडीमां पण होय.

नवाईनी वात अे लागे छे के आपणां प्राकृतभाषी आगम-आगमेतर शास्त्रो अने धर्मग्रन्थोना अध्ययन साथे सतत संकळायेला रहेला मुनिभगवंतोनी कलमे लखायेला प्राकृतभाषी विज्ञप्तिपत्रो अहीं मात्र ३नी संख्यामां ज प्रकाशित छे! प्राकृत भाषाना श्रवण-वाचननी तुलनाअे अेनुं लेखन मुश्केल बन्युं हशे ? के पछी आवां विज्ञप्तिपत्रो हजी अनुपलब्ध रह्या हशे ? आ पण अेक संशोधननो विषय बनी शके.

स्वजन, मित्र के वेपारी तरफथी आपणने 'पोस्ट'थी मळता पत्र जेवो आ विज्ञप्तिपत्र कोई कागळ-पत्र हशे अेम मानी अेनी अवगणना करवी अे अेक मोटी भ्रमणा गणाशे. पत्रमां जिनेश्वरोनी स्तुतिमां व्यक्त थतो भक्तिभाव, शिष्यनां गुरु प्रत्येना आदर, विनय, मिलननी उत्कटता, गुरुविरहनी व्यथा आदिनी संवेदनासभर अभिव्यक्ति, गुरुगुणस्तवना अने नगरवर्णनोमां छलकातो कल्पनावैभव, झडझमक, यमकप्रयोग, शब्दानुप्रास, आन्तरप्रास द्वारा अलङ्कारमण्डित थतुं कृतिनुं बहिरङ्ग, छन्दोवैविध्य, चारणी छन्दोनी छटा दाखवतुं शब्दसंगीत, ललितकोमल पदावलिओ, देशीबद्ध ढाळोमां आवती लयात्मक ध्रुवाओ, बन्धचित्रोनां आलेखनोमां जोवा मळतुं कलाकौशल अने अेमां छती थती कविप्रतिभा तेमज अतीतनी अनेक अैतिहासिक विगतोथी समृद्ध अेवो आ विज्ञप्तिपत्र केवळ 'कागळ' न रहेतां अेक साहित्यिक सर्जन बने छे. विशेषतया जैन साहित्यनां जे दीर्घ-लघु साहित्यस्वरूपो गणायां छे, अेमां विज्ञप्तिपत्रने पण निःसंकोच अेक विशिष्ट साहित्यस्वरूप तरीके स्वीकारवुं ज पडे.

विज्ञप्तिपत्रोमां व्यक्त थती कविप्रतिभानां केटलांक उदाहरणोनी नोंध लेतां वात करीशुं श्रीमुनिसुन्दरसूरिजीरचित 'त्रिदशतरङ्गिणी'ना अप्रगट रहेला

अेक अंशनी, जे अहीं (६४/१) प्रकाशित छे. अेनुं नाम छे 'चैत्यषट्कबन्धचित्ररूप श्रीजिनस्तवावलि महाह्रद'. अेमां पाटणनुं पंचासरा पार्श्वनाथ जिनालय, शत्रुञ्जयनुं चैत्य, शान्तिनाथ चैत्य, गिरनार चैत्य, जीरापल्ली चैत्य अने महावीर जिनचैत्यनां चित्रबन्ध-पद्योमां अे समय (१५मुं शतक)नां आ चैत्यो केवां हशे अेनो आलेख मळे छे. विशेषता अे छे के अेमां चैत्यस्थापत्यनां विविध अंगो जेवां के फरस, नीसरणी, सोपान, दण्ड, स्तम्भ वगेरेनां चित्रात्मक वर्णनो थयां छे. सम्पादकश्रीअे आ पत्रांशने विशेषाङ्कना घरेणा तरीके ओळखाव्यो छे.

अे ज रीते उपा. उदयरत्नजीना दानरत्नसूरिजी परना पत्र (६५/२३)मां चार चित्रबन्ध काव्यो मळे छे. स्वस्तिकबन्ध, कमलबन्ध, अष्टारचक्रबन्ध अने शरावसंपुटबन्ध. आ चारेय चित्राकृतिओ अहीं अपायेली छे. कविप्रतिभा विना आवां चित्रबन्ध काव्यो शक्य नथी. श्रीविजयदेवसूरिने अेमना पट्टशिष्य श्रीविजयसिंहसूरिअे लखेला पत्र (६०/१)मां आरम्भे करेली वीरस्तुतिनां ४२ थी ६९ पद्यो तेमज गुरुगुणवर्णननां १५१ थी २७३ पद्यो बन्धचित्रोमां आलेखित छे, जेवां के त्रिशूल, शंख, हल, खड्ग, छत्र, कलश, स्वस्तिक, दलकमल, दर्पण वगेरे.

पत्र (६४/७)मां जिनस्तुति करतां पत्रलेखके पार्श्वनाथना मस्तक पर नागनी सात फणाने मोक्षना प्रवेशद्वारे कषायादिनां लगावेलां ताळां खोलवानी कूंचीओ कही छे.

श्रीमेघचन्द्रमुनिअे लखेला पत्र (६१/९)मां कविकल्पना कराई छे के पार्श्वनाथप्रभुना चरण पर बेठेला शेषनागने प्रभुजीनुं चरित्र सांभरी आवतां मस्तक धुणाव्युं. तेथी समुद्रनां जलबिन्दुओ ऊछळीने आकाशमां तारलारूपे गोठवाया. 'क्षुब्धादुच्छलितास्तदा जलनिधेस्ते बिन्दवस्तारकाः ।'

पं. दर्शनविजयगणिअे सादडीथी श्रीविजयप्रभसूरिजीने 'महासमुद्र-दण्डकमय' पत्र (६१/३३) लख्यो छे. चार चरणमां अेक ज श्लोकनो अे पत्र छे. प्रत्येक चरणमां ९९९ अक्षरो छे. प्रथम चरणमां राणकपुरना ऋषभदेवनुं अने बीजा चरणमां नलिनीगुल्म प्रासादनुं सुरेख वर्णन छे. 'तमस्काण्डमुद्दण्डपाखण्डजाड्यं चयैश्चण्डरोचिः प्रचण्डप्रतापैः...' आवी शब्दानुप्रासखचित अने लयात्मकतायुक्त अेक ज श्लोकवाळी आ कृति कविनुं अद्भुत काव्यकौशल प्रगट करे छे.

उपा. यशोविजयजीओ लखेला पत्र (६१/१५)मां नेमिनाथनी स्तुतिमां अेवी कल्पना करी छे के नेमिनाथे पञ्चजन्य शंख फूंकतां समुद्र खळभळ्यो अने अेनां उछळेलां मोजां साथे छीपोमांथी मोती नीकळीने विधाताना रथवाहक राजहंसना मुखमां जई पड्यां. विधाताअे आ सही लीधुं. उपाध्यायजीओ खरडारूप करेली बीजी अेक पद्यरचना (६१/४५)मां मङ्गलाचरण विभागमां प्रत्येक श्लोकमां 'पलायते पञ्चमुखः करेणोः' अेवी पादपूर्ति करता जई २० पद्योमां अेनी समस्यापूर्ति करी छे. अे ज रीते नगरवर्णन विभागमां 'लोहितो जयति यामिनीपतिः' अे पदनी पादपूर्ति करी पछीनां ८ पद्योमां अेनी समस्यापूर्ति करी छे. आम समग्र रचना कवित्वचमत्कृतिवाळी बनी छे.

पं. नयविजयगणिअे लखेला पत्र (६१/१२)मां कलात्मक वर्णरमणा करी छे. पत्रारम्भे थयेली वीरस्तवनाना १२ थी २५ सुधीना श्लोकोमां प्रत्येक श्लोकनी प्रथम पंक्तिमां जे वर्णानुक्रम राख्यो होय तेनाथी अे श्लोकनी बीजी पंक्ति अवळा वर्णानुक्रममां रचाई छे. अेनां बहिरङ्गनुं कलाकौशल तो छे ज, साथे वर्ण्य विषय अने अेनी भावाभिव्यक्तिनुं अन्तरङ्ग काव्यसौन्दर्य पण जळवायुं छे. आनुं अेक उदाहरण जुओ –

''वन्दे रवीनुन्नतकान्तिजातैः, पराजयन्तं द्विमताऽमाक्षम् ।
क्षमावतामद्वितयं जरापं, तैर्जातिकान्तन्ननु वीरदेवम् ॥''

विज्ञप्तिपत्रोमां शार्दूलविक्रीडित, स्रग्धरा, वसन्ततिलका, शालिनी, उपजाति, दुहा, चोपाई, अनुष्टुप, सवैया, भुजङ्गी, पद्धडी, अमृतध्वनि, मोतीदाम, त्रिभङ्गी, चन्द्रायणी, छप्पय, कुंडळिया व. छन्दो प्रयोजाया छे. उपरान्त विविध रागोवाळी देशीओमां ढाळो प्रयोजाई छे. आवी ढाळोमां 'जी रे मारे', 'रे लोल', 'जी हो' जेवां लटकणियां 'मनमोहना रे लोल' अने 'अेसो घाणेरां' जेवी ध्रुवाओनां आवर्तनो ढाळोना गानने संवर्धक बने छे. गझल, स्वाध्याय (सज्झाय) अने गूढा (समस्याप्रधान दुहा) पण छे.

अनेक विज्ञप्तिपत्रोमां चारणी छटावाळा छन्दोमां पद्यरचना थई छे. जेम के पद्धडी छन्दमां 'झलहलै वदन जिम चंद जांन, कीरत जग पसरी किरण भांन', अमृतध्वनिमां 'तेजे पूर, मनमथ चूर, सील अनूर, कामित पूर, दालिद चूर' अने त्रिभङ्गी छन्दमां –

'हठीसिंघह कीधं, भुवनसिद्धं, निरखत लिधं, प्रभुदारं,
ध्वजसहित मंडाणं, उच्चै पमाणं, मेरु हराणं, जगसारं'

जेवी रचनाओ थई छे. 'अनिललोलपलाशलतावृतैः, सघननिम्बकदम्बकदम्बकैः' ललितकोमलपदावलिनो अेक सुन्दर नमूनो छे.

गुरुगुणवर्णनमां सामान्यतया गुरुना ३६ गुणो वर्णवाय छे. जो के केटलाक पत्रोमां जुदीजुदी रीतिअे त्रण वखत ३६ गुणोना वर्णन द्वारा कुल १०८ गुणोनुं वर्णन पण थयुं होय छे. अेक वार अे वर्णन दुहा-चोपाई जेवा छन्दमां होय तो पछी देशीबद्ध ढाळमां पण होय. घणा पत्रोमां आवुं गुणवर्णन अेकसरखुं पण जोवा मळे. पण आने अेक वास्तविकता तरीके स्वीकारी लेवी रही. शिष्य गुरुगुणनो प्रचलित बनेलो तैयार अंश उपयोगमां ले अे स्थिति साहजिक गणाय. अन्य साहित्यमां पण सुभाषित जेवा केटलाय दुहाओ अेकसरखा प्रयोजायेला मळी आवे छे. परन्तु आपणने स्पर्शी जाय छे अे तो शिष्यनो गुरु माटेनो हृदयभाव अनेक स्थानोमां जे काव्यात्मक अभिव्यक्ति पामे छे ते. केटलांक उदाहरणो जोईअे :

उपा. विनयविजयजीअे श्रीविजयप्रभसूरिने लखेला पत्र (६०/९)मांना गद्यखण्डमां यद्नी साथे सातेय विभक्तिप्रत्ययो जोडीने गुरुवर्णन कर्युं छे. पं. श्रीदेवविजयजीअे लखेला पत्र (६१/२८)मां ११९ थी १३१ श्लोकोमां गुरुगुणवर्णन प्रत्येक श्लोकमां जुदा जुदा छन्दमां कर्युं छे, अेटलुं ज नहीं, ते ते छन्दनुं नाम पण साथे गूंथी लीधुं छे. शिष्य कर्मचंद्र गुरु अमरचंद्रने पत्र (६१/३१)मां गद्यमां ठपकाना सूरमां लखे छे के 'तमे माराथी दूर केम चाल्या गया ? (कथं तर्हि सत्वरमेवाऽतिदूरस्थले प्रस्थितवन्तो भवन्तो...). श्रीविजयचारित्र्य वाचकना (६१/२१)मां गुरु माटेनो भक्तिभाव लयात्मक गानछटामां नीचेना श्लोकमां व्यक्त थयो छे –

''क्षोभनं मोहनं दोहनं पावनं कर्मणां देहिनां मेधिनां धर्मिणाम् ।
लावनं रक्षणं वर्द्धनं पालनं स्तौमि नत्वा गुरुं भक्तियुक्त्याऽनिशम् ॥''

श्रीवृद्धिविजयजीअे लखेला पत्र (६४/६)मां 'हेम्नोऽधिकं रत्नमतोऽस्ति सत्या' (हेमथी रत्न अधिक छे) अे उक्तिना सन्दर्भे गुरु विजयरत्नसूरिने हेमचन्द्राचार्यथी पण अधिक कह्या छे. अहीं शिष्यनी गुरु माटेनी भावुकता जोवा

मळे छे. अे ज रीते आ शिष्ये सरस्वती देवीना हाथमां पुस्तक होवा अंगे अेवी कल्पना करी छे के आ गुरु शास्त्रपारङ्गत होई मारे अेमनाथीये अधिक भणवुं पडे. पं. उदयविजयजीअे लखेला पत्र (६५/२)मां गुरु माटेनो अहोभाव आ रीते व्यक्त थयो छे :

''आउखुं करी इंद्रनो, लेखण स्वर्गह दंड, पूज्यजी,
आठ प्रहर रवि उग्गमई, [तो] गुण लखइ अखंड, पूज्यजी.''

आ आखो ज लघुपत्र गुरुमहिमा दर्शावता अेक नानकडा ऊर्मिगीत जेवो छे. साधुकवि माणिक्यचन्द्रजीअे गुरु विजयदेवसूरिने लखेला पत्र (६५/३)मां गुरुमिलननी झंखना, अधीरता रसाळ बानीमां निरूपी छे.

''सज्जन तुजमां गुण घणा, अवगुण अेक अपार,
मोह लगाडी माणसां, मारई विणु हथीआर.''

श्रीमोहनविजयजीअे श्रीविजयधर्मसूरिजीने लखेला पत्र (६५/१०)मां त्रण वखत गुरुगुणवर्णन आवे छे. देशीबद्ध ढाळमां, सारसी छन्दमां अने सज्झाय स्वरूपे. सारसी छन्दवाळुं वर्णन रूपकमढी शैलीमां थयुं छे, जेमां गुरुने अेक राजवी कल्पी अेमनी समृद्धि वर्णवी छे. जेमके,

''शीलांगरथ रणधणण दीपे जीपता सुररथ प्रभें.''

मेडताथी श्रीसंघे श्रीदेवगुप्तसूरिजीने लखेला पत्र (६५/२४)मां गुरुमहिमा वर्णवतां कल्पनासभर रसाळ पद्यो छे –

''चोपद ते द्विपद कीधो, तातै आप सवाय.'' गुरुने पिताथी पण सवाया कह्या छे.

''गुरु पारस शिष्य लोह सम, स्वर्ण होत तिण संग,
दै प्रबोध निश-दिवस तो करे कीट ते भृंग.'' (गुरु अेवा पारसमणि छे के जे लोढा समा शिष्यने सुवर्ण बनावे, दिनरात प्रबोधित करी कीडामांथी भ्रमर बनावे.)

पं. रत्नविजयगणिने कोई अज्ञात पत्रलेखके लखेला पत्र (६५/३०)मां केटलांक अत्यंत भाववाही पद्यो जोवा मळे छे. पत्रना आ माध्यमने अर्थहीन गणावतां तेओ लखे छे –

''कागद को लिखवो किसो, कागद लोकाचार,

जे [ते] दिन सफ्लो जाणसुं, मीलसुं बांहि पसार.'' अहीं गोकुळनी गोपीओओ उद्धवजीने आपेला उत्तरमां अेमनी प्रत्यक्ष कृष्णमिलनझंखना याद आवे.

आम, जोई शकाशे के गुरुगुणवर्णनमां विज्ञप्तिपत्रो केवी सर्जकता दाखवे छे.

नगरवर्णन अे पण विज्ञप्तिपत्रनो अेक महत्त्वनो अंश बने छे. अेमां पत्र ज्यां अने ज्यांथी मोकलायो होय ते नगरोनां वर्णनो जोवा मळे छे. अेमां त्यांना जिनालयो, अन्य देवदेवीओनां मंदिरो, उपाश्रयो, जळाशयो, चौटां, चोक, बजार, त्यांना राज्यकर्ताओ, लोको, अेमनी धर्मनिष्ठा, वेपार-वणज व.नी विगतो होय. क्वचित् कवि नगरवर्णन अगाउ गुर्जर के मरुधरदेशने पण वर्णवे. वर्णनो रसाळ अने काव्यात्मक पण बने. अहीं दस्तावेजी अने अैतिहासिक विगतो सारा प्रमाणमां सांपडे छे अे आ वर्णनोनुं सविशेष महत्त्व छे. पत्रो ज्यां अने ज्यांथी लखाया छे ते नगरोनी यादी सूचि (अंक-६८)मां अपाई छे, सौथी वधारे पत्रो अमदावाद, पाटण अने राधनपुर खाते मोकलाया छे. ज्यांथी मोकलाया छे अेमां सौथी मोटुं प्रमाण सूरत, अमदावाद अने जोधपुर नगरनुं छे.

पत्र (६४/१८)मां लखनउ अने जयपुरनां वर्णन छे. लखनउने लक्ष्मणपुर तरीके ओलखावायुं छे. चन्द्रायणा, वसन्ततिलका, दुहा आदि विविध छन्दोमां लखनउनां जिनालय, उपाश्रय, बजार, श्रेष्ठीवर्ग व.नुं वर्णन छे. अेनुं अेक पद्य जुओ –

''ढींचाल उद्भट सुभट सोहे, भीम जिम ते सोहता,

सरपें लपेटा बांध फेंटा, देखवें मनमोहता.''

ते पछी पुनः संस्कृतमां अनुष्टुप छन्दमां वर्णन छे. रामने लक्ष्मण प्रत्ये अपार स्नेह होवाथी आ लक्ष्मणपुरी वसावाई छे अेम अेमां कहेवायुं छे. जयपुरनुं वर्णन संस्कृतमां अनुष्टुप छन्दमां तेमज गद्यमां थयुं छे. पत्र (६४/२०)मां सीरोही अने सूरतनां वर्णनो छे. सीरोही-वर्णन अन्तर्गत आबूनी अेक ढाळ छे. अेनी ध्रुव पंक्ति छे 'अर्बूदगिरि वारू रे, पर्वतमां मूगट समान.' सीरोहीने माटे अमरपुरीना

अवतारनी कल्पना कराई छे. सूरतने गुजरातनां तमाम शहेरोमां मुगट समान कह्युं छे. अेना श्रावकोनुं गुणदर्शन अने जिनालयोनो परिचय विस्तारथी थयो छे. पत्र (६४/२२)मां दुहामां मारवाड प्रदेशना वर्णनथी शरु करी घाणेरावनुं चारणी छन्दोमां अति विस्तृत वर्णन करायुं छे. अेमां हाटक छन्दमां 'अैसो घांणेरा...'नी ध्रुवानां आवर्तनो वर्णनने सुगेय बनावे छे. गझलनो प्रयोग पण थयो छे. हाटक छन्दमां घाणेरावनी प्रजानुं अेक चित्र जुओ –

'वसहै व्यवहारी, बहु अधिकारी, जसधारी धनवंत,
सुकृत आचारी, दुकृतनिवारी, सुविचारी सतवंत,
समकित-लयलीना, रंगरसभीना, ध्यावैं जिनवरध्यान. अैसो घांणेरा...'

पत्र (६५/१४)मां मालवदेशनुं टीकात्मक हांसी करतुं वर्णन थयुं छे. पत्रलेखके त्यांना लोकोने गुणहीना, छीछरा, संकुचित मनना, अभिमानी कह्या छे. पण पछी वातने वाळी लेता होय अेम कहे छे के त्यां मक्षीजी अने अवंती पार्श्वनाथ तीर्थ एनो मोटो गुण छे. पत्र (६५/१६)मां पाटणनगरीनुं वर्णन मारुगुर्जर भाषामां थयुं छे. अेमां अरबी-फारसी शब्दोनी प्रचुरता जोवा मळे छे. जैन-जैनेतर देवस्थानो, अेनी हाटश्रेणी, मलमल आदिना थता सोदा व. गझल स्वरूपे वर्णवी, पाटणना उपाश्रयोनुं वर्णन मोतीदाम छन्दमां थयुं छे, मेडता नगरना वर्णनमां केटलीक पंक्तिओ पाटणवर्णनने मळती आवे छे.

चातुर्मासिक आराधना अने पर्युषणपर्वनी धर्मक्रियाओने वर्णवती माहिती शिष्य पोताना गुरुने आ विज्ञप्तिपत्रोमां पाठवे छे. अेमां श्रीसंघमां थयेली तपश्चर्या, व्याख्यानमां धर्मग्रन्थनुं वाचन, पर्युषणमां कल्पसूत्र-वाचन, अमारिप्रवर्तन, चैत्यपरिपाटी, संघवात्सल्य व.नो समावेश थयो होय छे. सम्पादकश्रीअे अेक बाबत अे नोंधी छे के पर्युषण अंगेनी माहितीमां त्रिशलामाताने आवेलां १४ सुपनोनां अवतरण-दर्शन अंगेनो उल्लेख आ विज्ञप्तिपत्रोमां क्यांये मळतो नथी. आ पण अेक संशोधननो ज विषय गणाय.

विज्ञप्तिपत्रोना आ बधा विभागोनी अेक महत्त्वनी उपलब्धि छे अेमां प्रचुरपणे संघरायेली-सचवायेली अैतिहासिक विगतो. आ बधी विगतो अेकठी करवा जतां तो अेम ज लागे जाणे अतीतमां धरबाई गयेलो मोटो खजानो हाथ आवी गयो.

पत्रमां गुरुजीना सहवर्ती मुनिवृन्दनी नामावलि तेमज पत्रलेखक शिष्यना सहवर्ती मुनिवृन्दनी नामावलि साधुपट्टावलिने संशोधित करवामां अेक महत्त्वनो आधारस्त्रोत बनी शके. साधुभगवन्तोनी चातुर्मासिक स्थिरतानां स्थान-समयना पुरावा तेम ज कया धर्मग्रन्थो उपर व्याख्यानो अपायां तेनी माहिती तथा केटलाक साधुभगवंतोनां मातापितानां नामो पण अहीं प्राप्त थाय छे. श्रीसंघे करेली विज्ञप्तिमां श्रावक-श्राविकाओनां नामो तत्कालीन संघना माळखा उपर प्रकाश पाडी शके.

१५मा शतकना श्रीमुनिसुन्दरसूरिजीना 'चैत्यषट्कबन्धचित्ररूप श्रीजिन-स्तवनावलि'मां चैत्योनां अंगवार स्थापत्यनी जाणकारी मळे छे. पाटणना पंचासरा पार्श्वनाथ चैत्यमां श्रीशीलगुणसूरिजी अने वनराज चावडानी प्रतिमाओना चित्रालेखननो उल्लेख तत्काले अे प्रतिमाओनी मोजुदगीनो पुरावो छे. त्यारे गुजरात माटे 'गुर्जरावती' शब्दप्रयोग थयेलो अहीं जाणी शकाय छे. अत्यारे केटलांक नगरो जे नामथी ओळखाय छे ते तत्काले कया नामे ओळखातां तेना पुरावा अहीं मळे छे. अेक पत्रमां गुरु माटे 'खांवन' (खार्विद) प्रयोग थयेलो छे. उपा. यशोविजयजीनो पत्र अेमनी स्वाध्यायप्रवृत्तिनो निर्देशक छे; तो साथे अेमने विरोधीओना कावादावाना अने हेरानगतिना भोग बनवुं पडेलुं अेनो संकेत अेमना ज पत्रमांथी प्राप्त थाय छे. श्रीविजयदेवेन्द्रसूरिने माणिभद्र साक्षात् होवानो उल्लेख अेक पत्रमां थयो छे. जोधपुरथी लखायेलो अेक पत्र सचित्र छे. अेमां व्याख्यान समये मुहपत्ति बांधेला साधुनुं चित्र तत्कालीन परम्परानुं सूचक छे. बीजापुर संघना अेक पत्रमां श्रीविजयप्रभसूरिनी दक्षिणनी विहारयात्रामां अेमणे जुहारेलां विविध पार्श्वनाथ तीर्थोनो उल्लेख मळे छे. लोकागच्छीय मुनि परमानन्दे सं. १८८४मां लखेला पत्रमां लोकागच्छ अहिपुर (नागपुर)मां प्रवर्त्यो होवानो तेम ज ते समये जेसलमेरमां गजसिंह नामे राजा होवाना उल्लेखो छे. आ मुनिना सं. १८९०ना पत्रमां ते समये पतियालामां कर्मसिंह राजा होवानो उल्लेख छे.

सं. १८५१मां सूरतना श्रीसंघे लखेला पत्रमां अचलगढमां सुवर्णवर्णा चोमुखजीना चैत्यनो उल्लेख छे, तेमज सूरतनां चैत्योनी नामावलि प्राप्त थाय छे.

मारवाडनी घाणेरावनगरीना अति विस्तृत वर्णनमां विविध विगतोने समावाई छे. राठोडोनुं राज्य, अजितसिंह राजा, अेना कारभारीओ, अेमनां गोत्र, देवदेवीओनां स्थानको, जळाशयो, अेनी धर्मनिष्ठ प्रजा, विविध व्यवसायीओ,

उपाश्रय, पौषधशाळा व. जोधपुरथी रतलाम खाते विजयजिनेन्द्रसूरिने लखायेलो पत्र ऐतिहासिक माहितीथी भरपूर छे. माळवामां तत्काले मराठा शासक दोलतराव अने रतलाममां पर्वतसिंह राजाना नामोल्लेख, माळवानी प्रजा, त्यांना रोगचाळानी बहुलता व.नी विगतो अपाई छे. तेमज जोधपुरना क्षत्रिय अने वणिक गोत्रो, त्यांना पुरोहित, व्यास, सैयद, पठाण, चारण, भाट, विविध देवस्थानो, सरोवरो, वाव आदि जळाशयो, त्यांना मिनारा अने मस्जिद, नगरमां मुकायेली तोप, विविध गच्छोनी पौषधशाळा व.नी विगतो प्राप्त थाय छे.

सूरत संघना मुम्बई खाते लखायेला पत्रमां भायखलामां मोतीशानी टूक, दादासाहेबनां पगलां, कोलाबामां श्रावकोनी वस्ती, दीपचंदे सं. १८८७मां काढेलो शत्रुंजयनो संघ, हीराचंदे पायधुनीमां बंधावेलुं चिन्तामणि चैत्य, मोतीशाअे सं. १८७४मां काढेलो शत्रुञ्जयनो संघ, सं. १८८५मां मोतीशानी टूंकमां थयेली आदीश्वरप्रभुनी प्रतिष्ठा व.ना उल्लेखो तेमज सूरतना परिचयमां अंग्रेज राजकर्ताओ, पारसीओ, त्यानां ४५ जिनालयो तथा जैनेतर देवस्थानो, १२ दरवाजा, दरगाहो, तापी नदी, अेमां वेपारार्थे वहाणोनी अवरजवर व.नी विगतो प्राप्त थाय छे.

जोधपुरथी श्री संघना अमदावाद खाते लखायेला पत्रमां अमदावादनी शेठ हठीसिंहनी वाडी, मगनभाईनी वाडी, भद्र, भद्रकाळी मन्दिर, त्रण दरवाजा, झवेरीवाड, माणेकचोक, नागोरी सराई व.ना उल्लेखो छे. अेक आमन्त्रण-पत्रिकामां तारङ्गा तीर्थमां नन्दीश्वरद्वीपना जिनालयमां चोमुखजीनी प्रतिष्ठा सं. १८८०मां थई तेनी, तथा बीजी पत्रिकामां सं. १८८३मां शत्रुञ्जय संघमां पधारवा तेमज सिद्धाचल पर बंधावेला देरासरनी प्रतिष्ठाना शेठ वखतचंदे आपेला आमन्त्रणनी विगत प्राप्त थाय छे. ते समये लेवातो मुंडकावेरो तथा अन्य वेरा आ शेठे अेक वर्ष माटे भरीने संघयात्रिकोने वेरामांथी मुक्त करेला अेनो उल्लेख पण अहीं थयो छे.

आ विज्ञप्तिपत्रोमांना केटलाक अपूर्ण के त्रुटक छे. अेवा अंशोमां सचवायेली माहिती अप्राप्य रही गई छे. केटलाक पत्रो सचित्र छे पण अहीं अे चित्रो अप्राप्त के अप्रकाशित रह्यां छे.

मळेला विज्ञप्तिपत्रनो गुरु शिष्यने प्रत्युत्तररूपे जे पत्र लखे ते प्रसादीपत्र. गुरुजीनी वरसती कृपा अे शिष्य माटेनी प्रसादी. गुरु पण पत्रमां पोताने त्यां थयेली धर्मक्रियाओनी विगत जणावे.

आ विशेषाङ्कोना सम्पादनमां आचार्यश्री विजयशीलचन्द्रसूरिअे प्रत्येक विशेषाङ्कमां आरम्भे तमाम विज्ञप्तिपत्रोनो संक्षिप्त परिचय कराव्यो छे, जेमां पत्र-अन्तर्गत प्रगटती कविप्रतिभा, गुरुगुणवर्णनमां शिष्यनी भावाभिव्यक्ति, छन्दोवैविध्य, नगरवर्णन आदि अंगोमां सचवायेली अैतिहासिक सामग्री व.नो समावेश थाय छे. टूंकमां कहीअे तो पूज्यश्रीअे तमाम पत्रोनो अर्क आ परिचयमां तारवी आप्यो छे. अेमनी सूक्ष्म परखदृष्टि 'श्रवणसुणितं' के 'वाटं पश्यति' जेवा संस्कृतनी साथे तद्भव शब्दोना मिश्रणनी भ्रष्टताने पण शोधी शकी छे.

'अनुसन्धान'मां जे १४९ पत्रो सम्पादित थया छे अेमां मात्र अेक अपवाद सिवाय बधी कृतिओनुं सम्पादन साधुभगवन्तोनुं छे. अेमांये सविशेष श्रीसुयशविजय गणि अने मुनिश्री सुजसविजयजीअे ८०, मुनिश्री त्रैलोक्यमण्डनविजयजीअे ३१ अने आ. श्रीशीलचन्द्रसूरिजीअे १४ (संस्कृतभाषी) पत्रोनुं सम्पादन कर्युं छे. बाकीनां अन्य साधुभगवंतोनां सम्पादनो छे. श्रावकवर्गमांथी मात्र पं. अंकित शाहनुं अेक प्रसादीपत्रनुं सम्पादन छे.

श्रीधुरन्धरविजयजीनी सहाय अत्यन्त नोंधनीय छे. १३ विज्ञप्तिपत्रो अेमना निजी संग्रहमांथी प्राप्त थया छे. अे ज रीते उपा. भुवनचन्द्रजीअे राजस्थानना प्रवास दरम्यान ग्रन्थागारोमांथी केटलाक विज्ञप्तिपत्रो मेळवी आप्या छे. श्रीसुयश-विजयगणि अने मुनिश्री सुजसविजयजीअे घणीबधी हस्तप्रतोनी प्रतिलिपि करवानो श्रम लीधो छे. ६९मा अङ्कमां अेक अजैन विज्ञप्तिपत्र प्रकाशित थयो छे अेनी प्रतिलिपि अेमणे करी छे. आ पत्रनुं सम्पादन अने भावानुवाद डॉ. निरंजन राज्यगुरुअे कर्यां छे. मुनिश्री त्रैलोक्यमण्डनविजयजीअे ६८मा अङ्कमां अत्यन्त चीवटपूर्वक विज्ञप्तिपत्रोनी विभागीकृत सूचि तैयार करी छे. आ सूचिमां अत्यार सुधीमां 'अनुसन्धान' तेम ज अन्यत्र अगाउ प्रकाशित थयेला तमाम विज्ञप्तिपत्रोने समावी लीधा छे. अहीं पांच विज्ञप्तिपत्रोनुं पुनःसम्पादन थयुं छे जे अगाउ 'विज्ञप्तिलेखसङ्ग्रह'मां प्रकाशित छे. पण मुद्रित प्रत सांथे जे पाठभेदो प्राप्त थया तेमां स्वीकार्य पाठोने पुनःसम्पादननी वाचनामां समावी लेवाया छे. आवा पाठभेदोनी यादी पूर्ति रूपे 'अनुसन्धान'मां अपाई छे.

सम्पादकश्री आ. शीलचन्द्रसूरिजी अेमना निवेदनमां जरूरी कोषो, सन्दर्भग्रन्थोनी मदद न लई शकायानी मर्यादा जणावी लखे छे के 'आ अमारी

कबूलात छे, बचाव नहीं.' पण आ तो अेमनी नम्रता ज गणाय. समयान्तरे प्रकाशित थती पत्रिकाना अङ्कोने प्रगट करवामां समयविलम्बनो अतिरेक न पालवे. आ दोढसो जेटलां अद्यावधि अप्रगट विज्ञप्तिपत्रोनुं प्रकाशन साचे ज जैन साहित्यना इतिहासमां अमूल्य प्रदान गणाशे.

नोंध : (१) लेखमां कौंसमां आपेला क्रमाङ्कोमां प्रथम क्रमाङ्क विशेषाङ्कनो अने पछीनो क्रमाङ्क कृतिनो छे.

(२) लेख तैयार करवामां आचार्यश्री विजयशीलचन्द्रसूरिजीअे विशेषाङ्कोना आरम्भे आपेला विज्ञप्तिपत्रोना परिचयोनो तेमज मुनिराजश्री त्रैलोक्यमण्डनविजयजीअे ६८मा अंकमां आपेल सूचिनो आधार लीधो छे.

C/o. A-४०२, सत्त्व फ्लेट,
शान्तिवन पासे, नारायणनगर रोड,
पालडी, अमदावाद-७
फोन : ०७९-२६६०९७९२

* * *

मारी नजरे - 'अनुसन्धान' सामयिक तथा तेना स्वप्नद्रष्टा, सर्जक, सम्पादक

– मुनिश्री कीर्तिचन्द्रविजयजी (बन्धुत्रिपुटी)

प्राकृत भाषा अने जैन साहित्यना अभ्यासपूर्ण संशोधननुं नोंधपात्र सामयिक 'अनुसन्धान' छेल्लां २५ वर्षथी प्रगट थई रह्युं छे अने तेनो ७५मो अङ्क आगामी दिवसोमां प्रगट करवानी तैयारी चाली रही छे त्यारे 'अनुसन्धान' सामयिकना अेक जिज्ञासु वाचक तरीके आ विशिष्ट सामयिक अने तेना कुशळ संयोजक अने विद्वान सम्पादक प्रत्येनी मारी हृदयनी लागणी संक्षेपमां, शब्दो द्वारा अहीं व्यक्त करवा जई रह्यो छुं. 'अनुसन्धान' वांचवानो मारो रस वर्षोथी जळवाई रह्यो छे तेनुं मुख्य कारण तेनां सम्पादकीय लखाणो अने तेमां प्रगट थती सत्यशोधक वृत्ति साथेनी तटस्थ, निराग्रही अने समन्वययुक्त दृष्टि रही छे.

प्राकृत भाषा अने जैन साहित्यनो व्याप छेल्ला अढी हजार वर्षथी केटलो विस्तरेलो छे ते विद्वानोथी अजाण्युं नथी. भारतना जैन ज्ञानभण्डारोमां सचवायेली लाखो हस्तलिखित प्रतिओ तेनो प्रत्यक्ष पुरावो छे. आगमसाहित्यथी मांडीने कथासाहित्य सुधीना विविध विषयो उपर छेल्ला अढी हजार वर्षमां शब्दबद्ध थयेला हजारो ग्रन्थोनो परिचय 'जैन साहित्य का बृहद् इतिहास' भाग १ थी ७ तथा 'जैन गूर्जर कविओ'नी नवी आवृत्तिना भाग १ थी १० जेवा ग्रन्थो जोवाथी थई शके छे.

हस्तलिखित ग्रन्थभण्डारोमां शताब्दीओ जूनी ताडपत्रीय तथा काश्मीरी कागळनी अप्रगट अने दुर्लभ प्रतोने शोधी शोधीने तेनुं सुवाच्य लेखन तथा शुद्ध पाठोनुं संकलन-सम्पादन करीने ग्रन्थ अने ग्रन्थकार विषेनी अभ्यासपूर्ण प्रस्तावनाओ तथा महत्त्वनी माहिती पूरी पाडता अनेक परिशिष्टो साथेनुं तेनुं व्यवस्थित प्रकाशन करवानुं कार्य छेल्ला सो-दोढसो वर्षथी देश-विदेशना विद्वानो द्वारा थतुं आव्युं छे.

गई शताब्दीमां 'कल्पसूत्र' जेवा जैन आगमग्रन्थोनुं तथा 'समराइच्चकहा' जेवा महाकाय ग्रन्थोनुं सर्वप्रथम सम्पादन अने प्रकाशन करनार जर्मन विद्वान हर्मन जेकोबीनुं नाम आ क्षेत्रे खूब जाणीतुं छे. तेम भारतमां आजथी अेक सो वर्ष

पूर्वे थई गयेला प्रवर्तक कान्तिविजयजी अने चतुरविजयजी महाराज जेवा आ क्षेत्रना अनुभवी विद्वानोना मार्गदर्शन नीचे तैयार थयेल मुनि पुण्यविजयजी (आगमप्रभाकर) अने मुनि जिनविजयजी (पुरातत्त्वाचार्य) वगेरेअे जीवनभर करेलुं संशोधन-सम्पादननुं कार्य पण देश-विदेशना विद्वानोमां जाणीतुं छे.

'अनुसन्धान' सामयिकनुं महत्त्व वर्णवता पहेलां आटली भूमिका अेटला माटे करी छे के आजथी ९८ वर्ष पहेलां जैन इतिहास, साहित्य अने तत्त्वज्ञान जेवा विविध विषयोनुं अभ्यासपूर्ण संशोधन करीने 'जैन साहित्य संशोधक' नामनुं अनियतकालीन सामयिक प्रगट करवानुं साहस पुरातत्त्वाचार्य तरीके जाणीता मुनि जिनविजयजीअे पूना शहेरथी शरु कर्युं हतुं. तेनुं प्रकाशन 'जैन साहित्य संशोधक समाज' पूनाथी थतुं हतुं. संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, गुजराती अने अंग्रेजी भाषाना मननीय निबन्धो तेमां प्रगट थता हता. हर्मन जेकोबी जेवा जर्मन विद्वानोनां लखाणोना अनुवादो तथा पण्डित सुखलालजी, पण्डित बेचरदासजी, जिनविजयजी जेवाना मननीय लेखोथी तेना दरेक अङ्को समृद्ध हता.

आवां विद्वद्भोग्य सामयिको चलाववा अे केटलुं अघरुं काम होय छे ते तो अेना सम्पादको अने प्रकाशको ज जाणे छे. ई.स. १९२०मां शरु थयेल आ 'जैन साहित्य संशोधक'ना ई.स. १९२८ सुधीमां अनियमितरूपे मात्र १२ अङ्को प्रकाशित थई शक्या. पुरातत्त्वाचार्य जिनविजयजी द्वारा सम्पादित थयेला अे अङ्को आजे पण जिज्ञासु वाचकोनी ज्ञानसमृद्धि वधारे अेवा छे.

'अनुसन्धान' — जाणे के 'जैन साहित्य संशोधक'नो नवो अवतार !

भारतनी प्रतिष्ठित संस्थाओ गांधीजीनी 'गुजरात विद्यापीठ', टागोरनुं 'शान्तिनिकेतन' तथा क. मा. मुनशीजीना 'भारतीय विद्याभवन' साथे वर्षो सुधी घनिष्ठ रीते संकळायेला पुरातत्त्वाचार्य जिनविजयजीना हाथ नीचे तैयार थयेल अनेक विद्वानोअे जैन साहित्यना विविध ग्रन्थो उपर पीएच.डी.ना शोधनिबन्धो तैयार कर्या हता. तेमांना अेक विद्यार्थी अेटले 'अनुसन्धान' सामयिकना आद्य सम्पादक अने प्रेरक श्री हरिवल्लभ भायाणी.

जिनविजयजीना सान्निध्यमां रहीने प्राकृत अने अपभ्रंश भाषाना जैन साहित्यनो अभ्यास करनार श्री हरिवल्लभ भायाणीअे कविराज स्वयम्भूदेव रचित 'पउमचरिउ' (अपभ्रंश भाषामां लखायेल जैन रामायण) उपर पीएच.डी. करेलुं,

जे भारतीय विद्याभवन द्वारा 'सिंघी जैन ग्रन्थमाळा'ना ग्रन्थाङ्क ३४, ३५, ३६ रूपे त्रण भागमां ई.स. १९५३ थी १९६० दरम्यान प्रगट थयेल छे. आ त्रण ग्रन्थो श्री भायाणीओ श्री जिनविजयजीने अर्पण करेल छे.

हरिवल्लभ भायाणी जिनविजयजीना 'जैन साहित्य संशोधक' सामयिकथी परिचित हता अने बंध पडेलुं अे सामयिक ६५ वर्ष पछी नवा स्वरूपे 'अनुसन्धान'ना नामे जाणे प्रगट थवानो योगानुयोग बन्यो होय अेवुं मने लागे छे अने तेमां मुख्य सहयोगी बन्या आचार्य शीलचन्द्रसूरि महाराज.

ई.स. १९९३मां 'अनुसन्धान'नो पहेलो अङ्क बहार पड्यो त्यारे ते अेक नाना अङ्क रूपे बहार पडेलो जे आजे २५ वर्ष पछी अनेक दळदार अङ्को रूपे प्रगट थाय छे. ई.स. १९९३ थी ई.स. २००० सुधीना ८ वर्षमां तेना कुल १७ अङ्को प्रगट थया हता, जेमां मुख्य सम्पादको तरीके भायाणी साहेब अने शीलचन्द्रसूरिजीनां नामो छपातां हतां. आ अङ्कोने समृद्ध बनाववामां भायाणी साहेबनो विशिष्ट सहयोग रह्यो हतो. भारतना अने विदेशना जैन साहित्यना संशोधको साथे भायाणी साहेबने व्यापक सम्पर्क होवाने कारणे अे बधा विद्वानोना साहित्य सर्जननो परिचय अने लाभ 'अनुसन्धान'ना वाचकोने ते गाळामां विशेष मळतो रह्यो.

त्यारबाद 'अनुसन्धान'ना संयोजन, सम्पादन अने प्रकाशननी सम्पूर्ण जवाबदारी आचार्य शीलचन्द्रसूरिजी आज सुधी खूब ज रस अने निष्ठापूर्वक संभाळी रह्या छे. केटलाक विशिष्ट विशेषाङ्को, 'विज्ञप्तिपत्रो' उपरना खूब समृद्ध चार अङ्को अनेक विद्वद्जनोना साथ-सहकारथी बहार पड्या छे ते साहित्य जगतना अमूल्य संभारणा समान बनी शक्या छे. अभ्यासीओ अने विद्वद्जनोने ज रस पडे तेवुं आ संशोधनने लगतुं सामयिक २५ वर्ष सुधी चालतुं रह्युं अे पण अेक आनन्द अने आश्चर्य उपजावे तेवी घटना छे.

बाकी तो आजथी त्रणसो वर्ष पहेला महान ज्ञानी उपाध्याय यशोविजयजी महाराजे लख्युं छे तेम, जैन संघनी स्थिति तो आजे पण, 'धामधूमे धमाधम चली, ज्ञान मारग रह्यो दूर रे' जेवी ज देखाय छे. पण अेमां आश्वासन लई शकीअे अेवा विरल विद्वानो आगमप्रभाकर पुण्यविजयजी, पुरातत्त्वाचार्य जिनविजयजी, इतिहासवेत्ता कल्याणविजयजी अने दार्शनिक विद्वान जम्बूविजयजी जेवा ज्ञानमार्गना

परम उपासको जैन संघने मळता रह्या छे अे अेक आश्वासनरूप घटना छे. वर्तमानमां आचार्य शीलचन्द्रसूरिजी जेवा श्रमणरत्नो अे कार्यने आगळ वधारी रह्या छे.

आवा संशोधनप्रधान सामयिको शरु थया पछी बहु लांबो समय चालता नथी. कहोने के, लगभग अेनुं बाळमरण थाय छे. 'अनुसन्धान'नुं प्रकाशन अेकधारुं टकी रह्युं छे अने हवे अे भरयुवानीमां प्रवेश्युं छे तेनो मुख्य यश अनुसन्धानना स्वप्नद्रष्टा, आयोजक, सम्पादक अने सर्जक आचार्य शीलचन्द्रसूरि महाराजने जाय छे. तेमनुं अेक जाणीतुं विशेषण 'विद्वद्जनवल्लभ' बे रीते सार्थक बनेल छे. विद्वद्जनो तेमने वल्लभ अेटले के प्रिय छे अने विद्वद्जनोने तेओ पण प्रिय छे तेनी प्रतीति 'अनुसन्धान' तथा 'नन्दनवनकल्पतरु'ना अङ्को जोतां बरोबर थाय छे.

प्राकृतभाषा अने जैन साहित्य विषे व्यापक अध्ययन अने तटस्थ संशोधन करवामां ऊंडी रुचि धरावता अने ते माटे निष्ठापूर्वक पुरुषार्थ करी रहेला आचार्य शीलचन्द्रसूरिजी महाराजनी ज्ञानप्रसारनी विविध प्रवृत्तिओमां जैन, जैनेतर, भारतीय अने विदेशी अनेक विद्वानो तेमनी साथे हृदयथी जोडाता गया छे. 'अनुसन्धान'ना अङ्कोनुं अवलोकन अने अध्ययन करतां तेनो वधु ख्याल आवे छे.

'अनुसन्धान'ने समृद्ध बनाववामां विद्वान जैन मुनिओ — धुरन्धरविजयजी, प्रद्युम्नविजयजी, भुवनचन्द्रजी, महाबोधिविजयजी, कीर्तित्रयी, त्रैलोक्यमण्डन-विजयजी, सुयशविजयजी, सुजसविजयजी जेवा अनेकनो फाळो छे. अे ज रीते गृहस्थ विद्वानोमां श्री दलसुखभाई मालवणिया, श्री हरिवल्लभ भायाणी, श्री नगीनदास जे. शाह, श्री जयन्तभाई कोठारी, श्री सागरमलजी जैन अने नलिन बलबीर जेवा देशविदेशना जैन साहित्यना सुप्रतिष्ठित विद्वानोना मननीय लेखोथी 'अनुसन्धान' समृद्ध थतुं रह्युं छे. आ उपरान्त अनेक नवोदित लेखको, लेखिकाओ, साध्वीजीओनो पण अेमां सहयोग रह्यो छे.

संवेदनशील हृदय अने अति सूक्ष्म बुद्धिप्रतिभा धरावता शीलचन्द्रसूरिजी ज्ञानमार्ग अने भक्तिमार्गना निष्ठावान साधक छे. सात्त्विक साहित्य, शास्त्रीय संगीत, चित्रकला अने शिल्पकला जेवी विविध कलाओ अने भारतीय तत्त्वज्ञान तथा विविध धर्म परम्पराओनुं व्यापक अने मर्मग्राही अध्ययन करनारा शीलचन्द्रसूरिजी महाराजनी सर्जनात्मक प्रवृत्तिओ पण व्यापक रही छे.

अमारा बन्नेनुं कार्यक्षेत्र तथा जीवनशैली जुदी होवा छतां अमारी मैत्री पांच पांच दायकाओथी अेकधारी टकी रही छे, तेनुं आश्चर्य अने आनन्द अमे बन्ने अनुभवीअे छीअे. तेनुं कारण अमारी बन्नेनी अपेक्षारहित अने आत्मीयताभरी लागणी छे एवुं मने लागे छे.

अमने दर वर्षे ज्यारे ज्यारे रुबरु मळवानुं थाय छे त्यारे में तेमने अनेक प्रवृत्तिओमां व्यस्त जोया छे अने ज्यारे अमे अेकला बेठा होईअे त्यारे मजाकमां हुं अेमने कहेतो होउं छुं के, ''शीलचन्द्र महाराज ! तमे तो अेक साथे सात घोडे चढेला छो !'' मजाकमां कहेली आ वातना पुरावा हुं नीचे प्रमाणे आपी शकुं.

१. 'अनुसन्धान'नुं सम्पादन अने प्रकाशन.

२. 'नन्दनवनकल्पतरु' नामना संस्कृत सामयिकनुं तेमना शिष्यो 'कीर्तित्रयी' द्वारा सर्जन, सम्पादन, प्रकाशन.

३. संस्कृत अने प्राकृत भाषाना महत्त्वपूर्ण प्राचीन ग्रन्थोनुं हस्तलिखित प्रतिओ उपरथी शुद्ध सम्पादन, संशोधन अने प्रकाशन. दा.त. 'योगदृष्टिसमुच्चय', 'बृहत्कल्पचूर्णि', 'भुवनसुन्दरीकथा', 'जीवसमासप्रकरण' - सटीक, 'महादेवबत्रीसी' जेवा अनेक ग्रन्थोने तेमना आवा कार्यना दृष्टान्तरूपे जणावी शकाय.

४. धंधुका पासे आवेल तगडी जैन तीर्थ, अमदावादमां हठीभाईनी वाडीमां आवेल 'शासनसम्राट भवन' जेवी समृद्ध संस्थाओना प्रेरक अने मार्गदर्शक तरीकेनी प्रवृत्तिओ.

५. शिष्योने अध्ययन, अध्यापननी प्रवृत्तिओमां सक्रिय रीते जोडेला राखवानो सतत पुरुषार्थ.

६. परिचयमां आवेला अनेक जैन संघो अने धर्मप्रेमी श्रावक-श्राविकाओना परिवारोने देव, गुरु अने धर्मनी उपासनामां रस लेता करवानी अने आगळ वधारवानी वात्सल्यभरी प्रवृत्तिओ.

७. उपरोक्त जाहेर जीवननी अनेकविध प्रवृत्तिओनी व्यस्तता वच्चे पण नियमित रीते समय काढीने पोतानी आत्मसाधना माटे प्रभुभक्ति, मंत्रजाप,

आत्मनिरीक्षण अने अन्तर्मुख बनवानी निजानन्दनी प्रवृत्तिओ पण तेओ रसपूर्वक अने भावपूर्वक करता रह्या छे. (१) 'वीतरागस्तोत्र'नो हिन्दीमां भाववाही पद्यानुवाद, (२) 'भीनी क्षणोनो वैभव' अने (३) 'अवधू ! तुं ज थजे तुज चेलो' जेवी काव्यकृतिओमां तेमनी अन्तर्यात्रानुं प्रतिबिम्ब जोवा मळे छे.

आवी स्व-पर कल्याणनी साधना करी रहेला आत्मीय मित्रवर्य आचार्यश्रीनुं स्वास्थ्य सुचारु रहे अने तेमना द्वारा जैन शासननुं गौरव वधारनारा कार्यो वधु ने वधु थता रहे तेवी हार्दिक मङ्गलकामना साथे अहीं ज अटकुं.

* * *

'अनुसन्धान'नो समृद्ध ज्ञानवारसो

– डो. मालती किशोरकुमार शाह

दर वर्षे विक्रम संवतनुं नवुं वर्ष शरु थाय त्यारे 'लाभ पांचम' तरीके ओळखाती कारतक सुद पांचमने जैन परम्परामां 'ज्ञान पांचम' तरीके उजवीने ज्ञानभण्डारोमां रहेल श्रुतज्ञान जेमां सचवायुं छे ते हस्तलिखित प्रतो, अलभ्य पुस्तकोने सुन्दर रीते गोठवीने प्रदर्शित कराय छे. आ उजवणीना परिणामे जैनोमां बाळपणथी ज्ञान प्रत्ये अेक विशिष्ट आदरनी दृष्टि अने संस्कार विकास पामे छे.

भारतीय संस्कृतिमां जैन धर्म अने परम्परानी जो कोई विशिष्ट देन होय तो ते तेना समृद्ध ज्ञानभण्डारो छे, जे भारतभरमां पथरायेला छे. सदीओथी तेमां जैन, जैनेतर घणुं साहित्य सचवायेलुं छे. सौथी प्राचीन ताडपत्रीय प्रतो, कागळ उपर लखायेल प्रतो अे ज्ञानभण्डारोनो अमूल्य वारसो छे. समयनुं चक्र फरवा साथे धरतीकम्प, अतिवृष्टि जेवां कुदरती परिबळो अने प्रदेश उपर थयेलां आक्रमणो जेवां मानवीय परिबळोना कारणे आमांथी समये समये घणुं नष्ट पण थयुं छे, परन्तु जे कांई बच्युं छे ते पण अणमोल खजाना जेवुं छे.

हस्तलिखित साहित्य उपर काम करीने जैन, जैनेतर, देशना, विदेशना विद्वानोअे छेल्ली बे सदी दरम्यान अथाग परिश्रम करीने नोंधपात्र कही शकाय तेवुं अने विद्वानोमां पोंखायुं होय तेवुं घणुं साहित्य प्रकाशित कर्युं छे.

'अनुसन्धान' सामयिकनो जन्म ज्ञानभण्डारोमां सचवायेला प्राकृतभाषा, संस्कृतभाषा, अपभ्रंश, जूनी गुजराती भाषाना मुख्यत्वे जैन साहित्यने लगती कृतिओना सम्पादन, संशोधन, माहितीप्रद लेखो प्रकाशित थई शके ते माटे थयो. आ ध्येयने वरेलुं आ सामयिक २५ वर्ष पूरा करे अे सानन्दाश्चर्य देनारी घटना ज छे. अत्यार सुधी प्रगट थयेला तेना ७४ अङ्कोमां देश-विदेशना अनेक सुप्रसिद्ध विद्वानोना ज्ञानभण्डारोनी आवी कृतिओना सम्पादनने लगता, संशोधनने लगता अनेक विद्वद्भोग्य लेखो तो रजू थयेला ज छे; साथे साथे आ क्षेत्रमां पा-पा पगली मांडता नवोदितोथी मांडीने आ क्षेत्रमां रस-रुचि वधता नवा नवा लेखो तैयार करनार सौने पोतानुं आवुं साहित्यनुं कार्य प्रकाशित करवानी तक मळे छे. पू. साधु भगवन्तो, पू. साध्वीजी महाराजो अने विद्वान लेखक तथा लेखिकाओ

सौनो 'अनुसन्धान'ने समृद्ध करवामां फाळो रहेलो छे.

शरुआतनां आठेक वर्षो श्री हरिवल्लभ भायाणी साथे काम कर्या बाद, पछीनां वर्षोमां आ सम्पादननुं कार्य आ.श्री शीलचन्द्रसूरिजी महाराज संशोधननां विविध पासाओनी छणावट साथे अने खूब जहेमतपूर्वक संभाळी रह्या छे. आगळना अङ्कोनुं पू. भुवनचन्द्रजी महाराजनुं विहंगावलोकन पण आ विषयना लेखो उपर प्रकाश पाडे तेवुं होय छे. 'अनुसन्धान'ना आगळ-पाछळनां पानांनां आवरणचित्रो आपणा कलासभर वारसानो परिचय करावे तेवां होय छे. 'अनुसन्धान'नो अङ्क हाथमां आवे अने बीजुं कांई वांचीअे के न वांचीअे, पण वाचक आवी बधी बाबतो उपर रसपूर्वक अने जिज्ञासापूर्वक नजर फेरवे ज छे.

ज्ञानभण्डारोमां सचवायेला विशाळ साहित्यमां गुरु महाराजने उद्देशीने लखायेला विज्ञप्तिपत्रोनो समावेश थाय छे. आ विषयना लेखो प्रकाशित करतां आवा विज्ञप्तिपत्रो मळतां ज गयां, मळतां ज गयां अने तेना अेक के बे नहीं पण चार दळदार अङ्को प्रकाशित थया. आ ज रीते देश-विदेशमां ख्याति पामेल विद्वानोना निधन बाद तेमने श्रद्धांजलिरूपे तैयार थयेल 'अनसन्धान'ना विशेषाङ्को पण नोंधपात्र छे.

आ. श्री शीलचन्द्रसूरिजी पोतानी अन्य जवाबदारीओ अने प्रवृत्तिओनी वच्चे पण 'अनुसन्धान' सामयिकना सम्पादननी जवाबदारी जे रीते वहन करी रह्या छे ते माटे आपणे सौ तेमना अत्यन्त ऋणी छीअे. आवा सामयिकने शरु करवुं, शरु कर्या पछी तेने टकाववुं अने सारी रीते प्रकाशित करवुं अे दुष्कर कार्य तेओ खूब सारी रीते करी रह्या छे अने तेमना आ कार्यमां तेमना विद्वान शिष्योनो महत्त्वनो फाळो छे ते ओछी महत्त्वनी घटना नथी.

'अनुसन्धान'ना २५ वर्षोना अङ्कोमां समाजने जे ज्ञानवारसो मळ्यो छे तेनी समृद्धि जरा पण ओछी नथी. भविष्यमां आनाथी पण वधारे समृद्ध अङ्को पूज्यश्री, तेमना विद्वान शिष्यो अने विद्वान लेखको द्वारा आपणने मळ्या करशे एवी आशा जराय अस्थाने नथी.

C/o. २२, श्रीपाल फ्लेट्स, देरी रोड, कृष्णनगर,
भावनगर-३६४००१. मो. ९८२४८९४६६९

* * *

निरंजनभाईने पत्र : 'अनुसन्धान' विषे

– मनोज रावल

13-06-2018

प्रिय निरंजनभाई, सादर नमस्कार.

आजे पत्र राजीपो व्यक्त करवा. आशरे दोढेक दायका पहेलां नन्दिग्राम-वलसाडथी परत आववा ट्रेनमां मुसाफरी करतां सुरतना स्टेशनेथी छापुं खरीद्युं अने वांचतां जाण थई के वडोदरामां मध्यकालीन जैन साहित्य अंगेनो परिसंवाद चाली रह्यो छे. तमे कह्युं : 'चालो ऊतरी जईअे. - जयंत कोठारी, रमणलाल शाह, लाभशंकर पुरोहित अने जैनसाहित्यना अनेक अभ्यासी विद्वानो वक्ताओ अने साथोसाथ केटलाक मित्रोने पण मळाशे. पू. शीलचन्द्रजी महाराजसाहेबनुं आयोजन छे अेटले कार्यक्रम सारो ज हशे.' त्यारे में संकोच व्यक्त कर्यो के 'आपणे अपेक्षित नहीं होईअे तो...? अेमने के आपणे क्षोभ अनुभववो पडे अेवुं तो नहीं थायने !..' परन्तु तमने जयंतभाईनी विद्याप्रीति अने महाराजसाहेबनी धर्मप्रीति उपर विश्वास, अेटले वडोदरा स्टेशने ऊतरी पड्या.

वडोदराना कारेलीबाग विस्तारमां आवेला अेक जैन उपाश्रयमां चालता परिसंवादमां पहोंची गया, पछी तो स्नेहीजनोना मेळापे खूब ज राजीपो अनुभव्यो, आम महाराजसाहेब साथेनो प्रथम परिचय अत्यन्त सुखद अने उष्मापूर्ण रह्यो. अतिथि गणीने आपणने पुस्तकोनी प्रसादी पण सांपडी... खेर ! पछी तो अेमनी साहित्य संशोधन प्रवृत्तिओ विशे वधारे जाणकारी मळी, सुखानुभूति वधी. तेमां 'अनुसन्धान'नो अङ्क मळ्यो. थयुं के आपणी समृद्ध परम्पराना संवर्धन माटे जे थवुं जोईअे ते आ मंच द्वारा थई रह्युं छे. कोई पण सामयिक अेना तन्त्री-सम्पादकनी जीद पर ज चालतुं रहे अेवी आपणी साहित्यिक-सांस्कृतिक आबोहवा. भायाणीसाहेब अने जयंतभाईनी विदाय पछी पू. महाराज साहेब 'अनुसन्धान'ने आकार आपवा माटे अेकला पडी गयानुं लागतुं हतुं त्यारना समयथी लई अेक पछी अेक अङ्को मळवा लाग्या, विनन्तिथी पूर्वेना अङ्को पण सांपड्या. दलसुख मालवणियाजी, हरिवल्लभ भायाणी, मधुसूदन ढांकीसाहेब तथा अनेक साधु भगवन्तो-धर्म उपासक साध्वीजीओ तथा गुजरातना केटलाये विद्वानो-जे मध्यकालीन साहित्यधाराना अभ्यासीओ हता अेमनी कलमनुं तेज 'अनुसन्धान'मां जळवातुं रह्युं.

पू. महाराजसाहेबना सम्पादकीयथी आरम्भ थाय. संशोधन, स्वाध्याय, संकलन, सम्पादन, सिद्धान्तनिरूपण वगेरे चीवट अने सत्य-तथ्यनी मावजत अंगे तकेदारी अेक गुणवत्तायुक्त पत्रिकानो अहेसास करावे. सुरतनी मांदगी पछी पण अङ्कनी गुणवत्ता जळवाती रही. थयुं के आना अंगे कोई उच्च शिक्षणना सामयिकमां विगतवार लखावुं ज जोईअे, जेथी विद्याजगतने ख्याल आवे के संशोधन अंगेना मानदण्ड केवी रीते जाळववा तेनी मथामणना नमूना मळे. आ अंगे वडोदरानी युनिवर्सिटीना अध्यापक राजेशभाई पंड्या साथे सहज वातचीत करी तो तेमणे जणाव्युं के पोते तो आ लखाणनी झेरोक्स प्रतो कढावी पोताना विभागना युवा शोधार्थीओने अभ्यास माटे आपे छे.

'अनुसन्धान'ना विशेषाङ्कोनी भातीगळ सृष्टिथी लइ विविध धर्मक्षेत्रना गुणीजनोने सांकळी अभ्याससामग्री पसंद करवी, मेळववी, चकासवी... वगेरे प्रवृत्ति पोताना वाळ मात्र धोळा ज न करे, खेरवी पण नांखे. खेर ! आ प्रवृत्तिने मात्र संशोधनना सामयिक तरीके जोवा जतां एकांगी बनवानो भय छे, कारण आजकाल थतां संशोधनो विशे डॉ. रोहित शुक्ल साहेब कहे छे तेम 'फलाणा लीमडाना झाडमां केटला पांदडां छे ते गणी काढी, डेटा अेकत्र करी संशोधन प्रगट करुं छुं...' जेवुं कहेनारा-करनारा पूरता मळी रहे आवे छे. तेवा संशोधननो शो अर्थ ? समाजने विधायक अभिगमथी, मूल्यनिष्ठ बनवा प्रेरे अेवा संशोधननो ज महिमा रहे. महाराजसाहेबने माटे आ सहज बने छे तेनुं कारण छे तेमना जीवनमां धर्म केन्द्रस्थाने छे. धर्मना आधारे कला-संस्कृतिनो उघाड विश्वभरना अभ्यासीओनुं आकर्षण रहेल छे. शिल्प, स्थापत्य, चित्र, संगीत तथा कंठस्थ अने हस्तप्रतोमां जळवायेला साहित्यना अध्ययनने अनुसन्धाने प्रगट थवा पूरुं वातावरण रची आप्युं छे. आपणा भव्य वारसाने इतिहासमां दटायेलो, विलुप्त अवदशामां राखवाने बदले सुज्ञ भावक जगतने आह्लाद आप्यो छे. गुजरात ऋणी रहेशे.

निरंजनभाई ! 'अनुसन्धान' तो घरे बेठा बेठा मळेली महाराजसाहेबनी प्रसादी... अेकलां आरोगी राजी थईअे तेवुं क्यारेक लागे, परन्तु तेमनो श्रेष्ठ *उपकार तो गुरुमहाराज पू. विजयसूर्योदयसूरिजी महाराजसाहेबनुं आपणने सांनिध्य* प्राप्त करवानी तक आपी ते. भारतीय वीतरागी साधुजनोनो विश्वकोश (अेन्साइक्लोपिडिया) प्रगट थाय तो अेमने चोक्कस स्थान अने मान आपवुं ज पडे अेवुं सरळ अने उदार चित्त. अेक व्यक्तिनुं जीवनयापन सम्प्रदाय आधारे

थतुं होय छतां जरापण एकांगी के संकीर्ण बन्या विना, भारतीय वृत्तिमां क्वचित् देखाती गुरुमुष्टिवृत्तिना सम्पूर्ण अभाववाळुं पवित्र जीवन जोवा मळ्युं. तेनो राजीपो अेटले के तेमनी साथे वीतावका मळेल केटलीक पळो जीवनमां सार्थकतानो अनुभव करावे.

* * *

आपणे पू. महाराजसाहेबनी केटलीक प्रवृत्तिओना साक्षी थवानुं बन्युं छे, सतना साथी तरीके ते वर्तता लागे अे स्वाभाविक छे. अेक उदात्त परम्परा आत्मसात् कर्यानो भाग छे परन्तु धर्मजगत उपरान्त सात्त्विक काव्य-कला-विनोद, शास्त्रनुं सेवन, आदान-प्रदान तथा फक्त मनुष्य ज नहीं, प्राणीमात्र, समग्र कुदरत परत्वे संवेदनशीलतानो विस्तार सर्जती तेमनी प्रवृत्तिमां वाचन-अध्ययननो चेप फेलावे अे तेमनी बाय प्रोडक्ट्स गणुं छुं. अेमने हिसाबे जैनसाहित्य नजीक जवा इच्छा जागी... ने अे साहित्यसमुद्रमांथी छीपलां-शंखला मळे तो पञ्चजन्य तरीके जाहेरातो करवानुं गमे, परन्तु मोती मळी आवे तो केटलो राजीपो थाय ?

तमारी साथे शेर करवा अे घटना पण जणावुं. सुधारक युगना प्रारम्भमां अंग्रेज अधिकारीओ मारफत 'रासमाळा' जेवा ग्रन्थो आकार पामता. ते अभ्यासनी पद्धति अने हेतु जे होय ते पण तेनी घणी आधारसामग्री जैनप्रबन्धकाव्यो रहेल. जो विदेशी लोको भारतनी ओळख मेळववा तेने अभ्यासमां लेता होय तो आपणे तेने खपमां केम न लेवी ? आपणने आपणी ओळख तो आपे ! आपणा रचनाकारो आधुनिक कहेवाता होय के लोकप्रिय गणाता होय पण अेमनी विषयवस्तुनी सामग्रीना कुळ अने मूळ जैनसाहित्यमां पडेलां छे ते ध्यानमां आव्युं.

आपणी पेढीना निशाळमां भणनाराने कवि कलापीनी 'ग्राममाता' रचना तेना छन्दोविधान, प्रकृतिवर्णन, रागीयता अने विषयना हार्दने प्रगट करवानी क्षमताथी स्मरणमां होय छे. आ रचना लोककथामांथी आवी तेवी प्रथम मान्यता. तो कलापी पोते राजवी हता माटे ते सर्जकने आवुं सूझ्युं अे बीजी मान्यता के सम्भावना विद्वानो दर्शावे छे. कलापी राजकुमार कोलेजना विद्यार्थी होई अंग्रेज कवि वर्ड्झवर्थनी रचना गूडी ब्लेक (आंतरडीनी कदूवा)नी असर होवानुं पण केटलाके नोंध्युं छे. आ प्रकारना अभ्यासमां शैक्षणिक सामग्रीनी तपासमां पगेरुं उर्दू भणी पण फंट्यायुं. मुल्ला हुसेन वायेझ काशिफीना 'अखलाते मुहसीनी' पुस्तकनो हवालो अपायो. 'बहेराम गोर अने बागबान', 'शाह कुबाद अने वृद्ध स्त्री' बे

कथानी सम्भावना प्राप्त थई. कलापी विशेना अभ्यासीओमां उपेन्द्र पंड्या, इन्द्रवदन दवे, रमेश शुक्ल वगेरे प्रत्ये आदर होय ज. श्री लाभशंकर पुरोहित 'फलश्रुति' ग्रन्थमां आ बधा मन्तव्योने ध्यानमां लई चर्चा आगळ वधारे छे, तेमनो प्रयत्न 'जहांगीर नामा' (जहांगीर का आत्मचरित्र) सुधी जाय छे. मूळनुं दशमी सदीनुं 'शाहनामा' आ कथाअंश धरावतुं होवानी सम्भावनाओ पण विद्वानो दर्शावे छे, अहीं सुधी आव्या पछी समयना पट पर भूतकाळ तरफ जइअे तो 'ग्राममाता'नुं कथाबीज तेनाथी पण आगळ जैनसाहित्यमांथी प्राप्त थाय छे.

सिंघी जैन ग्रन्थमाळा अन्तर्गत मेरुतुङ्गाचार्य रचित 'प्रबन्धचिन्तामणि' रचना जे वि.सं. १३६१ ई.स. १३०५मां वढवाण शहेरमां पूर्ण थयेल. उपरोक्त ग्रन्थमाळाना सम्पादन-संचालननी जवाबदारी पू. मुनि जिनविजयजीअे संभाळेल. 'प्रबन्धचिन्तामणि'नुं प्रकाशन अमदावाद-साबरमती ९ शक्तिनगर, अनेकान्तविहार तथा सिंघीसदन ४८ गरियाहाट रोड, बालीगंज - कलकत्ताथी थयेलुं. आ रचना विभिन्न 'प्रकाश' नामना विभागोमां आलेखायेल छे. तेमां मूळराज, सिद्धराज, भीम, भोज, कुमारपाळ वगेरे विषयक वृत्तान्तो समाववामां आव्या छे. 'ग्राममाता'ना कथाबीजने 'इक्षुरसनो प्रबन्ध'मां वांची शकाय छे. भीम अने भोज विषयक वृत्तान्तना प्रकाश बीजामां प्रकरण ७०-७३ पृ. ८४ उपर, १६मा वृत्तान्तमां आ प्रकारनी वात मूकाई छे. इस्लामिक रचनामां दाडमनो रस छे ज्यारे अहीं इक्षुरस तृषा छीपाववा शकोरामां अपाय छे. 'प्यालो' नथी. सूयो भोंकवाथी रस नीकळे, (आजे पण ताडमां रस काढवा सूयो भोंकावी माटलुं टींगाडाय छे.) ते घटना बीजी वेळा ओछा रसनुं कारण केम बने छे ते मीमांसामां राजानी मनोवृत्ति निमित्त दर्शावाय छे.

गुजराती भाषामां पोताना हाथवगां साधनो द्वारा मूळकथाबीज सुधी पहोंचवा प्रयत्न करनाराओने सलाम.

परन्तु 'अनुसन्धान' पू. विजयशीलचन्द्रसूरिजी म.सा. सन्दर्भमां आ वात अेटले आ पत्रमां पाठवुं छुं के जैन साधु प्रमाणमां संसारथी अलिप्त गणाय छे, तमे जाणो छो के विहार दरमियान तेमनुं जनजीवननुं अवलोकन सर्वाश्लेषी होय छे. आपणे संवेदनाना फलक पर विचारीअे तो समजी शकीअे के पू. मेरुतुङ्गाचार्यजीने भारतमां जे सत्ताहस्तान्तर (पावरशिफ्टींग) थयुं हशे ते घटना स्पर्शी हशे. आम जनता पर करवेराना बोजथी जे वेठवानुं आवे तेनो अहेवाल आ

नथी पण संकेतमात्र छे. तेमणे महत् पुरुषोनां चरित्रो आलेख्यां छे ते नवा शासकोना सन्दर्भमां. वीरधवल, वस्तुपाल-तेजपालनुं महत्त्व ऐतिहासिक छे ज. प्रबन्ध-चिन्तामणिकार नोंधे छे के – 'पुराणी कथाओ बुद्धिमानोना चित्तने प्रसन्न नथी करी शकती अेटले निकटवर्ती सत्पुरुषोनां वृत्तान्तोनो आ प्रबन्ध'.

पूर्वे उल्लेख कर्यो तेम अंग्रेज शासकोनी संस्थानवादी मनोदशावाळुं इतिहास आलेखन मानीअे के न मानीअे पण पश्चिमनो इतिहासविभाव जुदो छे. भारतमां इतिहासआलेखन समयक्रम प्रमाणे न थतुं पण किस्साओमां इतिहास सचवातो-प्रचलित रहेतो. इतिहासबोध अंगे रवीन्द्रनाथ टागोर तेने अेक रस तरीके ओळखावे छे. आ रसास्वाद पूरो करतां पहेलां बे-अेक आनुषंगिक बाबतो. उर्दू छावणीनी भाषा छे, जे भारतमां ईस्लामी शासन पछी अस्तित्वमां आवी. बीजुं मोगल शासक बाबर ई.स. १५२६मां भारतमां आव्यो, ते पछी हुमायु, अकबर, जहांगीर वगेरे... (ई.स. १६१५ सुधीनो समय छे.)

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीना अनुवादनी प्रतना आधारे सत्पुरुषोनां वृत्तान्त नजीक पहोंचवामां 'अनुसन्धान' अने तेना सम्पादकश्रीनो ऋणी छुं ज. अेकवेळा आपणा इतिहास लखनाराओ प्रबन्धोनो आधार लेता, तो प्रबन्धनी विगतो साची के शक्य नथी ते माटे इतिहास साचो नथी अेम कहेवातुं. हवे भारतीय इतिहासलेखनमां चमत्कार, परचा, लौकिक कथानको वगेरेना निरूपणने प्रजाकीय आशा, अपेक्षा, आकांक्षा, मान्यतानुं अेक घटक लेखी, तेने लेखन-कथन-निरूपणपद्धतिनो अेक भाग गणी अभ्याससामग्री तरीके सम्भावना तागवा खपमां लेवाय छे. बाकी संशोधननुं सत्य तो काळदेवतानुं निवेद छे. दिनकरजी कहे छे ने - 'गवाक्ष तब भी था जब वह खोला नहीं गया था, सत्य तब भी था जब वह बोला नहीं गया था.'

आ 'अनुसन्धान' यात्रा बदल तमारो आभार मानीश तो तमे अणगमो व्यक्त करशो. महाराजसाहेबनो आभार मानुं तो ते हळवी मजाक करी ले अने करावे ते नक्की नहीं. माटे पेला राजवी माफक हजु बीजुं प्यालुं रसनुं इच्छी आटलेथी अटकुं... न अन्य, स्नेहविवश.

C/o. न्यायालय पथ,
जाम जोधपुर-३६०५३०

* * *

हजी अेक दरवाजे दीवो बळे छे...

– निरंजन राज्यगुरु

'अनुसन्धान'नो ७५मो अंक तैयार थई रह्यो छे त्यारे मरमी कविश्री मकरन्दभाईनी 'आ बिस्मार दुनियाने कोई बतावो, हजी अेक दरवाजे दीवो बळे छे...' काव्यपंक्तिओ सतत मारा चित्तमां घुमराय छे. ई.स. १९९३थी शरु करीने २०१८ सुधीना पूरां पचीस वर्षोनी अविरत संशोधनयात्रामां अनेक पडावो आ सामयिके सर कर्या छे. मारे मन 'अनुसन्धान' अेक जैन धर्मनुं-जैन साहित्यनुं सामयिक मात्र नथी, समग्र साहित्यक्षेत्र, तमाम विद्याशाखाओ, तमाम भारतीय धर्म-पन्थ-सम्प्रदायोनी विधविध धाराओ, संस्कृत-प्राकृत-अपभ्रंश, जूनी गुजराती, डिंगळ-पिंगळ, चित्र-शिल्प, इतिहास, भाषा-प्रदेश, संस्कार, संस्कृति, साधनापरम्पराओ, दर्शनो अने जीवतरनां लगभग तमाम पासांओने उजागर करवा मथनारा अभ्यासीओ माटे पथप्रदर्शक दीवादांडी बनी शके अेवी विचारप्रक्रिया छे. 'भौतिक दुनियानी कोईपण बाबत करतां विद्याप्रीति अने विद्याकार्य जराय ओछुं के हलकुं-नकामुं-बिनउत्पादक नथी.' अेम परम आदरणीय भायाणीसाहेबना शब्दो नीकळे अने आ अनियतकालीन-अनरजीस्टर्ड पत्रिकानो जन्म थाय, नाम पण भायाणीसाहेब ज आपे. जेनो मुद्रालेख होय - 'मुखरता सत्य वचननी विघातक छे.' (ठाणंग सूत्र-५२९) अने आ पत्रिकानो उद्देश होय - 'प्राकृत भाषा अने जैन साहित्य विषयक सम्पादन, संशोधन, माहिती वगेरेनी पत्रिका'.

जेना पायामां परम वन्दनीय पूज्य आचार्यश्री विजयसूर्योदयसूरिजी महाराज साहेबना आशीर्वाद होय, परम आदरणीय भायाणीसाहेब, दलसुखभाई मालवणिया, जयन्त कोठारी अने भाषा-साहित्य संशोधन क्षेत्रना विश्वमान्य अनेक दिग्गज-मूर्धन्य विद्वानो रह्या होय, पू. आचार्यश्री विजयशीलचन्द्रसूरिजी म.सा.नी निश्रामां अनेक नवी पेढीना जैनसाधुजनो अने जैन-जैनेतर संशोधको आ विद्यातपने दीपावता रह्या होय अने कल्पनातीत अेवी अप्रकाशित सामग्री शुद्ध वैज्ञानिक दृष्टिकोणथी सम्पूर्ण प्रमाणभूत रीते संशोधित-सम्पादित थईने जेमां प्रकाशित थती रहेती होय, प्रकाशित थयेली सामग्री उपर पण अवलोकन, टीका-टिप्पण, शुद्धि-वृद्धि-संमार्जन थतुं रहेतुं होय अे आ समयनी अेक सांस्कृतिक घटना छे.

आजना युगमां कइंक अेवा विषम काळमांथी आपणे सौ पसार थई रह्या छीअे के जीवनना तमाम क्षेत्रोमां जाणे के सार्वत्रिक घेरी उदासीनतानी छाया फरी वळी होय अेवुं लागे छे. खास करीने उच्च शिक्षण अने साहित्यना क्षेत्रमां तो निष्ठापूर्वकनी संशोधनवृत्तिनो अभाव अने अेमांये मध्यकालीन जैन-जैनेतर संतसाहित्य, भक्तिसाहित्य, लोकसाहित्य, चारणी-बारोटी साहित्य, आदिवासी साहित्य, कंठस्थ परम्परामां के जूनी हस्तप्रतोमां सचवायेला लोकवाङ्मय, प्रशिष्ट-साम्प्रदायिक जैन के जैनेतर साहित्य तथा जुदी जुदी धर्मान्तरित प्रजाओना गुजराती गद्य-पद्य साहित्य विशे नवी पेढीना विवेचको-अध्यापको तद्दन उपेक्षाभरी नजरे जोता होय एवी सतत प्रतीति थती होय अेवा समये थोडुंक पण सारुं-प्रमाणभूत संशोधन-सम्पादन-प्रकाशन कोईपण संस्था के अभ्यासीना द्वारा थाय त्यारे अन्तरमां राजीपो थाय. आजे व्यक्ति व्यक्ति वच्चे अंतर वधतुं जाय छे. धर्म, जाति, प्रदेश, भाषा, कोम, सम्प्रदाय, पंथ, विचारधारा, साहित्यना विविध वाद के फांटाओ, राजकीय पक्षो, अेम मानव समाज विखरातो रह्यो छे. अेमां समये समये तिराडो मोटी ने मोटी थती जाय छे. जे साहित्यमां शिष्टता, विचारमण्डित सघनता, पारदर्शी प्रवाहिता, स्वाभाविकता, सादगी, सरळता, लाघव के मानवताभरी निष्ठा न होय अेवुं साहित्य समाजमां पोतानो शुं संदेशो आपी शके ? अने अेनुं आयुष्य केटलुं होय ? समग्र समाज उपर अेनी असर क्यांथी पडी शके ? वळी साहित्यने सर्वजनसुलभ बनावनारां साधनो-पुस्तको, सामयिको, वर्तमानपत्रो, रेडियो, टीवी, फिल्म, केसेट्स, सीडी, इन्टरनेट, जाहेर कार्यक्रमो वधतां ज रह्यां छे. अेटले सत्त्वशील साहित्यनी साथे राजसी अने तामसी प्रकृतिना साहित्यनो पण बहोळो प्रचार-प्रसार थया करे छे. केटलाक अपवादोने बाद करतां स्थायी मूल्य धरावनारा, शाश्वत टकी शके अेवा, भविष्यना समस्त मानवजातना हितनो विचार करनारा अने जेने प्रशिष्ट के सात्त्विक कही शकीअे अेवा साहित्यनो अंशमात्र नजरे नथी चडतो, अे जोईने कोईपण विचारशील मनुष्यने चिन्ता थाय. त्यारे अेक धर्मसंस्था द्वारा आवुं जीवनघडतरमां उपयोगी थाय अेवुं साहित्य संशोधित-संकलित थईने प्रकाशित थाय छे अे आश्वासन आपनारी घटना छे. आजना आ कारमा युगमां - ज्यारे जीवतरनां तमाम क्षेत्रो मात्र ने मात्र व्यावसायिक बनी रह्यां छे अने धर्म, शिक्षण, न्याय अने आरोग्य जेवां पूर्णतः पवित्र क्षेत्रोने पण लूणो लागी गयो छे त्यारे विचारशील मनुष्योनुं कर्तव्य अेटलुं ज के आपणी भविष्यनी पेढी सुधी

आपणो शुद्ध अने सात्त्विक ज्ञानवारसो जळवाई रहे अे माटे यत्किंचित् प्रयासो करता रहेवा, अने अे कार्य आजनी क्षण सुधी 'अनुसन्धान' द्वारा थतुं रह्युं छे.

जीवनना कोईने कोई क्षेत्रमां ज्यारे ज्यारे ओट आवे त्यारे अेनी खोटने भरपाई करवा, फरी अे क्षेत्रने चेतनवंतुं बनाववा माटे परमात्मा कोईने कोई व्यक्तिने निमित्त बनावीने मोकली आपे छे. पछी अे क्षेत्र धर्मनुं होय, सम्प्रदायोनुं होय, अध्यात्मनुं होय, साधनानुं होय, शिक्षणनुं होय, आयुर्वेद के आरोग्यनुं होय के पछी न्याय - कृषि - गोपालन - पर्यावरण सुरक्षा - वृक्षउछेर के वनीकरण - अहिंसा - जप - तप - दान - लोकसेवा - लोकविद्याओ - साहित्य - संगीत - कलाओ - प्राणीकल्याण - जळसंचय तथा अंधश्रद्धा, कुरूढिओ, कुरिवाजोनी नाबुदीनुं होय. केटलीक व्यक्तिओ अने केटलीक संस्थाओनुं सेवाकार्य समस्त मानवजातनी भविष्यनी पेढीओ माटे होय छे. अेमनी हयाती होय त्यां लगी अेमनी प्रवृत्तिओ विशे समाज पूरेपूरो सभान होतो नथी, ने अेमनां कार्योनुं कशुंये मूल्य नथी अंकातुं. पण सतनां बीजनुं वावेतर करनारा कोई मान-सन्मान-प्रतिष्ठाना अभिलाषी नथी होता. सतनां बीज तो पांगरे ज छे. अेना छोड वधीने कबीरवड सम थाय छे ने अेनां मीठां फळ भविष्यनी पेढीओने जरूरथी चाखवा मळे छे.

प्राचीन-मध्यकालीन साहित्यना अभ्यास अने संशोधननी उपेक्षाना समयमां पण आपणे त्यां गुजरातमां साहित्य, शिक्षण, संस्कार, सेवा, स्वाध्याय अने संशोधनमां कार्यरत अनेक संस्थाओ पोतपोतानी रीते काम करे छे. दरेकना उद्देशो, कार्यप्रणाली, अभिगमो विभिन्न होय अे स्वाभाविक छे, परन्तु भाषा-साहित्यना अणिशुद्ध उत्कर्ष माटे मथनारी संस्थाओ अने सम्पूर्ण सात्त्विक व्यवहारो धरावनारी व्यक्तिओ ओछी थती जाय छे अे हकीकत छे. साहित्य संशोधन क्षेत्रमां आजे अतिविकट कपरो काळ चाली रह्यो छे. जेना कलमनां लखाणो उपर आजलगी आपणे आंख मिंचीने विश्वास मूकी शकता हता, अने गुरु सम आदरमान आपीने तज्ज्ञ, मूर्धन्य, सत्यशोधक-नीडर-स्पष्टवक्ता... जेवां जेवां विशेषणोथी नवाजीने वन्दन करता हता अेवा मुरब्बी संशोधको पण आजे धर्म-पंथ-सम्प्रदाय-ज्ञाति-जाति-पक्ष-विचारधारा-प्रदेश-भाषानी कट्टरतामां पोतानी विश्वसनीयता खोई बेठा छे. अेवा समयमां पूज्य आचार्यश्री विजयसूर्योदयसूरिजी महाराज तथा पूज्य

आचार्यश्री विजयशीलचन्द्रसूरिजी महाराज द्वारा साहित्य अने संशोधनना क्षेत्रमां अेक अति महत्त्वनुं कार्य अे थयुं के, गुजराती भाषा-साहित्यना संशोधन/अध्ययन/अध्यापन साथे जोडायेला नवी पेढीना केटलाक सर्जको-संशोधको आपणा प्राचीन जैन-जैनेतर साहित्यनी दिशामां रस लेता थया. केटकेटली कलमो वहेती थई छे आ नानकडा सामयिक द्वारा ?... अने 'अनुसन्धान'ना माध्यमथी ज आपणा मूर्धन्य विद्वानो पं. श्री दलसुखभाई मालवणिया, श्री हरिवल्लभ भायाणी, श्री शांतिभाई शाह, श्री उमाकान्त शाह, श्री नगीनभाई शाह, श्री के. आर. चन्द्रा, श्री सत्यरंजन बेनरजी, श्री जयंत कोठारी, श्री मधुसूदन ढांकी, श्री लक्ष्मणभाई भोजक, श्री कनुभाई जानी, श्री लाभशङ्कर पुरोहित, श्री हसुभाई याज्ञिक, श्री वसन्तभाई परीख, डॉ. नलिनी बलबीर, डॉ. सागरमल जैन वगेरे भारतीय तथा विश्व कक्षाना विद्वानोने श्री हेमचन्द्राचार्य चन्द्रक अर्पण थया. गोधरा, महुवा, सुरत, तगडी अने अमदावादमां 'अनुसन्धान'ना माध्यमे योजायेला परिसंवादो तथा साहित्यगोष्ठिओ द्वारा केटलीये निष्क्रिय कलमोने फरी चेतनवंती बनाववानुं कार्य थतुं रह्युं. संशोधनक्षेत्रनी दुष्कर परिस्थिति अने विद्वानोनी कारमी अछतना समये संसारत्यागी-वीतरागी युवान साधु-साध्वीजीओ द्वारा सम्पूर्ण प्रमाणभूत अने वैज्ञानिक ढंगथी संशोधन/अध्ययन/सम्पादन अने प्रकाशनोना क्षेत्रमां अेक नवो ज प्रकाश जोवा मळ्यो.

'अनुसन्धान'ना अङ्को आनन्दआश्रम सन्तसाहित्य सन्दर्भ ग्रन्थालयमां सचवाया छे, वारंवार अवकाश मळ्ये फरीफरी अेना पर नजर नांखवानुं बने. जेटलीवार वांचीअे अेटलीवार कंईक नवो दृष्टिकोण नजर सामे आवे. कोई चोक्कस धर्म-पंथ-सम्प्रदाय-फांटा-शाखाना वाडामां बंधाया विना निर्भीकपणे मात्र सत्यने ज उजागर करवानी नेम साथे जे सम्पादन आजसुधी थतुं रह्युं अेनी प्रतीति दरेक अंकमां थती रही छे. आजसुधीना अङ्कोनुं विषयफलक अेटलुं विस्तृत छे के कोईपण विद्याशाखाना संशोधक अभ्यासी-विद्यार्थीने पोताना विषयमां निष्ठा अने सूझथी कई रीते काम करवुं अेनुं सचोट मार्गदर्शन मळी रहे. मध्यकालीन जैन-जैनेतर साहित्यमांनी अगणित हस्तप्रतो आजे पण अनेक हस्तप्रतभण्डारोमां सचवाई रही छे, पण अेनो पुनरुद्धार करनारुं 'अनुसन्धान'नी तोले आवे अेवुं अेक पण सामयिक मारी नजरे नथी आवतुं. प्रिय सन्मित्र मनोज रावल साथे

ज्यारे ज्यारे मळवानुं थाय त्यारे अेमना मनमां अेक ज वात वारंवार घुमराया करे : ''निरुभाई ! 'अनुसन्धान'मां प्रकाशित पू. आचार्यश्री शीलचन्द्रसूरिजीना दरेक सम्पादकीयनुं संकलन करीने अेक पुस्तक अवश्य तुरतमां ज थवुं जोईअे, जे कोई पण विद्याशाखाना संशोधनक्षेत्रमां अभ्यास करता संशोधक / विद्यार्थीओ माटे हेन्डबुक बनी रहे अेवी क्षमता धरावे छे...''

'नामूलं लिख्यते किञ्चित्' आधार विनानुं कंई पण न लखवुं. अे शास्त्रीय नियमनुं अनुसरण कठोरपणे बीजाने माटे करनारा इतिहासकारो पण मनुष्यसहज पूर्वग्रह, प्रमाद, अनवधान, असूया, ईर्ष्या, अदेखाई, लोभ, लालच, पद-प्रतिष्ठा, पैसो, ज्ञाति, जाति, कोम, धर्म, पंथ, सम्प्रदाय, विचारधारा, पक्ष, प्रदेश, भाषा... जेवी कोईने कोई कट्टर ग्रन्थि लईने ज्यारे आलेखन करे अने पोताना समकालीनो के पुरोगामीओना संशोधनमांथी नानकडी क्षति शोधीने मोटा पहाड जेवडी चितरे, पोतानी कोई मनघडंत-बनावटी तथ्यो ऊभां करीने - टूंकी दृष्टिना खेल करीने-सिद्ध करेली वातने कोई पडकारे त्यारे उश्केराई जईने-पोताने पडकारतां विधानोना प्रमाणभूत जवाबो आपवाने बदले निराधार तर्को द्वारा जुदा ज विषयनी चर्चा करीने वातने आडेपाटे चडाववानी कोशीश करे त्यारे अे केवा हास्यास्पद लागे छे अेनुं भान नथी रहेतुं. अेने अे याद नथी रहेतुं के आपणा पछी आवनारी भविष्यनी पेढीना संशोधको आपणाथी अनेकगणुं लांबुं जोई शकवाना छे. कारण के अे पुरोगामी विद्वानो तथा आपणा द्वारा थयेला संशोधनना खभा पर बेठा छे. अेनी नजर आपणाथी लांबी ज होवानी. वळी आजे तो केटकेटली संशोधन सुविधा अेमने माटे सहज प्राप्त होवानी. जगतभरना साहित्यसंशोधन-प्रवाहोथी अे क्षणभरमां परिचित थई शके. अेमना हाथनी मुठ्ठीमां रहेला मोबाईलना किबोर्ड अने आंगळीना टेरवे आजे केटकेटला ग्रन्थभण्डारो-हस्तभण्डारोना अमूल्य-अप्राप्य ग्रन्थो अक्षरशः खोली शके, वांची शके, प्रिन्ट काढी शके अने कोईने मोकली शके छे.

* * *

कबाटमांथी मारे त्यां सचवायेला 'अनुसन्धान'ना नंबर १६ (अेप्रिल २०००)थी ७४ (२०१८) अने आगळना १३ तथा १४ मळी कूल ६१ अङ्को बहार काढीने बेठो त्यारे मनमां हतुं के अेकवार खाली उपरछल्ली नजर नाखी

लईश. पण, अेम कांई आ शब्दचुंबक छूटे ? अेक अेक अङ्क हाथमां लउं ने पानां फेरवुं त्यां कोईने कोई पानां उपर नजर चोंटी जाय. हा, संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंशनी जैन-जैनेतर प्राचीन मूळ रचनाओ, जैन दर्शननी साम्प्रदायिक परिभाषा धरावती रचनाओ, अंग्रेजी लखाणो... वगेरे माटे आपणी मति-शक्ति खाडा खाबोचियांनी देडकी जेटली. पण दरेक अङ्कना आरम्भे ज लखायेल सम्पादकीय, कोई पण कृति विशे लखायेला स्वाध्यायलेखो, टूंकनोंधो, पत्रचर्चाओ, नवां प्रकाशनोनी माहिती, समकालीन सारी-माठी घटनाओनी नोंध, कार्यक्रम अहेवालो, विशेषांको अने आगळना अङ्क के अङ्को विशे परम आदरणीयश्री भुवनचन्द्रजी म.सा. द्वारा लखायेल विहंगावलोकन... अेम अनेकविध स्तरनी सामग्री चित्तने रोकी राखे, फरी फरी आखुं वांचवा मजबूर करे. अेम करतां पूरा बे दिवस ने रात सतत 'अनुसन्धान'मय रह्यो. बीजुं कशुं सूझतुं ज नहोतुं. वच्चे बे-चार महेमानो आव्या अेने चा-पाणी खाईने विदाय करवानी तलपापड मनमां रहेती. पीएच.डी. माटे अभ्यास करती अेक दीकरी जूनागढथी आवी, अेने जरूरी सन्दर्भग्रन्थोनो ढगलो करी दीधो अने कह्युं : 'बेन ! तारे उपयोगी होय अे पुस्तकोमांथी सामग्रीना फोटा पाडी ले, नोंध करी ले, अत्यारे तारी साथे विगतवार चर्चा करी शकुं अेवी मारा चित्तनी स्थिति नथी, हुं थोडुंक लेशन करवामां पड्यो छुं.'

आम सचवायेला अङ्कोनी संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, जूनी गुजराती, हिन्दी, अंग्रेजी अने वर्तमान शिष्ट गुजराती अेम सात सात भाषाओमां लखायेली सामग्रीमांथी अक्षरशः नहीं पण पानेपानुं फेरवीने पसार तो थई गयो पछी मूंझाणो. हवे आना विशे लखवुं शुं ? पू. महाराजसाहेब, भायाणीसाहेब, जयंतभाई कोठारी अने अन्य विद्वानो साथेनो आ समयगाळामां थयेलो पत्रव्यवहार जे मारा कोम्प्युटरमां टाईपसेट करीने राख्यो छे अेमां पण मारी नजर फरी वळी अने चित्त फरी अपार ग्लानिथी उभरातुं रह्युं. ओह ! केटकेटली उघराणीओ, केटकेटली शीखामणो, केटकेटला दिलासाओ... मारी पलायनवृत्ति, मारी आळस, मारी बेदरकारी, मारो प्रमाद... बधुं ज आंखो सामे तरवरतुं रह्युं. पहेलां तो मनमां हतुं के 'अनुसन्धान'ना अङ्को साथेनुं मारुं जोडाण, मारुं घडतर, केटकेटला विद्वत्जनो, बहुश्रुत पण्डितो, साधु-साध्वीजीओ, संशोधको, कवि-कलाकारोना प्रत्यक्ष परिचयमां अवायुं, अेमने

सांभळवानुं सद्‌भाग्य प्राप्त थयुं. नवां प्रकाशनो तथा तत्कालीन सारी-माठी घटनाओ विशेनी जाणकारी, पू. महाराजसाहेबना आदेशने कारणे पराणे पराणे पण 'अनुसन्धान'ना पानांओ पर छपायेली मारा नाम साथेनी सामग्री... अेम अेक आनन्ददायक विद्याप्रवृत्तिनी थोडी क स्मरणयादी आपी दईश, पण 'मानव जाणे में करुं... करतल दूजो कोई, आदरियां अधवच रहे, हरि करे सो होई...' न्याये कलममांथी शुं नीतर्युं छे अे तो खबर नथी पण अेक नानकडी भावअंजलि वागीश्वरना चरणोमां....

C/o. आनन्द आश्रम
घोघावदर (गोंडल)

* * *

'अनुसन्धान' : समृद्धि अने समन्वय

– छेलभाई व्यास

६०ना दायकामां बी.ए.ना अभ्यास निमित्ते डॉ. भोगीलाल सांडेसरा सम्पादित 'प्राचीन फागु सङ्ग्रह'मांनां चार विशिष्ट फागुकाव्योनो निकट परिचय थयो त्यारथी जैन कवीश्वरोनी कवित्वशक्ति अने शब्दवैभव रसरुचितन्त्र पर बहु ऊंडी असर करी गया. कदाच त्यारथी ज विपुल जैन साहित्य ग्रन्थ भण्डार निहाळ्यो अने थोडा समय पछी जेसलमेर ग्रन्थ भण्डारनां पण दर्शन थयां अने जैन साहित्यना वैभवशाळी वैपुल्यनो पूरो अेहसास थयो.

अभ्यासविषयक फागुकाव्योना अधिष्ठाता आचार्य स्थूलिभद्र, नेमिप्रभु के जम्बूस्वामीना अकल्प्य वीतरागभाव अने त्यागना अद्‌भुत प्रसङ्गो जीवनमां हमेशां सामे सामे रह्या. अेमांथी शीखेलो पाठ कायम माटे मार्गदर्शक बन्यो.

पछी तो वर्षोना वहाणां वाई गयां. अध्यापननिमित्ते हेमचन्द्रयुगीन साहित्य अने मध्यकालीन साहित्य पासे जवानुं बन्युं - पण अेक धन्य प्रसङ्गे मित्रोनी प्रेरणाथी सूरत मुकामे 'आनन्दघन' परिसंवादमां जवानुं सद्‌भाग्य सांपड्युं... अेक नवो ज अनुभव थयो. एक नवी दिशा खूली जाणे...

आ समारम्भमांथी परम श्रद्धेय पू. विजयशीलचन्द्रजी महाराजनी कृपादृष्टि सांपडी जे जीवननी अेक अनोखी मूडी बनी रही.

अेक बीजा प्रसङ्गे गोधरा उपाश्रयमां मध्यकालीन पद्यस्वरूपो परना सेमिनारमां पुनः पू. महाराजश्रीनुं सान्निध्य अने स्नेह सांपड्यां.

जैन मुनिवरोनी अेक विशेषता रही छे के तेओ तपश्चर्या साथे शब्दचर्या करता जाय छे, उपर्युक्त परिसंवादो अने अजस्र चालता अध्ययन द्वारा शब्द सेवातो हतो.

'अनुसन्धान' आवी सद्‌प्रवृत्तिमांथी जन्म्युं छे. अने अेणे पोतानी शोधयात्रा सुपेरे आगळ धपावी छे.

साहित्यनी दरेक प्रवृत्तिमां सामेल भाषाना उत्तम विद्वानो माटे 'अनुसन्धान'नी सम्यक् दृष्टि हमेशां रही छे. विशाळ दृष्टिथी अने पूर्ण औदार्यथी

जैन अने जैनेतर संशोधको, विद्वानोने अहीं निमन्त्रवामां आवे छे. सर्वश्री लाभशंकर पुरोहित, हसुभाई याज्ञिक, निरंजन राज्यगुरु, मनोज रावल, नाथालाल गोहिल - आ बधां नामो अहीं आदरपूर्वक लेवाय छे. सर्वश्री कनुभाई जानी, वसन्त परीख जेवा विदग्ध विद्वानोने जैनधर्मी होवा - न होवानो ख्याल कर्या विना सर्वोच्च सन्मानो अपायां छे.

कोई व्यापक-विशाळ दृष्टिपूत व्यक्ति ज्यारे संशोधन पत्र शरु करे त्यारे कोई वाडाबन्धी तो होय ज नहि, अेनो उत्तम दाखलो 'अनुसन्धान' मुखपत्र छे.

'अनुसन्धान'ना हरअेक अङ्कमां प्रगट थता, उभराता साहित्य-संशोधन पर नजर नाखीअे तो ख्याल आवशे के अहीं साहित्यनी केटली मोटी सेवा थई रही छे.

'अनुसन्धान'मां अभरे भरेला साहित्यनी समृद्धि विशे विद्वानो विगते लखशे...

अहीं तो आ विरल मुखपत्रनी गरिमा अने एना प्रेरकनी सूक्ष्मैक्षिका दृष्टिने वन्दन करीने धन्यता अनुभवीअे....

* * *

आशीर्वचन

अनुसन्धान (शोधपत्रिका) ने शुभाशीर्वाद

अमदावादथी विद्वान आ. श्रीविजयशीलचन्द्रसूरिजी द्वारा सम्पादित तथा प्रकाशित थती आ शोधपत्रिका संशोधनक्षेत्रमां कोई जुदी ज छाप पाडनारी पत्रिका छे.

अेना चालु अङ्को तो खरा ज पण विशिष्टअङ्को तो खास करीने विद्वानोनी जिज्ञासाने सन्तृप्त करनारा होय छे अने वारंवार वांचवानुं मन थाय तेवा होय छे.

माननीय श्री हरिवल्लभ भायाणीना सम्पादनथी जेनो प्रारम्भ करवामां आव्यो छे अे अनुसन्धानना अङ्कोअे श्री भायाणीजीनी गेरहाजरीमां पण अेनुं स्तर जाळवी राख्युं छे ए आनन्दनी वात छे.

आ विषयना निष्णात विद्वानो संशोधनात्मक लेखो मोकली आ पत्रिकाने समृद्ध करता रहे अेवी अमारी भलामण छे. ७४ अङ्क पर्यन्त अकबंध रहेली आ पत्रिका ज्यारे ७५मा अङ्कमां प्रवेशे छे त्यारे अमे तेने अन्तरना आशीर्वाद पाठवीअे छीअे तथा तेनो सदाकाळ जयकार इच्छीअे छीअे.

सं.-२०७४ प्र. जेठ-वद ३ — **आ. विजयहेमचन्द्रसूरि**
ता. १-६-२०१८ (देवान्तिषद्)

शुभकामना

पू. आ. श्री वि. शीलचन्द्रसूरिजी म.

सविनयं वन्दनानि सन्तु ।

– अनुसन्धानाङ्कोऽयं ७५तमः प्रकाशयिष्यते इति ज्ञातम् । अद्ययावत् ७४ अङ्काः प्रकाशिताः । सर्वेषु अपि अङ्केषु नूतनाः एव, अप्रकाशितपूर्वाः एव कृतयः ।

एतत्प्रसङ्गे संशोधनलेखं तु न प्रेषयामः । तत्कृते पर्याप्ता सज्जताऽपि नाऽस्ति नः । केवलं वयम् अनुमोदयामः हार्दम् । उच्चैश्च स्वागतं व्याहरामः ।

यद्यपि अनुसन्धानाङ्कगतं सर्वं वयं न पठामः, तथापि विहङ्गावलोकनेन विलोकयामः अवश्यम् ।

'कच्छ-कीर्तन' नामके अस्मदीये आगामिपुस्तके अनुसन्धानतोऽपि काश्चित् कृतयः स्वीकृताः सन्ति सकार्तज्ञ्यम् । एवम् अनुसन्धानाङ्काः इमे भाविकालेऽपि उपयोगिनो भविष्यन्ति ।

– सर्वेभ्यश्चः वन्दनानि ।

विजयमुक्ति-मुनिचन्द्रसूरी

नडीयाद, प्र.ज्ये.कृ. ३

१-६-२०१८

*

अनुसन्धान पत्रिका

७५ वें अङ्क के प्रकाशन पर सभी को हर्षानुभूति होना स्वाभाविक है । अनेक कृतियों और कृतिकारों से परिचित कराने वाले साहित्य में 'अनुसन्धान' का स्थान उच्च है ।

साहित्य के प्रचार-प्रसार में श्री हेमचन्द्राचार्य ट्रस्ट उद्यमवंत बना रहे... यही शुभाभिलाषा...

मणिगुरुचरणरज

आर्य मेहुलप्रभसागर

वि.सं. २०७५ आषाढ वदि १२

उज्जैन

विद्वान शिरोमणी,

पू. आ. भग. श्री शीलचन्द्र सू. म. नी सेवामां सादर-सविनय वंदना. 'अनुसन्धान' पत्रिका ७५मा मुकामे पहोंचे छे ते जाणी खूब खुशी थई. वर्षो पहेलां ''जैन सत्यप्रकाश''ना अङ्को वांच्या हता. ते पछी 'अनुसन्धान' जोयुं के जेमां इतिहास, संशोधन, अवनवी माहिती, खूणामां छूपाईने पडेली नवी जाणकारी, अवनवा स्तोत्रो, विज्ञप्तिपत्रोनी मबलख वातो वांचवा मळी...

वर्तमानमां जैनशासनमां आवा मासिको - मुखपत्रो खूब जूज छे. आपे - आपना शिष्योअे खूब महेनत करी ७५ अङ्क सुधीनी यात्रा तय करी.

आप बधानी आ साधनानी खूब अनुमोदना.

अेक खेडूतनी महेनतथी खेतरमां उगेलुं अनाज अनेकोना पेटनी भूखने ठारे छे. आपनी महेनत आवा प्रकारनी छे. खूब अनुमोदना - शुभेच्छा.

पद्मबोधिविजय
रतलाम
१७, जुलाई २०१८

*

'अनुसन्धान'नो ७५मो अङ्क बहार पडी रह्यो छे, अे जाणीने खूब खूब आनन्द थयो छे. प्राचीन साहित्यना खजानाने खोळवो-फंफोसवो - तेनुं संशोधन-सम्पादन करीने तेना अर्थी जनो सुधी, शणगारीने पहोंचाडवुं-आवुं काम- आवो विषय पकडीने करनारा बहु ज विरल आत्माओ जोवा मळे छे. एक रीते आ काम धूळधोया जेवुं गणाय - अे काममां पडनारो गुमनामीमां फेंकाई जाय - अेवी हालतमां पण तमोअे आवुं कठिन अने खूब ज उपयोगी अेवुं काम शरु करीने ७५मा अङ्क सुधी पहोंचाड्युं - अे बदल खूब-खूब धन्यवाद सह अन्तरना भावथी अनुमोदना करुं छुं. तमोने तेम ज आमां सहयोगी सौ कोईने - दरेकने फरीथी अभिनन्दन.

लि. **रत्नभूषणसूरि**

वापी-२०७४, अषाढ सुदि १२
मंगळवार, ता. २४-७-२०१८

सम्पादकश्री,
'अनुसन्धान'
पूज्य गुरुदेवना चरणोमां शतशः वंदना,

'अनुसन्धान'नो ७५मो अङ्क प्रकाशित थई रह्यो छे ते बदल हृदयपूर्वक अभिनन्दन सह अनुमोदना. आगामी अङ्क माटे लेख मोकलवानुं लख्युं ते माटे आभार. अनुसन्धानना अङ्कोमां अप्रकाशित कृतिओने हस्तप्रत उपरथी प्रकाशित करीने ते पण शुद्ध स्वरूपे पाठ-पाठान्तर साथे, ते तेनी आगवी ओळख छे. अप्रगट अेवा विज्ञप्तिपत्रो अेक साथे आटली मोटी संख्यामां भारतभरना ज्ञानभण्डारोनी हस्तप्रतमांथी शोधीने आपे प्रकाशित कर्या ते भगीरथ कार्यनी साथे संशोधन-सम्पादन माटे विशिष्ट जरूरी अेवा सूचन-मार्गदर्शन पण अनुसन्धानमां प्रकाशित थाय छे. ज्ञानभण्डारमां साचवीने राखेला जूना अङ्कोनी पण घणा बधा पूज्यो तरफथी मोटी संख्यामां मांगणी आव्या करे छे ते तेनी उपयोगिता अने क्वोलिटी बतावे छे.

बाबुलाल सरेमल शाह
'सिद्धाचल बंग्लोझ', सेन्ट आन्स स्कूल,
हिरा जैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-३८०००५

*

आदरणीय
श्री शीलचन्द्रजी महाराज साहेब
वडोदराथी राजेशनां सपरिवार वन्दन !

अनुसन्धाननी यात्रा ७५मां अङ्क सुधी पहोंचे छे अे आनंदनी वात छे. आरम्भमां भायाणीसाहेबनुं मार्गदर्शन अने सळंग आपनी अतन्द्र कार्यनिष्ठा तथा विद्याप्रीतिनुं अे सु-फळ छे. साधुवाद !

वडोदरा, १०-७-२०१८ **राजेशना वन्दन**

सम्पादकश्री,
'अनुसन्धान'

आदरणीय महोदय,

नमस्कार

'अनुसन्धान' पंचोतेरमा मुकामे पहोंची रह्युं छे ते जाणी खूब आनन्द थयो. आप सौ 'अनुसन्धान' द्वारा सम्पादन, अनुशीलन अने समीक्षा – अेम त्रणे प्रकारथी आपणा भारतीय ज्ञान-वारसानी बहुमूल्य सेवा करी रह्या छो, ते खूब गौरवनो विषय छे अने आप सौने हुं हार्दिक अभिनन्दन पाठवुं छुं.

आप मने नियमितपणे 'अनुसन्धान' मोकलो छे ते बदल कृतज्ञता व्यक्त करुं छुं. मारी नादुरस्त तबियतना लीधे हमणां हुं लेख वगेरे मोकली शकुं अेम नथी, तो क्षमा करशो. संशोधन अने विद्याविमर्शना क्षेत्रे 'अनुसन्धान' सदाय उत्तरोत्तर प्रगति-प्रकर्ष पामे अेवी मंगल-कामना करुं छुं.

धन्यवाद सह,

भवदीय

सुरेश उपाध्याय

निदेशक, अनुस्नातक अने संशोधन विभाग

भारतीय विद्या भवन

मुंबई

शुभकामना

पूज्य शीलचन्द्रजी अने आदरणीय ने प्रिय नाना महाराजो,

शुद्ध विद्याने वरेला साहित्यनुं प्रकाशन अे कोईपण समाजनी बुद्धिपरायणतानी अेक पाराशीशी गणाय. गुजराती भाषा भणेला भाषकोनी संख्यानी वृद्धिना प्रमाणमां गम्भीर ज्ञान-परिशीलननी प्रवृत्ति विकसी नथी - जथ्थानी दृष्टिअे तेम गुणवत्ताना मापे पण. आ परिस्थिति आपणा विकासशील जमानानी अेक निराशाजनक विलक्षणता बनी छे. खेर, आवी परिस्थितिमां पण विद्याव्यासंगनी केटलीक ज्योत दीपी रही छे तेनो थोडो सन्तोष आपणे लई शकीअे तेम छीअे. जैनपंथना साधुओनी विद्यापरम्परा गुजरातनुं गौरव छे. जे केटलीक दीवावाट आजे पण संकोराई रही छे तेमां 'अनुसन्धान'नुं स्थान अग्र छे. विजयशीलचन्द्रसूरिजी अने अेमनुं नानुं अेवुं तेजस्वी शिष्यमण्डळ जे विद्या-उपासना करी रह्युं छे अे कोई मातबर विद्यासंस्थानुं गौरव मागे तेवुं छे. अे तरुण प्रतिभाओ कठण धर्माचरणनी साथोसाथ विद्याव्यासंग केळवे अे अेमनी तीव्र ज्ञानपिपासा सूचवे छे. पण मध्यकालीन साहित्य-सामग्रीनां सम्पादनो करवां, तात्त्विक मुद्दाओ पर अभ्यासलेखो लखवा - अे बधी विद्याप्रवृत्ति तो कोई साधनसज्ज विद्याधाममां बेसीने थई शके अेवी आपणी समजने अेक बाजु मूकवी पडे अेवी अेमनी पद्धति आश्चर्य पमाडे. सतत प्रयाण चालतां होय त्यारे सन्दर्भनां अनेक साधनो साथे न राखी शके अेवी परिस्थितिमां संशोधन-अभ्यासो चाले ए आजना जमानामां गळे न ऊतरे अेवी वात छे. प्रातःकाळे पदयात्रा शरु थाय अने नानां नानां मुकामो करता जाय, दिवस दरमियान पण अनेक रोजिंदी कामगीरीओ आ परिव्राजकोने रोकी राखे, सन्ध्या पछी वांचवुं-लखवुं दुष्कर बने : आवी समय-संकडाशमां एमनो विद्याव्यासंग कई रीते चालतो हशे, सन्दर्भो तपासवा-चकासवानो, जातजातना कोशो जोवानो अेमने अवकाश क्यारे मळतो हशे तेनुं आपणने आश्चर्य थाय. विपुल सामग्री चपटी वगाडतां लभ्य होय, वाचन-परिशीलन माटे बधी सुविधाओ हाजराहजूर होय अेवी परिस्थितिथी टेवायेला आपणा अभ्यासीओने आ नित्य-रझळतां साधु-साध्वीओअे पोते निर्मेला शोधन-कीमिया जाणवानी जिज्ञासा न थाय तो ज नवाई. सुविधाओनी भरमार वच्चे, संसारनी अनेक कामगीरीओमांथी मुक्ति पामीने

संशोधन नामे प्रवृत्ति करवी, अने आ साधु-समुदाय कोई पद-प्रसिद्धिनी आकांक्षाथी वेगळो विद्याव्यासङ्ग चलावे अे बे ध्रुवसमी वात छे. विद्या-उपासना माटे आ साधुजनोअे पोताना खपनी सरळ पद्धतिओ विकसावी हशे तेमां विद्यारसिकोने चोक्कस रस पडे. अेवो परिचय अेक लेखस्वरूपे शीलचन्द्रजी पासेथी आपणने मळे अेवी आशा सेववानुं आ टाणुं छे.

कोई विद्याप्रवृत्ति मजलना अेक पडावे आवीने थोभे, खुदने अवलोके, अने नवा खांभा क्यां खोडवा अे विशे विचारे अे अस्थाने नहीं गणाय. अे अंगे एक-बे वात :

अेक तो, 'अनुसन्धान' अेक सामयिक छे, अने सामयिक प्रकृतिअे ज अल्पजीवी होय छे. अेनी जाळवणीनी चुस्त रसमो व्यक्तिगत अभ्यासीओ तो अनुसरी नथी ज शकता, आपणी घणीखरी ग्रन्थालय-व्यवस्थाओ पण अेवी जाळवणीनी काळजी दाखवती जोवा नथी मळती. 'अनुसन्धान'नी सामग्री बेशक दीर्घ अस्तित्व मागी ले अेवी छे; मात्र तेना सामयिकी स्वरूपने कारणे ज अे सामग्री अल्पजीवनने हवाले जाय अे वात न रुचे अेवी छे. आमांथी अेक सूचन अेवुं उद्‌भवे के प्रगट थयेला पंचोतेर अङ्कोमांथी पसंदगीनी सामग्री ग्रन्थस्थ करवी. बीजुं, 'अनुसन्धान'नुं भावि स्वरूप ज अेक वार्षिक ग्रन्थनुं राखवाथी सामयिकना अनिवार्य अल्पजीवनथी बची शकाय.

बीजी वात : सामयिकोने पुस्तकरूपे रजू करवानी टेकनोलोजी पण अत्यारे जबरदस्त परिवर्तन पामी रही छे. मुद्रित सामग्रीनी अेक जग्याअेथी बीजी जग्याअे हेरफेर अे अेक मोटी असुविधा रही छे. तेनो उकेल 'इन्टरनेट' रूपे लभ्य छे. अनेक सामयिको अने पुस्तको 'डीजीटल' स्वरूपे लभ्य बनतां होवाथी तेनो प्रसार अनेकगणो अने खूब सरळ बन्यो छे. 'अनुसन्धान' डीजीटल स्वरूपे इन्टरनेट पर मुकाय तो अे जगतना कोईपण खूणे तत्क्षण पहोंची जाय - आ शक्यता रोमांचकारी तो लागे ज. पण, आ विद्यापरिपाक मात्र १५० नकलमां ज समाइ जाय अे केवुं ? अेमांनी केटली नकल तेना खरा वाचको पासे पहोंचती हशे ? परिस्थितिनी केवळ कल्पना ज करीअे : 'अनुसन्धान' डीजीटल स्वरूपे दुनियाने खूणेखूणे ज्यां जैन अभ्यासीओ हशे त्यां आपोआप पहोंचशे ! केटला बधा वाचको - मात्र अधिक ज नहीं, जे खरेखर जिज्ञासु हशे अेवा वाचको -

'अनुसन्धान'नो परिपाक पामी शकशे ! शक्यता रोमांचकारी नथी?

'अनुसन्धान'नुं पंचोतेर पछीनुं प्रयाण वधु सार्थक अने विस्तृत बनो अेवो शुभ भाव आ सूचनो प्रेरे छे.

जयन्त मेघाणी
४०२, 'सत्त्व', ग्रीन पार्कनी बाजुमां,
फूलवाडी, भावनगर-३६४००२
मो. ९८९८००७१३०

*

आपश्रीजी अने विशिष्ट विद्वान् हरिवल्लभ भायाणी साहेबे प्रारम्भेली आ सरस्वतीनी उपासना अविरत चालु छे अने हवे ७५मा पडाव उपर आ यात्रा पहोंची छे. आ अेक विशिष्ट कक्षानी ज्ञानोपासना खरेखर श्रमसाध्य अने आनन्दप्रद छे. अनुसन्धानना सम्पादकोने जेटला अभिनन्दन आपीअे तेटला ओछा छे. प्राकृत-संस्कृतभाषामां अने विशिष्ट गणी शकाय अेवी रसाळ-प्रौढशैलियुक्त कृतिओ आमां वांचवा मळे छे. अनेक चिन्तनसभर लेखो पण आ पत्रिकामां रजू थाय छे. विविध उत्तमसामग्रीथी भरपूर आ पत्रिका माटे अहोभाव सहज प्रगटे तेवुं छे.

विज्ञप्तिपत्रो-विज्ञप्तिलेखोना अङ्को जे प्रकाशित थया ते खरेखर अेक विशिष्ट कक्षानुं कार्य कही शकाय.

सम्पादकना लेखो-संशोधन अंगेनी माहिती आ बधुं सहज स्फुरणारूपे प्रगट थतुं होय छे. पत्रो-विहंगावलोकन अेमांथी पण अेक दृष्टि मळे तेवुं होय छे. घणी कृतिओना अर्थो मारा जेवाने पण समजाता नथी पण कृतिओनी रचना-संशोधनशैली आ बधुं जोतां नवुं नवुं शीखवा मळे छे.

आपणी आ सरस्वतीनी सुमधुर यात्रा शीघ्र १००मा पडावे पहोंचे अने अे शताब्दीमहोत्सवने जाणवा-माणवा मळे अेवी अन्तरनी शुभकामना व्यक्त करुं छुं.

लि. **साध्वी चन्दनबालाश्री**
जेठाभाई पार्क, पालडी, अमदावाद

विहंगावलोकन

— उपा. भुवनचन्द्र

जैन स्तोत्रसाहित्यमां अभिवृद्धि करती बे सुन्दर रचनाओ अनुसन्धान-७४मां स्थान पामी छे. बंने अनेकार्थी कृतिओ छे, ए दृष्टिए अनेकार्थक साहित्यमां पण बे विशिष्ट कृतिओनो उमेरो थाय छे. कमलबद्ध जिनस्तवनमां ६४ वार 'सारंग' अने ६४ वार 'हरि' शब्दनो उपयोग थयो छे. आ बे शब्दना अनेक अर्थ थाय छे, ए अर्थोने भिन्न भिन्न विशेषणोमां अवनवी कल्पनाओ द्वारा गूंथी लइने तथा श्लोकनी पंक्तिओमां पुनरावर्तन पामता अक्षरोने कर्णिकामां गोठवीने चित्रकाव्यनुं सर्जन करवामां आव्युं छे. श्लोकना चरणोमांथी एक-एक अक्षर लई २४ जिनेश्वरोमांथी बार जिनेश्वरनां नाम बने छे अने ए नामोथी वळी एक श्लोक बने छे. साथे श्रीहीरसूरिजीनुं तथा कविनुं नाम पण बने छे. आ श्लोक तथा पंक्ति कृतिना अंते अलग आपेला छे. चरणमांथी क्या अक्षर लेवा ए कदाच कमलबंध बनाववाथी जणाइ आवतुं हशे. बधां चरणो विशेषण छे तथा द्वितीया विभक्तिनां छे. अन्तिम श्लोकमां विशेष्य अने क्रियापद होवा जोइए पण ते जो के देखाता नथी.

बीजी अनेकार्थी रचनामां 'गौ' शब्दनो २४ अर्थमां विशेषणोमां प्रयोग करी प्रभुस्तुति करवामां आवी छे. रचना व्याकरणदृष्टिए शिथिल अने काव्यदृष्टिए क्लिष्ट छे. कर्ताना विद्यार्थीकाळनी रचना होय एवो संभव छे.

कुलमण्डनसूरिकृत समस्याश्लोकोमां अन्तिम श्लोकमां समस्या छे ते प्रहेलिका प्रकारनी छे. आनो उकेल अंशतः 'माळा' - जपमाला जणाय छे परंतु पूरी संगति थती नथी. पाठकोमांथी कोईने आनो उत्तर सूझे तो जणाववा कृपा करे.

सत्तरभेदी पूजानी परम्परा प्राचीन छे. लोकोनी भाषामां गीत-संगीतमय पूजाओनी रचना प्रारम्भ थई तेमां सर्वप्रथम सत्तरभेदी पूजा रचाई हशे एवुं मानी शकाय. श्रीसकलचन्द्रजी म. रचित सत्तरभेदी पूजा प्रसिद्ध छे. ए पूजाथी पण पहेलां आ पूजानी रचना एकथी वधारे कविओए करी छे. सोलमा शतकमां श्री पार्श्वचन्द्रसूरिए सत्तरभेदी पूजा रची छे. बीजी आवी पूजा आ अंकमां प्रगट थई छे, जेना कर्तानुं नाम अज्ञात छे. पूजा संक्षिप्त छे, ढालो एक ज राग अने एक ज

कडीनी छे. पुराणा समये पूजा संस्कृत श्लोकबद्ध रहेती. श्लोकोनो पाठ/गान थाय अने अभिषेक आदि थाय. तेनी असर हेठळ एक कडीनी पूजाओ रचाई होय एवुं अनुमान थई शके. देश्य भाषानुं महत्त्व वध्युं अने शास्त्रीय राग-रागिणीमय संगीतनो प्रचार वध्यो त्यारे रागबद्ध पूजाओ शरू थई, ते पण एक-बे कडीनी ज रहेती. धीरे धीरे पूजानी रचना विस्तृत अने वैविध्ययुक्त बनी.

बीजी पूजा हाल अप्रचलित छे परन्तु एना समये ए खूब लोकप्रिय हशे. एमांनी जलपूजानी बे कडीओ आजे पण अभिषेक-शान्तिस्नात्रादिमां बोलाय छे.

श्रीसकलचन्द्र वाचकनी एक अप्रगट रचना आ अंकमां बहार आवे छे. रचना कर्मसिद्धान्तविषयक छे. शास्त्रीय विषयोने लोको सुधी पहोंचाडवानुं काम आ प्रकारनी रचनाओ द्वारा विद्वान मुनिवरोए जे रीते कर्युं छे ते उल्लेखनीय छे. शास्त्रीय पदार्थो पद्यबद्ध करवाथी ते कण्ठस्थ करवा सुगम थाय, आथी मध्यकालमां आवी रचनाओ विपुल प्रमाणमां थई छे. आवी कृतिओमां प्राकृत शब्दोनो छूटथी उपयोग थतो होवाथी मारुगूर्जर भाषा होवा छतां ए भाषानी एक आगवी मुद्रा जन्मी हती.

कवि ऋषभदास कृत 'जिनपूजाफलस्तवन' एक लाक्षणिक रचना छे. प्रभुदर्शन-वन्दन-पूजननुं फल अथवा रात्रिभोजन आदि पापोनुं फल आंकडाओमां वर्णवती आवी रचनाओ मध्यकाले अस्तित्वमां आवी छे. कर्मसिद्धान्त साथे तेनो सीधो सम्बन्ध बेसे तेम नथी. महिमास्थापन अने भय उत्पादन अर्थे एक काळे आवी पद्धति अपनाववामां आवी हती. तात्त्विक दृष्टिए आवा तोल-माप इष्ट नथी, अने सम्भवित पण नथी.

'विजयसिंहसूरीश्वर पद महोत्सव रास' एक ऐतिहासिक अने चरित्रात्मक रचना छे. वाचना शुद्ध छे केम के रासनी रचना अने लेखन वच्चे एक ज वर्षनुं अंतर छे तथा लखनार लिपिकार मुनि कविना निकट व्यक्ति छे.

ढाल १८नी देशीनी पंक्तिमां वाचनभूल छे. 'हिअयहीं डोलडइ' वांच्युं छे, त्यां 'हिअय हींडोलडइ' एम वांचवुं संगत थाय.

C/o. जैन देरासर
नानी खाखर-३७०४३५
जि. कच्छ, गुजरात

* * *

एक दुर्लभ प्रतिमालेख

— उपा. भुवनचन्द्र

बादशाह अकबरे 'दीने इलाही' नामे एक नूतन धार्मिक पंथ के सम्प्रदाय स्थाप्यो हतो, अने आवा ज नामनो संवत पण शरू कर्यो हतो - जेनी खबर बहु ओछा लोकोने हशे. दीने इलाही पंथ ई.स. १५४८मां स्थापेलो, ज्यारे संवत्नी शरुआत पोताना राज्याभिषेकना वर्षथी - ई.स. १५५५ थी - करी होवी जोईए एवो निष्कर्ष अन्य आधारोंथी विद्वानोए काढ्यो छे. जो के आ संवत् लांबो समय चाल्यो नहीं. ७२ वर्ष सुधीना उल्लेखो मळे छे, पछी नथी मळता.

बादशाह अकबर विविध धर्मना गुरुओ / पण्डितो साथे धर्मचर्चा करता. श्री जिनचन्द्रसूरि, श्री विजयहीरसूरि, वा. शान्तिचन्द्र-सिद्धिचन्द्र तथा उपा. पद्मसुन्दर साथे बादशाहना परिचय तथा तेमनी प्रेरणाथी करेलां सत्कार्योनां दस्तावेजी प्रमाणो मळे छे.

जैन संघोनी एक स्वस्थ परम्परा रही छे के जे समये जेनुं राज्य प्रवर्तमान होय ते राजानुं नाम नवा बंधाता देरासरमां अथवा प्रतिमाजीना लेखमां लखवुं. आ परिपाटी अनुसार मुस्लिम शासको - बादशाह, नवाब, सूबा - नां नाम शिलालेखोमां लखायां छे. अकबरना सम्बन्धमां विशेषता ए छे के तेमणे चलावेला संवत्नो पण शिलालेख-प्रतिमालेखमां एटली ज सहजताथी उल्लेख थयो छे. आ लेखन कोई शिल्पी के श्रेष्ठीए करी नाखेलुं एवुं न मानवुं, कारण के संस्कृतमां लखायेला आवा लेखोनुं लखाण विद्वान मुनिओ ज करता हता. जो के इलाही संवतना प्रतिमालेखो बहु जूज मळे छे. आवा एक दुर्लभ प्रतिमालेखनी माहिती आ स्थळे आपवी छे.

हळवदना जिनालयमां आवा प्रतिमालेखयुक्त मूर्ति विराजमान छे. मोटा देरासरना मूलनायक श्रीवासुपूज्यस्वामी छे अने ते श्रीविजयसेनसूरिजी द्वारा प्रतिष्ठित छे. देरासरना परिसरमां बीजुं नानुं जिनालय छे, तेमां मूळनायक श्रीशीतलनाथ भगवान छे. आ प्रतिमाजी थोडा वर्ष पूर्वे गाममांथी ज खोदकाम करतां नीकळ्या छे. आ प्रतिमाजीनो लेख इलाही संवतनो छे.

लेख मूर्तिनी बेठकमां, पण पाछला भागे छे, जे प्रतिष्ठा थई जवाथी वांची शकाय तेम नथी; परन्तु प्रतिष्ठा वखते अथवा प्रतिमाजी नीकळ्या त्यारे सुज्ञ श्रावकोए लेखनी छबी पाडी लीधेली अने संघ पासे ते सचवाई छे. हळवद संघना कार्यकर्ताओना सौजन्यथी ए छबी (फोटो) जोवा-वांचवा मळी. संघनी अनुमतिथी ए लेख सम्पादित करी अहीं रजू कर्यो छे. साथे साथे श्रीवासुपूज्यस्वामीनो लेख (ए पण प्रतिमाजीना

पाछला भागे होवाथी) ठीक ठीक महेनते वांचीने अहीं आप्यो छे.

आनाथी इलाही संवतना दुर्लभ लेखोमां एकनो उमेरो थाय छे. साथे साथे जैनाचार्योनी दीर्घदृष्टि, समभाव, उदारताना पावन दर्शन पण थाय छे. परदेशी मूर्तिभंजक आक्रामको भारतमां आवीने मूर्तिओनुं भंजन करतां करतां छेवटे अहीं स्थायी थया अने भारतनी सर्वसमावेशक संस्कृतिना रंगे रंगाई शांत थया. अनुक्रमे ए विधर्मी शासकोए मन्दिरोना निर्माण माटे भूमिदान पण कर्यां, अनुदान अने अनुमति पण आपता थया; क्रमे क्रमे मूर्तिओनी पलांठी नीचे एवा मूर्तिभंजकोनां नाम पण लखायां! भारतीय संस्कृति अने जैन संस्कृतिनी आ अद्‌भुत परिणति छे अने मानवसभ्यतानी दृष्टिए तेनुं अपार महत्त्व छे.

*

श्रीशीतलनाथ भगवाननी प्रतिमा परनो लेख

(फोटा उपरथी)

पातिसाहि श्री अकबर प्रवर्तित संवत् ४१
वर्षे फागुण सुदि ११ गुरुदिने श्री हलवद
राजधाने वास्तव्य श्रीश्रीमाली ज्ञातीय वृद्ध
शाखायां दो० डूंगर भार्या रमाइ तत्पुत्र दोशी
पदमा स्वश्रेयोर्थं श्री शीतलनाथबिम्बं
कारापितं प्रतिष्ठितं श्री ५ श्री विजयहीर
सूरिपट्टालंकरण श्री ५ विजयसेनसूरिभिः ।

भाषान्तर :

''बादशाह श्री अकबरे प्रवर्तावेला संवत् ४१ना वर्षे फागुण सुदि ११ गुरुदिने श्री हलवद राजधानीना वासी श्रीश्रीमालीज्ञातीय वृद्ध शाखामां दोसी डूंगर, तेनी भार्या रमाई, तेना पुत्र दोसी पदमाए स्वश्रेयार्थे श्री शीतलनाथनुं बिम्ब भराव्युं, श्री हीरविजयसूरिना पट्टालंकार श्री विजयसेनसूरिए प्रतिष्ठित कर्युं.''

इलाही संवत् ४१ ए वि.सं. १६५२ थाय छे. अने ई.स. १५९५ लगभग थाय.

*

हलवदना मोटा देरासरजीना मूलनायक श्री वासुपूज्यस्वामीनी प्रतिमानी बेठकमां आगळना भागे थोडा अक्षरो छे, जेमां संवतनो अने प्रतिमा भरावनारनो उल्लेखमात्र छे :

सं. १६१४ वर्षे वैशाख सुद चोथे हा. (दो.?) मेघा वर्धमान.

प्रतिमाजीना पाछळना भागे पूरो लेख छे. प्रतिष्ठा थतां लेख दबाई जशे अने वंचाशे नहि एवुं लागवाथी सुज्ञ श्रावकोए प्रतिष्ठा वखते अथवा पछीना कोई समये संवत-तिथि-नाम टूंकमां आगलना भागे कोतराव्या होय एम लागे छे. पाछळना भागे राळ-सिमेन्ट-कचरो लागेला हता ते शक्य एटला दूर करी जेटलुं वांची शकायुं तेटलुं वांची लेख ऊतारी लीधो छे.

श्री वासुपूज्य स्वामीनो लेख

संवत १६१४ (? १६२४ / १६६०)* वर्षे ... ज्ञातीय दो. वर्धमान त भार्या... वना (पना) त सुत दो. मेघा ... वासुपूज्यबिम्बं प्रति. श्री तपागच्छे... विजयसेनसूरिभिः ।

भाषान्तर

''सं. १६१४ (१६६० पण लागे छे) वर्षे ... ज्ञातिना दो. (दोशी) वर्धमान, तेनी पत्नी ... तेना पुत्र दो० मेघाए वासुपूज्य भगवाननुं बिंब ... अने तपागच्छमां आ. विजयसेनसूरिए प्रतिष्ठा करी.''

C/o. जैन देरासर,
नानी खाखर-३७०४३५,
कच्छ

* * *

* श्रीविजयसेनसूरिजीना सूरिपद नी हकीकत जोतां आ लेख संवत् १६६० नो होय ए ज उचित जणाय छे. — **शी.**

भारतीय संस्कृतिना पुरोधा : ऋषभदेव

– विजयशीलचन्द्रसूरि

भगवान ऋषभदेव.

भारतवर्षना आदिपुरुष : आदिनाथ : बाबा आदम : अदबद दादा !

आदम, Adam अने संस्कृतना 'आदिम' आ त्रणे शब्दो अेक ज कुळ-मूळना होय, अने अेक ज 'आदिपुरुष' माटे प्रयोजाया होय, अे विषे हवे शङ्का राखवाने कोई ज कारण नथी.

आदमनो वंशज ते आदमी. आदमनो पूर्वज ते पण आदमी ज. अे त्यारे – ते काळे ते समये प्राकृत अथवा प्राकृतिक अवस्थामां जीवतो हतो : निर्बन्ध, निःस्पृह, निष्पाप ! अेने सांस्कृतिक बनावनार पुरुष ते आ आदिपुरुष आदिनाथ.

प्रकृतिना आदिम के पछी सनातन वहेणने संस्कृतिमां ढाळवानुं युगवर्ती अने पराक्रमी काम अे आदिनाथे कर्युं. अेमणे भाई अने बहेनने एकमेकना भोग-साधन बनतां निवार्यां, अने स्त्री-पुरुषना सम्बन्धोमां पवित्र मर्यादानुं अेक तत्त्व रोप्युं. आ पवित्रतानी अने मर्यादानी रखेवाळी अेमणे 'समाज'ना शिरे स्थापी, अने समाज तेनो निर्वाह करी शके अे माटे तेमणे 'लग्न' के 'विवाह'नी व्यवस्था आपी.

आ अेक क्रान्ति हती : प्रकृतिने संस्कृतिमां रूपान्तरित करनारी क्रान्ति.

समाज-रचना साथे अनेक तत्त्वो संकळातां होय छे : भय, अपराध, दण्ड, न्याय-अन्याय, क्षमा, नियमो वगेरे. आ बधांयने सांकळी ले तेवुं अेक परिबळ ते नीति. आदिपुरुषे जगतने 'नीति' शीखवाडी. कोईअे कोईनी वस्तु, वृक्षो, जमीन, स्त्री वगेरे पडावी न लेवुं; अेवुं करे तो ते अपराध बने, अेवो अपराध करे तेने दण्ड थाय – आ नीति. समाजमां सौमनस्य अने सामंजस्य बनी रहे अे आ नीतिनो लाभ कहो के फळ होय छे. नीति सदाचार अने दुराचार वच्चे भेद आंके छे. नीति सज्जन अने दुर्जननो तफावत पण स्पष्ट करी आपे छे. दुराचरण अने दुर्जनता ते असामाजिक बाबतो होवानुं नीतिना नियमो द्वारा सूचित थाय छे. आ बधुं आदिनाथे शीखव्युं.

आ आदिपुरुषे मनुष्यने कन्दमूळभक्षीमांथी अन्नाहारी बनाव्यो. अेनी आदिम अने प्राकृत गणाती टेवोने संस्कारी आपी. अेने अेमणे खेती शीखवी. अन्ननी ओळख आपी. गाय अने वृषभनुं मूल्य समजाव्युं. अन्न उगाडतां अने पछी ते पकवतां शीखवाड्युं. 'अग्नि'नो अने तेनी क्षमतानो, उपयोगितानो तथा विनाशकतानो परिचय कराव्यो. अग्निनो संयोग अन्नने केवी रीते 'प्राण'शक्तिरूपे परिणमावे छे ते पण दर्शाव्युं.

अेमणे खातां अने पचावतां पण शीखव्युं. अेमणे पाणीनो उपयोग अने पाणीनी शक्तिने नाथवानी रीत शीखवाड्यां. पाणीना उपयोगना साधनलेखे कुम्भारकर्म पण शीखवाड्युं. तेनी कथा बहु रसप्रद छे. आदिपुरुष ऋषभदेव हाथीना होद्दा पर सवार थईने पर्यटने नीकळ्या. वाटमां समाजना अगणित लोकोनी अणसमज तेमज तेमनी अव्यक्त आवश्यकता भणी तेमनुं ध्यान गयुं. तेमणे खेतरमांथी काळी माटी मंगावी. पाणी लीधुं. अेक विशाळ पात्रमां माटी लई तेमां पाणी उमेरी तेने रोंदी, अने मजानो पिण्ड बनाव्यो. पछी पोताना ज हाथ वती ते माटीना भीना पिण्डमांथी अेक मजानो आकार सरज्यो. अे हतो आ विश्वनो आदिम घडो. अेमणे ते घडाने अग्निनी आंच अपावीने पकवी दीधो. अने पछी तेमां पाणी भरी बतावतां लोको आश्चर्यचकित ! आदिनाथ, आ रीते, आपणा युगना आदिम कुम्भार बन्या !

हा, अे कुम्भार हता, लुहार हता, सुथार हता, विश्वकर्मा हता, शिल्पकार अने चित्रकार हता, खेडूत हता अने रसोइया पण हता. समाजना जीवन-निर्वाह माटे जे जे बाबतोनी आवश्यकता पडी शके ते तमाम बाबतोनां सघळां साधनो अने सर्व विधि-विधानोनुं निर्माण तेमणे करी आप्युं.

अेमणे अक्षरो आप्या. लिपि शीखवाडी. संदेशाव्यवहारनी प्रणालिका रची. अेमणे राज्य-व्यवस्था आपी. गाम, नगर अने देशोनी व्यवस्था पण करी आपी. स्वाभाविक रीते ज आ व्यवस्थामां युद्ध अने शस्त्र-अस्त्रोनी व्यवस्था पण आवे ज. अेमणे समाजने विविध वर्गोमां अने विभागोमां विभक्त कर्या. दरेक वर्गने तेनी योग्यताने अनुरूप काम वहेंची आप्युं. दरेक विभागने तेनी पोतीकी मर्यादाओ शीखवाडी. अे मर्यादामां रहीने अन्य बधा वर्गो-विभागो साथेनुं सामंजस्य जाळवीने आखो समाज चाले तेनी गोठवण तेमणे करी.

संस्कृतिना केन्द्रमां संस्कार अथवा संस्कारिता होय छे. प्रजाना घडतर माटे अे संस्कारो बहु महत्त्वनो भाग भजवे छे - अेम आजे आपणे जाणीअे छीअे. आदिमानव माटे अे नवीन अने अगोचर प्रदेश हतो. आ आदिपुरुषे आ युगना आरम्भे सौप्रथम प्रजा-घडतरनुं मंडाण कर्युं. तेमणे स्त्री-उचित चोसठ कळा अने पुरुषोचित बहोंतेर कळाओ प्रवर्तावी. लोक-मानसना शिक्षणनो-संस्करणनो तथा घडतरनो आ अेक नवतर छतां सांगोपांग सम्पूर्ण प्रकार बनी रह्यो.

आदिपुरुष ऋषभदेवे, आम जुओ तो, शुं शुं न कर्युं ? अेक संस्कृति अथवा अेक सभ्य समाजनी रचना कहो के निर्माण, अेने माटे जे पण भूमिका अनिवार्यपणे आवश्यक होय ते बधी ज भूमिका तेमणे निरमी, पूरी पाडी.

अने आ रीते थयां भारतनी सभ्यतानां मंडाण.

*

अेक परिपूर्ण संस्कृतिनां बे अंगो होय छे : भोग अने त्याग. बन्ने अंगो एकबीजानां पूरक छे. भोगविहोणा त्यागमां पराक्रमनी छांट नथी होती. अने त्यागमां पर्यवसित न थनारा भोगमां विकृति सिवाय कशुं नथी होतुं. त्यागीने भोगवो, अने भोगवीने त्यागो - संस्कृतिनुं चक्र आ रीते गति करे छे.

आदिनाथ ऋषभदेवे भोग अने उपभोगना व्यवहारोने अनुकूळ अेवी बधी ज बाबतो जेम आपी, तेम तेमणे अे बधांनो त्याग केवी रीते करवो, अने त्याग अे भोगोपभोगथीये अधिक उपयुक्त तथा मूल्यवान छे अेनी समजण पण आपी.

जे पळे अेमने लाग्युं के हवे पोतानुं समाज प्रत्येनुं दायित्व तेमज कर्तृत्व पूरुं थयुं छे, ते ज पळे तेमणे समग्र भौतिकताना त्यागनो निर्धार कर्यो. तेना प्रतीकरूपे अेक वर्ष सुधी तेमणे प्रजाजनोने यथेष्ट दान आप्युं. अने अेक दहाडो तेओ माता-पुत्र-पत्नी सहित समग्र परिवारनो, समाजनो, राज्यनो, सत्ता-संपत्तिनो त्याग करी, पोताना जन्मजात प्राकृतिक शुद्धरूपमां वर्तता चाली नीकळ्या. तेमना अे त्यागनुं सांस्कृतिक नामाभिधान थयुं : दीक्षा, प्रव्रज्या.

अेकाकी, असहाय (नि:सहाय नहि), आत्ममस्त अे आदिपुरुषनो आ त्याग-वैभव अने मौन-वैभव, तेओ ज्यां ज्यां विहर्या त्यां त्यां सहुने माटे अचंबानो

अने आकर्षणनो विषय बनी रह्यो.

तेमणे त्याग केम थाय ते शीखव्युं. दीक्षा अेटले शुं ते दर्शाव्युं. चारित्र के संयम के साधुतानी चर्या केवी अघरी-आकरी होय अने छतां ते केटली सहजताथी आचरी शकाय ते पण बताव्युं. भूख्या-तरस्या रहीने आनन्दभेर जीववानी कळा ते तप कहेवाय ते पण तेमणे मौननी भाषामां समजाव्युं. अने छेल्ले, 'दान' अेटले शुं, अने मुनिने दान केवी रीते अने शेनुं अपाय ते पण प्रयोगात्मक रीते देखाडी दीधुं.

अेक परिपूर्ण संस्कृतिनी संरचनानो अे अन्तिम उपक्रम हतो, अेम कही शकाय; अने अेना प्रणेता हता दादा ऋषभदेव : बाबा आदम !

*

युगोना युगो सुधी वही गया आ संस्कृति-सर्जननी घटनाने. परन्तु अे आदिपुरुष आपणी वच्चे आजे पण जाणे जीवे छे ! ज्यां ज्यां नजर करो, त्यां अे आदिपुरुष आपणने देखाशे.

चाकडा उपर माटीनो पिंडो लगावीने भ्रमणक्रिया द्वारा घडा जेवा पात्रनुं निर्माण करता कोई कुम्भारने जोइअे ने आदिनाथ देखाय. रंधो मारतां सुथारने जुओ के पत्थरने घाट आपतां शिल्पीने जुओ, आपणने अे आदिपुरुषनां सुभग दर्शन थशे. हळ साथे बे वृषभने जुतीने खेतरमां हळ हांकतां हांकतां भजन गाये जतां को'क खेडूत तरफ नजर नाखशो के आदिपुरुषनी झलक सांपड्या विना नहि रहे. रे ! ज्यां ज्यां संस्कृति छे, त्यां त्यां मारो आदिपुरुष बेठेलो ज छे !

सदेहे भले अे न जडे, पण संस्कृति-देहे सदा विद्यमान, नित्यनूतन अने छतां परम पुरातन अे पुरुष काले हतो, आजे छे, अने आवतीकाले होवानो ज.

*

अने तेथी ज, युगयुगान्तरो वीत्या छतांये अे आदिपुरुष माटेनुं आकर्षण, आजे पण, अदम्य छे, असामान्य छे. आ आकर्षण आपणा जेवा अज्ञान माणसोने ज छे अेवुं नथी. वेद अने पुराणोना प्रणेता ऋषि-मुनिओने पण अेमनुं आकर्षण अेवुं ज - अजोड - रह्युं छे. जुओ —

अमृतलाल नागर नामना श्रेष्ठ हिन्दी साहित्यकारे, पोतानी अेक पौराणिक

नवलकथा (उपन्यास)मां, राजपुरोहित ऋषि वशिष्ठना वंशजना मुखे, आदिनाथ माटे आवा शब्दो उच्चराव्या छे :

''महाराज इक्ष्वाकु के पूर्वज महान् द्वादश आदित्यों के महान् मातामह कुल में जन्मे स्वायंभुव मनु के प्रपौत्र, महाराज नाभि के यशस्वी, महामति, जितेन्द्रिय, आत्मज्ञानी, निःसंग, नग्न, त्रिगुणविरहित परमहंस पुत्र ऋषभदेव'' (एकदा नैमिषारण्ये - पृ. ४८, २०१५)

तो जैनवेद तथा आर्यवेद तरीके ओळखानारा वेद-ग्रन्थोमांनो अेक वेदमन्त्र 'आचारदिनकर' नामना ग्रन्थमां सचवायेलो मळे छे, तेमां आ आदिपुरुष माटे प्रयुक्त विशेषणो आवां छे :

आदिमोऽर्हन्, आदिमो नृपः, आदिमो यन्ता, आदिमो नियन्ता, आदिमो गुरुः, आदिमः स्रष्टा, आदिमः कर्ता, आदिमो भर्ता, आदिमो जयी, आदिमो नयी, आदिमः शिल्पी, आदिमो विद्वान्, आदिमो जल्पकः, आदिमः शास्ता, आदिमो रौद्रः, आदिमः सौम्यः, आदिमः काम्यः, आदिमः शरण्यः, आदिमो दाता, आदिमो वन्द्यः, आदिमः स्तुत्यः, आदिमो ज्ञेयः, आदिमो ध्येयः, आदिमो भोक्ता, आदिमः सोढा, आदिमः एकः, आदिमोऽनेकः, आदिमः स्थूलः, आदिमः कर्मवान्, आदिमोऽकर्मा, आदिमो धर्मवान्, आदिमोऽनुष्ठेयः, आदिमोऽनुष्ठाता, आदिमः सहनः, आदिमो दयावान्, आदिमः सकलत्रः, आदिमो निष्कलत्रः, आदिमो विवोढा, आदिमः स्थापकः, आदिमो ज्ञापकः, आदिमो विदुरः, आदिमः कुशलः, आदिमो वैज्ञानिकः, आदिमः सेव्यः, आदिमो गम्यः, आदिमो विमृश्यः, आदिमो विमृष्टः''...

चौदमा शतकना ग्रन्थमां संकलित आ मन्त्रमां आदिपुरुष आदिनाथजीनी सघळीये लाक्षणिकताओ अभिव्यक्त पामी छे, अेटले आ मन्त्र पण आकर्षणनो विषय बने छे.

'ऋषभतर्पण' नामनी, १७मा सैकानी अेक अपूर्व रचनामां आदिनाथजी दादा माटे आवां विशेषणो जोवा मळ्या छे : *''आदिपुरुषाय प्रथमभूपतये श्रीनाभिजन्मने वृषभध्वजाय श्री मरुदेवोत्सङ्गसङ्गिने''*।

भक्तामर स्तोत्रना उद्गाता कवि मानतुङ्गाचार्य तो वळी आ आदिपुरुषनी स्तवना उपनिषदना ऋषिनी भाषामां करे छे :

त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांसं
आदित्यवर्णममलं तमसः परस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र ! पन्थाः ॥

सार अेक ज : आदिपुरुष माटे कविनी कल्पना अने भक्तनी भक्ति क्यारेय थाकी नथी, थाकवानी पण नथी.

*

दादा ऋषभदेवना जीवनने केन्द्रमां राखीने श्रीमतीबहेन टागोर नामना चित्रकारे छ अद्‌भुत चित्र-फलको निर्म्यां छे. ते चित्रो पालीताणा म्युझियममां कायमी धोरणे प्रदर्शित छे.

श्रीमतीबेन टागोर मूळे जैन, अमदावादना हठीसिंह केसरीसिंह परिवारनां. तेओ लग्न बाद टागोर कुटुम्बनां बन्यां हतां. स्वयं मोटा गजानां चित्रकार हतां. अेमणे पश्चिम भारतनी जैन चित्रशैलीमां पोताना आधुनिक अने छतां मनभावन अने गरिमापूर्ण कला-संस्पर्शनुं संमिश्रण कर्युं, अने अतिदिव्य कही शकाय तेवां छ पूरा कदनां चित्रो आलेख्यां. अे चित्रो मूळे भारतीय लघुचित्र-शैलीना विस्तरणरूप तथा आधुनिक संस्करणरूप हतां. ऋषभदेवनी, आ लेखमां नोंधी छे ते तमाम, आदिम प्रक्रियाओ आ चित्रोमां तादृश आलेखी बतावी छे.

आ आदिपुरुषनां चरण-चिह्नो क्यां क्यां विखेरायेलां के पथरायेलां जोवा मळे छे, अे पण जोवा जेवुं छे. मूर्ति तो कदाच बहु मोडेथी बनी हशे अेमनी, पण अेमनां पगलां ज्यां पड्यां हशे त्यां अेमनां चरण-चिह्नो अवश्य अंकित थयां हशे, अने तेनी उपासना आदिकाळथी आज पर्यन्त चाली रही छे.

दादा ऋषभदेव तक्षशिला - बहली देशना आंगणे पधारेला अने दीकरो बाहुबली तेमने मळे ते पहेलां तेओ त्यांथी विहरी गया. ते पछी आवेला अने तेमना विरहनी आगमां शेकाईने कारमुं कल्पान्त करी उठेला बाहुबलीनी अे चीस जाणे आ क्षणे पण आपणा काने अफळाय छे ! अेणे दादानां पदचिह्नो पर जे पीठ रची अने जगत आखुं निरन्तर अे पदचिह्नोने निहाळी-पूजी शके तेवी योजना करी, ते विश्वना कोईक प्रदेशे आजे पण मौजूद होवानी प्रतीति मळ्या करे

छे. जैन आचार्योअे ते स्थळने **धर्मचक्रतीर्थ**ना नामे पिछाण्युं छे. आजे ते अन्य कोई नामे ओळखातुं हशे. तेनो अधिकार तथा तेनी उपासना पण अन्योना हाथमां हशे. परन्तु ते उपासना पद्धतिमांथी अेक जीवहिंसाना तत्त्वने काढी नांखवामां आवे तो ते समग्र पद्धति जैन उपासनानी पद्धति साथे विलक्षण कही शकीअे तेवो तालमेळ धरावती होवानुं जाणी शकाय तेम छे. एम लागे छे के दादा ऋषभदेव साथे अे प्रजानो निकटनो नातो हशे.

श्रीलंका पासेनो Adams Peak तरीके जाणीतो ऊंचो पहाड, ते पर टोचे प्रस्थापित Foot Prints चरण-चिह्न जेनां छे ते 'आदम' कोण ? आदिपुरुष ज तो ! ते पहाड पण पवित्र मनायो छे. अमूक नियमोपूर्वक ज अने पगपाळा पगथियां चडीने ज त्यां पहोंची शकाय छे. अे स्थाने जवानो अधिकार कोई अमुक वर्गने ज भले होय, परन्तु अे बधा पण आदिपुरुषना ज चरणसेवक होवानुं मानीअे तो आपत्ति शी ?

अने आपणो शत्रुंजय-पहाड तो आपणे त्यां केटलो बधो जाणीतो अने पवित्र मनायो छे ! तेनी टोच पर आदिप्रभु ९९ वार आव्या अने तेनी स्मृतिमां रायण-सिद्धवड वृक्ष नीचे अेमनां पगलां के चरण-चिह्न निर्माण पाम्यां, ते तो आजे पण त्यां पूजाय छे ! दादानी देहप्रमाण प्रतिमानुं निर्माण जो शक्य न होय, तो तेमना विशाळ चरणोनी छाप तो साचवीअे ज - आवा कोई भाव साथे ज अे पद-चिह्नो सचवायां हशे ने ?

आम, दादा आदिनाथनां चरण-चिह्नो विश्वमां अनेक स्थाने अेक या बीजा नामे-स्वरूपे आजे पण विद्यमान छे अने पूजाय छे, अे केटलुं अद्‌भुत गणाय !

* * *

जैन स्रोतनी रासनी कृतिओ : स्वरूप-सन्दर्भ

– डो. हसु याज्ञिक

मध्यकालीन गुजराती साहित्यनी कथाश्रयी जाति, Narrative genre मां समाती कृतिओने आपणुं विवेचन, स्वरूप Formनी दृष्टिअे मुख्य स्वरूपमां चर्चे छे : १. रास, २. आख्यान, ३. पद्यवार्ता अने ४. अैतिहासिक प्रबन्ध. Genre and Formनी दृष्टिअे आ चारेय स्वरूपो अंगे क्यांक केटलीक विसंगति तो क्यांक केटलीक अतिव्याप्तिनो दोष छे, ते हवे स्पष्ट करवो जरूरी बने छे. क्यारेक तो जाति के प्रख्यात अेटले के Genre अने तद्जन्य अने संलग्न अेवा स्वरूप अेटले के Form वच्चेनो मुख्य भेद रहेतो नथी, क्यारेक तो अेक जातिना ज पेटा प्रकार तरीके ज जेने गणीने चालीअे, चालता आवीअे अे पोते ज अेक जाति मांहेनी पेटाजाति होई शके छे. आवुं बन्युं छे जैनस्रोतनी रासप्रकारनी जातिमां, जेमां 'रास' पोते ज अेक जाति छे, अेवी जाति के प्रकार जेनां गान-कथनरूप कृतिना माध्यम तरीके 'रासक' अेटले के जे मात्रामेळ छन्दना बन्धनने गानना स्वरूपमां ढाळवा माटे शिथिल करवामां आव्यो छे छन्दाधारित गान ढाळ. आ दृष्टिअे तो 'आख्यान' पोते ज रास पण छे, मात्र जैनस्रोतनी कथाश्रयी कृतिओ ज नहीं. वळी, केटलीक मनोरंजक दुहा-चोपाई बन्धनी कृतिओ पण अेवी छे जेना मूळ दोहा, सोरठा, उलाला, हरिगीतादि पण गानढाळमां छे ते पण रास छे.

आवी विसंगतिना मूळमां मने शङ्का छे के क्यांक जाति Genreनी विभावना ज धूंधळी छे. आथी आरम्भमां ज अेना अंगे केटलीक स्पष्टता जोईअे. आपणी साहित्यमीमांसा, साहित्यशास्त्र के मूळ संस्कृत पर्याय 'काव्यमीमांसा' अेटले के व्यापक अर्थमां कलामीमांसा, पाश्चात्य पर्याय प्रमाणे Poetics नो वर्गीकरणनो मुख्य आधार के सूत्र अे रह्युं के बहुसंख्य अेवी कला-साहित्यनी कृतिओनुं प्रकारोमां विभाजन-वर्गीकरण करीअे. आम करवामां कला के मात्र साहित्यनी जे बहुसंख्य अेवी कृतिओ Works रचाई तेने कोई अेक मुख्य समानताने आधारे जुदी पाडीअे. आ रीते ज जे वर्गीकरण थयुं तेने 'जाति' संज्ञा-पर्याय अपायो. संगीतकलानुं दृष्टान्त लइअे तो अेमां कई रचनाओमां कुल सात (कोमळ-तीव्र उमेरता कुल बार नाद ध्वनिओनो अेकम Scale) स्वरोमांथी

केटली संख्याना स्वरो प्रयोजाया छे, तेने आधारे जाति-प्रकारनुं निश्चितीकरण थयुं. पूर्ण भाववाही सक्षम रचनामां ओछामां ओछा पांच मुख्य अेवा जुदा जुदा स्वरो प्रयोजाया अेने ओडव जाति, छ प्रयोजाया अेने षाडवजाति, सात अेटले के बधा ज स्वरो प्रयोजाया अेने सम्पूर्ण जाति कहेवामां आवी. आमां केटलीक रचनाओ अेवी पण हती जेमां आरोह-अवरोहे स्वरसंख्या भिन्न हती तेमने ओडव-षाडव, षाडव-सम्पूर्ण अेवी पैटा जातिमां मूक्या.

आम जाति-प्रकार अे वर्गीकरणनुं पहेलुं पगलुं अने पछी बीजा विभागीकरणमां बार स्वरूपोमांथी कया स्वरस्वरूपो प्रयोजाया छे तेना आधारे 'थाट'मां विभाजन थयुं अने ते पछी त्रीजा तबक्के अेनुं मुख्य रागमां अने अेमां पण जोवा मळेला राग-रागिणीनां कुळने लक्षमां लेवाया जेना आधारे ज पछी अेवा भिन्न भिन्न नादसमूहो, ध्वनिअेकमोना, स्वरलगावना धोरणने लक्षमां राखीने शताधिक रागरागिणीओनां स्वरूप, अेनां Forms निश्चित थयां.

आ दृष्टान्त संगीत-कलानुं छे. परन्तु अेमां ज कलामात्रनुं शास्त्र Poetics छे. आपणो सीधो सम्बन्ध साहित्य साथे छे. अेटले वर्गीकरण अने तद्संलग्न स्वरूपोने पण प्राकृतिक अेवा सम्बन्ध बधी ज कलाओ साथे छे. साहित्यसन्दर्भे Poeticsनो व्यवहारु अर्थ साहित्यनुं ज शास्त्र अेवो करीअे छीअे. केम के काव्य Poetryनी ज विभावना आपणने अभिप्रेत छे. हकीकते Poetics अेटले कलाशास्त्र, कलामीमांसा, मात्र साहित्यमीमांसा नहीं. संस्कृत पर्याय 'काव्य' अेटले आजे जेने 'साहित्य' अेवी संज्ञाअे ओळखीअे छीअे ते अेमां जेनो समावेश आपणे कवितामां नथी करता अेनो पण समावेश छे अने मीमांसा के Poetics, आर्यमूळनी ज कलाओनुं आ पूर्व अने पश्चिममां प्रवर्ततुं स्वरूप छे. अेटले के पश्चिमनुं Poetics होय के भारतनी मीमांसा, बन्नेनी प्राचीनतम मूळ विभावना समान छे. ग्रीसना अने भारतना बन्नेनां कलाशास्त्रो, अेनां धोरणो, आधारो, वर्गीकरणो, औचित्यादिना नियमो समकालीन अने समान्तरे चाल्या छे. ग्रीकना होमरादि कविओनी लोकव्याप्त कृतिओना आधारे अॅरिस्टोटले जे कंई कलामीमांसा चर्ची, सिद्धान्तो आप्या अेना पण पहेलां भारतमां मतन्गादि ऋषिओनी कलामीमांसा आरंभाई चूकेली. अॅरिस्टोटल तो होमर पछी त्रणसो वर्षे थयो अने Poetics बांध्युं अने अे अन्य द्वारा आगळ वध्युं, अे पहेलां ज भारतमां अेनी तत्त्वविचारणा थई चूकेली. कोइ अेक निश्चित

उत्कटता ऊंचाई धरावतो नाद अेनी बमणी ऊंचाइअे पहोंचे त्यारे क्यां क्यां अे श्रव्य रूपे परखाय अे भरतमुनिअे प्रयोगथी बताव्युं अे ज काळे ग्रीसमां पायथागोरसे पण अे प्रयोग-मथामणे सिद्ध करेलुं. भरत अने अेना नाट्यशास्त्र पहेलां ज भारतमां आवी नृत्य-नाट्य-संगीतादिनी मीमांसानी परम्परा बंधाई चूकी हती अने नृत्य नाट्य तथा रसादिनी स्पष्टता थई चूकी हती. अॅरिस्टोटले जे ग्रीक ट्रेजेडीनी चर्चा करी, तत्त्वविचारणारूपे सिद्धान्तो बांध्या अे पहेलां ज रस, औचित्यादिना मूल्याङ्कनना सिद्धान्तो भारतमां शास्त्रबद्ध थई चूकेला जेना आधारे ज भरत, भामहादिअे तत्त्वचर्चा आगळ वधारी.

'रास' विशे पण आपणे मीमांसादृष्टिअे त्रिचार्युं तेमां धर्मतत्त्वने जूदुं न राखी शक्या अे छे. खरे ज समजवानी आवश्यकता-अनिवार्यता अे छे के प्राचीन भारतीय आर्यो अने प्राचीन ग्रीकोअे ज्यारे पण कला-मीमांसानुं शास्त्र बांध्युं त्यारे अेमने पण संगीत, नृत्य, नाटक साहित्यादि कलाओनी परम्पराओनां रूपो अने प्रस्तुतीकरणो लोकोमांथी मळेलां अने आवी कलाओनो सीधो सम्बन्ध धर्मपरम्परा साथे ज हतो, छतां कलापदार्थने आ बन्ने आर्य परम्पराओअे Secular Art ना सन्दर्भे ज तपासी छे. आज 'सेक्युलर'नो जे अर्थ-विभावना छे ते नथी परंतु धर्मादि परम्परा, सिद्धान्त, मान्यता, प्रवर्तनहेतु आदिथी मुक्त अेवी कला-विभावना. ग्रीक परम्परा के भारतीय आर्य परम्परा होय, बन्नेअे मीमांसामां Secular Artनुं ज धोरण राख्युं. अेनो अर्थ धर्मविहीन के रहित अेवो नथी, अेथी सम्पूर्ण मुक्त अने स्वतन्त्र कला अेवो छे. नवा अर्थमां Pure Art. आ लक्षण छेक हेमचन्द्राचार्यमां पण जोवा मळशे. क्यांय कोई सन्दर्भे एमणे कलाचर्चामां धर्मपरम्परा अने संलग्नताने दृष्टिमां राख्यां नथी. आवुं ज वैदिक स्रोतना तेमना पूर्वेना मीमांसकोमां जोवा मळशे.

मने लागे छे के आमां क्यांक कोई सूक्ष्म विवेक आपणे चूक्या छीअे अने शुद्ध कलाधोरणने दृष्टिमां राखी शक्या नथी. जो के अेनो अर्थ अे नथी के कलाप्रवाह अने धर्म बन्ने अलग ज राखवाना छे. आपणुं जे कंई प्राचीन-मध्यकालीन साहित्य बच्युं, मळ्युं अे धर्मपन्थना ज प्रवाहमांथी. आथी ज ज्यारे आवी तत्त्वचर्चा मांडीअे त्यारे सेक्टेरियन अने नॉन-सेक्टेरियन, अर्थात् धर्मपन्थ-संलग्न अने धर्मपन्थ-मुक्त अेवो प्रवाह. अेनी सामग्रीने आधारे ज्यारे शास्त्र

बंधाय त्यारे आ बन्नेनां कलास्वरूपोने तो केवळ सेक्युलर आर्टना धोरणे ज तपासवां जोईअे. आवुं थयुं होत तो 'रास' स्वरूपदृष्टिअे अेक जैनस्त्रोतना ज प्रकार-स्वरूप रूपे जूदो ज पंगतमां बेसाडवो न पडत. जो के आम थयुं अेनां मुख्य बे तत्त्वनिष्ठ कारणो छे : अेक तो आपणा प्राचीन मीमांसको पण मूळ संस्कृत परम्पराने वळगी रह्या, मुख्य आधाररूप मानता रह्या. परिणाम अे आव्युं के पाली-अर्धमागधी अने अन्य प्राकृत प्रकारोनुं नवुं Poetics न रचायुं. संस्कृतनी पूर्वमीमांसाने ज मुख्य अने आधारभूत मानी, प्रशिष्ट मानी. प्राकृतोपरांत अपभ्रंशना भाषा अंगने तपास्युं ने एनां व्याकरण रचायां परंतु प्राकृत-अपभ्रंशमां पण जेवा-जेटला नवां नवां स्वरूपो विकस्यां अेने मीमांसामां न समाव्या. अेक ज मोटुं दृष्टान्त चरित-काव्यो अेनी कृतिओ अने स्वरूपनुं छे. आख्यायिका अने महाकाव्यनी मीमांसामां चर्चा छे, चरितनी अेक विकसित सक्षम नवा प्रकार-स्वरूप तरीके नथी. होय क्यांक, तो मारी जाणमां आवी नथी.

हकीकत अे छे के प्राचीनतम भारतीय कथासाहित्यमां, अेनी Narrative Genre मां प्राचीन वीरचरितगाथामांथी अन्ते महाकाव्य स्वरूप दाखल संसिद्ध थयुं अने अेमां पण शुद्ध साहित्यिक स्वरूपाङ्ग धरावता महाकाव्यना स्वरूपथी महाभारत जेवी कृतिमां जे 'ऐपिक ऑव् ग्रोथ्व'नुं संकुल स्वरूप छे ते संस्कृत-प्राकृतना पश्चिमना विद्वानोअे दर्शाव्युं छे. परंतु सामान्य अेवी वीरगाथामांथी महाकाव्य केवी रीते विकास पाम्युं, अेनी उत्पत्तिनी प्रक्रिया - evolution स्पष्ट नथी थयुं. खरेखर तो स्थळे स्थळनी वीरगाथाओना वास्तविक मनाता वीरोनी गाथाओनुं वेदमां इन्द्रसूक्तना रूपमां रूपान्तरण थयुं, स्थानिक अनेक वीरोना पात्रोनुं इन्द्रमां प्रतीकीकरण थयुं, अेमना 'साका' (पराक्रमगाथा)नुं वेदसाहित्यनां इन्द्रसूक्तमां रूपान्तर थयुं अने अेमांथी ज काळक्रमे महायुद्धो, वंशवेरनां विनाशक परिणामो परनी गाथाओमांथी ज मे अेपिक ऑव् ग्रोथ अने अेपिक संसिद्ध थयां. वीरगाथा, 'साका' अेटले के अेक पराक्रमगाथा अेना गान अने विकास अने महाकाव्यरूप सर्जनो थयां. आमां महाकाव्यनां ज मुख्य तत्त्वो, व्यावर्तक लक्षणो, अेनी व्याख्या वगेरेनुं मीमांसामां विशद स्पष्टीकरण - चर्चा थयां, जे भोजना 'शृङ्गार-प्रकाश' अने हेमचन्द्राचार्यना 'काव्यानुशासन'मां स्वरूपगत लक्षणो साथे चर्चायां. हेमचन्द्राचार्य सन्धिबन्ध, शब्दवैचित्र्य, अर्थवैचित्र्य जेवां मूळ तत्त्वोनी

विशद छणावट करे छे तेमां ज सामान्य अेवी ख्यात वीरगाथाना हेतुमां अने अेनी शैलीमां, निरूपणरीतिमां जे साहित्यिक कलाकृति तरीकेनी परिणति स्पष्ट करे छे. परन्तु महाकाव्य पछी जे 'चरित' आव्यां अेनुं शुं ? अेनां कयां व्यावर्तक लक्षणो ? महाकाव्यथी ते क्यां जुदु पडे छे ? शाथी जुदुं पडे छे ? – आ बधुं मीमांसामां नथी. 'चरित'ने महाकाव्यकुळमां ज मूकी देवायुं. संस्कृत महाकाव्यो सन्दर्भे विचारीअे तो 'रघुवंश'मां नायकवंश केन्द्रमां आव्यो छे अने ते निमित्ते कथाश्रये ज शब्दवैचित्र्ये साहित्यिक संसिद्धि जोडाई छे, मात्र कथा ज नहीं. शुं बन्युं अेटलुं ज नहीं, केवी रीते बन्युं अेनुं रसवाही तत्त्व अने अे रीते ज साहित्यिक छटाओ, कल्पनो, चित्रणो अने अलङ्कार-रसनो आविष्कार अेमां थयो जे 'मात्र' वीरगाथाने कथागत रस औत्सुक्यने नवा आयाम साथे सिद्ध कर्यो. शिशुपालवधमां अे रीते महत्त्वनी घटना केन्द्रमां आवी. परन्तु आनी पडछे 'हर्षचरित' क्यां जुदुं पडे ?

जो के पूर्ण वाचन-अभ्यासना आधारे आपणे तारवी शकीअे छीअे के चरितमां नायक ज केन्द्रमां आवे छे, अेनी ज वात मुख्य छे. बुद्धचरित वगेरे पण अे रीते समजी शकाशे. पछीना गाळामां तो प्राकृतमां चरितकुळमां पूर आव्युं अने अेमांथी ज मात्र वीरगाथा के मात्र महाकाव्यथी जुदां पाडतां लक्षणो प्रगट थयां. मारा अभ्यासने आधारे हुं मानुं छुं के आ चरितकुळमां ज जैनस्रोतना रासनी अनेक रचनाओ आवी. भरतचक्रवर्तीनुं समग्र जीवन अेक जुदुं ज रूप छे अने अेना ज जीवननी मुख्य घटनाने केन्द्रमां लावीने शालिभद्रसूरि 'भरतेश्वर बाहुबली' नवी रचना आपे ते चरितना ज नाट्यात्मक मर्मस्पर्धी केन्द्रीभूत अेवुं प्रस्फुरण छे. चरितकाळे प्राकृतमां ज गेय देशीओनो, रासक छन्दमां गानढाळमां वस्तुनिर्वहणनो आरम्भ थई चूक्यो हतो. अेनुं ज अनुसन्धान 'भरतेश्वर-बाहुबलि' छे. चरित छे, विशेष प्रेरक, बोधक, मूळ तत्त्वने ज केन्द्रमां लावतुं लघुचरित छे. शालिभद्र पण स्पष्ट लखे ज छे के भरत नरेन्द्रना चरितने हुं रासकमां बांधुं छुं. अे अेके गाईने अन्य समुदाय माटे रजू करवानी अथवा तो नित्यपाठनी लघुचरित रचना छे. अने अन्ते फलश्रुतिमां पण स्पष्ट जणाव्युं छे के जे आनुं पठन करशे ते नवनिधि प्राप्त करशे. परन्तु आपणे आपणां मध्यकालीन साहित्यना इतिहासमां स्वरूप दाखल अेवी 'रास' रचना तरीके समावी लीधी अने समूहगेयरूपमां गवाती कथाश्रयी जैनस्रोतनी रचनाओ मानी बेठा अने शालिभद्रसूरिनी कृतिने आरम्भनी रासस्वरूपनी कृति मानीने चाल्या.

'रास' अेक पंक्ति के बहुधा मण्डलाकार अेवो नरनारीना समूहमां गवातो प्राचीनतम प्रकार छे, अेनी पूरी स्पष्टता भोज अने हेमचन्द्र बन्नेमां मळे छे. आवी रचना लघु होय, गोपीकृष्णने लगती होय अे पण स्पष्ट छे. अेमां कोई आवी आख्यानक रासरूप कृतिनो निर्देश नथी. जैन परम्परामां आ रीतनी रचनाओ रासरूपे गवाती थई अे पाछळनी घटना छे. 'रास रमेवउ' अेवा स्पष्ट निर्देश छे. केटलीक दीर्घ कथाकृतिओ आ रीते गवाती होय, दा.त. श्रीपाल रास, अेवो सम्भव पण नकारी न शकीअे. परन्तु आना कारणे स्त्रीपुरुषना मण्डलाकार नृत्यरूपे प्रस्तुत थती राससाहित्यान्तर्गत रचनाओ : आवो अर्थ करवो अतिव्याप्ति छे. छेक मध्यकालमां पण रामकथादि विषयक हजारो पंक्तिनी रचनाओ छे ते आ प्रकारनी समूहगेय रचनाओ नथी. अे ज रीते ज सेंकडो मनोरंजक कथाओ छे, विक्रमकथाचक्र अन्तर्गत अनेक कथाओ छे शीर्षके - प्रकारे रास स्वरूपनी मानी लीधी अे गेयढाळ धरावती पद्यकथाओ छे.

धर्मपन्थसंलग्न अेवा प्रबन्धजातिना आ रासक छन्दनी कथारचनाओने जैनस्रोतनी रचनाओ तरीके 'राससाहित्य'मां ज मूकवी अे अेक कामचलाउ स्वरूपलक्षी धोरण छे. खरेखर सेक्युलर आर्टना धोरणने ज दृष्टिमां राखीने जैनस्रोतनी राससाहित्यमां, अेक प्रकीर्ण जेवा स्वरूपमां मूकवाने बदले आ कृतिओने शुद्ध साहित्यिक धोरणे तो सर्वसामान्य अेवा साहित्यिक स्वरूपनी दृष्टिअे १. आख्यान, २. पद्यवार्ता, ३. अैतिहासिक प्रबन्ध अेवा स्वरूपोमां ज तपासवी जोईअे. जूना इतिहासो लखायेला त्यारे हजु जैनस्रोतनी कृतिओनुं बहु ओछाना ध्यानमां आवेलुं. मो.द. देशाईना ग्रन्थो तथा अन्यत्र प्रसिद्ध थयेली आ धर्मपन्थस्रोतनी कृतिओ बहु ओछाना ध्यानमां आवी. डॉ. ह. चू. भायाणी, डॉ. के. का. शास्त्री वगेरेना ध्यानमां, डॉ. सांडेसरा अने अन्य केटलाक विद्वानोना ध्यान-अभ्यास-परिशीलनमां आ समर्थ कथाश्रयी स्रोत हतो. आथी ज 'राससाहित्य' अेवी अेक जनरल केटेगरी ऊभी थई त्यारे डॉ. के. का. शास्त्रीने रासकृतिओने १. पौराणिक, २. मनोरंजककथाश्रयी, ३. उपदेशात्मक अने ४. प्रकीर्णादि प्रकारमां वहेंचवी पडी. परन्तु हवे ज्यारे आ बधुं स्पष्ट थयुं छे त्यारे राससाहित्यनी *कृतिओने मध्यकालीन गुजराती साहित्यमां जातिप्रकार अने स्वरूपनी दृष्टिअे आ* रीते मूकवी जोईअे :

१. जैन स्रोतना मुख्य धर्मग्रन्थनी जे कथाओने रासक गेय छन्दमां मूकी छे तेने प्रबन्धकाव्यना प्रकारोनी दृष्टिअे कोई प्रबन्ध मध्ये आवेली पेटा कथाने ज्यारे कोई सम्पूर्ण कृतिना प्रबन्धरूपमां बांधे त्यारे अेने स्वरूपदाखल आख्यान कृति गणवी जोईअे.

आख्याननना जे प्रकार-प्रवाहभेद पडशे तेमां वैदिकस्रोतनी आख्यानकृतिओ अने जैनस्रोतनी आख्यानकृतिओ अेम बे पडशे. प्रबन्ध तरीकेनुं रूप बन्ने स्रोतमां समान छे. बन्नेमां आख्यानककृतिओ छे जे कोई मुख्य प्रबन्धमां पेटारूपमां, दृष्टान्त वगेरे रूपे आवी छे. लंबाण थतुं अटकाववा मात्र निर्देश ज करुं के मारा 'प्राचीन भारतीय कथासाहित्य' (हसु याज्ञिक, पार्श्व प्रकाशन (२०१६) पृ. ९३ थी ११२)मां प्राकृतमांथी आवेली मध्यकालीन गुजरातीनी रास / चोपाई / प्रबन्ध आदि शीर्षक नामे रचनाओनी कामचलाउ यादी आपेली छे. अेमां आगम अने आगमोत्तर कृतिओमांथी आवेली कथाओनो निर्देश कर्यो छे ते आख्यानक कृतिओ कई ते स्पष्ट करे छे.

२. मनोरंजक लोककथावर्गनी अनेक कृतिओ छे जे शुद्धतम स्वरूपनी दृष्टिअे पद्यवार्ता / पद्यकथा छे. मध्यकालमां सामान्य रीते आवी मनोरंजक लौकिक कथाओने अमुकनी चोपाई, दूहा वगेरे नामे ओळखावी छे. क्यांक अे माटे प्रबन्ध अेवी जातिगत संज्ञा छे. जैनस्रोतमां पण राससाहित्यमां मूकेली कृतिओ आपणा विवेचने जेना माटे 'पद्यवार्ता' अेवो स्वरूपवाचक प्रयोग कर्यो छे अेवी ज छे. हकीकते, आख्यान, पद्यवार्ता अने अैतिहासिक प्रबन्ध आ त्रणे प्रचलित बनेली स्वरूपसंज्ञानी चर्चामां ज १. वैदिक स्रोतनी २. जैनस्रोतनी अेवा बे भाग पडशे. आज रीते १. खण्डमां लखायेली २. सळंगबन्धनी तेवा पण प्रकारभेद तथा १. मुख्य कथारूप अने २. कथामाळा के कथाशृंखला अेवा तथा १. लोकभोग्य अने रजूआतनी २. विद्वद्भोग्य अने परिशीलन माटेनी अेवा भेद पडशे. मध्यकालीन साहित्यनी रूपसुन्दर-कथा, माधवानल कामकन्दला (गणपति) अने जैन स्रोतनी जयवंतसूरिनी 'शृङ्गारमंजरी' आ वर्गमां आवशे.

पद्यवार्ता मुख्यत्वे दुहा-चोपाइमां होय छे परन्तु जैनस्रोतमां धर्मसन्दर्भ उमेराय छे ते, तथा अे गानढाळमां होय छे अे भेद छे. परन्तु स्वरूपदाखल आ जैनस्रोतनी कथाओ पण कुळमूळनी दृष्टिअे लौकिक कथाओ छे. धर्मतत्त्वनी

असर मात्र बाह्य छे, कथानुं मूळ कथानक बदलातुं नथी. आ रीते ज धम्मिल, अगडदत्त, अञ्जनासुन्दरी पण आप्यानक छतां कथातत्त्वे मनोरंजक लोककथाना वर्गनी छे.

३. व्यक्ति / घटना हकीकतमूलक रासक कृतिओ जेना केन्द्रस्थ नायक वस्तुपाल, तेजपाल वगेरे छे तथा यात्रासंघ, चैत्यविहारादि हकीकतमूलक सामग्री छे ते आ प्रकारनी पद्यवार्ताना वर्गमां आवशे.

हकीकते, ऐतिहासिक प्रबन्ध, पण आपणा विवेचने, कान्हडदे प्रबन्धना सन्दर्भे ज प्रयोजी छे, जेना पण स्वरूपदाखल केटलाक प्रश्नो छे. आनी विगत में पार्श्व प्रकाशित मारा मध्यकालीन साहित्यना पुस्तकमां मध्यकालीन जातिओ अने स्वरूपोमां चर्चेली छे तेथी अेनी विगतमां अहीं जतो नथी.

४. केटलीक कृतिओ अेवी छे के अेनी कथ्यसामग्रीना आधारे अेने उपरना कोई अेक वर्गमां मूकी न शकीअे. केटलीक कृतिओ शुद्ध रास स्वरूपनी पण जणाय. अेटले के प्रमाणमां लघु होय, रासरूपमां गवाती होय.

अहीं आ चर्चाना अनुषंगे बीजा पण केटलाक मुद्दाओ छे. तेमां मुख्य मुद्दो, जे मध्यकालीन कृतिमां ज कर्ताअे पोते ज अेना जातिस्वरूपनो निर्देश कर्यो होय तेनो तथा पुष्पिकामां हस्तप्रतना रूपमां मळती कृतिमां लहियाअे कृति अंगे जे कोई जातिस्वरूपनो उल्लेख कर्यो होय, अेने गम्भीरतापूर्वक ध्यानमां लेवानो, समजवानो छे. क्यारेक आवा कोई पर्यायसूचनमां कर्तानी शिथिलता-अज्ञान धारी लेवाया ते भूलभर्या छे. दा.त. गणपतिअे पोतानी कृतिने 'दुहामां बांधेलो प्रबन्ध' जणाव्यो ते भूल / क्षति मानवामां आवी. आ पायानी भूल छे. अेनां कारणमूळमां ऊंडा न ऊतरवानुं आ परिणाम छे. कोई कृतिमां कर्तानो हेतु अधिकारिक रूपमां मात्र रोचक मनोरंजक कथा आपवानो नथी, परन्तु आवी कथाना माध्यमे रोचक-मनोरंजकता उपरान्त साहित्यकृति तरीके तत्त्वविचार, रस, अलङ्कार वगेरे ज मुख्य दृष्टि केन्द्रमां राखीने साहित्यिक कृति सर्जवानो छे. त्यां मात्र आवी उत्पाद्यकथा माटे छन्दाधारित अमुकनी चोपाई, अमुकना दुहा के मात्र वारता जेवी संज्ञा प्रयोजवाना बदले 'प्रबन्ध' अेवी संज्ञा प्रयोजी छे. आना सचोट सुस्पष्ट उदाहरणो १४मी सदीनी रचना 'चतुर्विंशति प्रबन्ध' अने १५मी सदीना गणपति कायस्थकृत 'माधवानल कामकन्दला प्रबन्ध' छे. अहीं बन्ने कृतिओमां कथातत्त्व साधन छे, साध्य नथी. राजशेखरसूरि आत्मानी

मायाविमुक्त निर्लेपता, अने अेना हंसरूप स्वरूपनुं तत्त्वज्ञान जनसामान्यने समजाववानो हेतु धरावे छे. आ माटे हंस राजा, मन प्रधान अने माया-मोह-विवेकरूपी पत्नी-पुत्रनी उत्पाद्य अेवी कथा आपे छे. आत्मानुं तत्त्वदर्शन, वेदान्त तो अेमणे संस्कृतमां समजाव्युं छे परन्तु ते मात्र विदग्धने ज समजमां आवे एवुं छे आथी ज सामान्य जनने दृष्टिमां राखी अेमणे आ रूपकाश्रयी कथा मांडी अने आ ज्ञानने, अेनी प्रतीतिने त्रणे भुवनने अजवाळता दीपकनुं रूपक आप्युं. आ रीते ज गणपतिने अेक सुन्दर कलाविद नवयुवान अने सुन्दर नृत्याङ्गना वाराङ्गनापुत्रीनी प्रेमकथा नथी कहेवानी, परन्तु अेना आधारे रस, अलङ्कारसमृद्ध प्रशिष्ट रचना आपवानी छे. अहीं दृष्टिमां 'प्रबंध' अेटले 'प्रकृष्ट कथाबन्ध' अे पण अर्थ छे, अेटले के कथाना आधारे बंधातुं साहित्यिक कृतिनुं रूप.

बीजी अेक परिस्थिति अे प्रवर्ती के जे कथा मात्र मनोरंजक उत्पाद्य प्रकारनी न हती, परन्तु अेना कथासंलग्न पात्र अने घटना हकीकत मूलक अेटले के कोई काळे बनी चूकेला हता. अेमना जीवनकार्यचरितादिनी कृति माटे पण 'प्रबन्ध' अेवो जातिसूचक पर्याय प्रयोजायो. विमल प्रबन्ध, कुमारपाळ प्रबन्ध अने विशेषतः कान्हडदे प्रबन्धमां अे प्रयोजायो. आथी इतिमूलक व्यक्तिघटनाने मात्र कथा, पद्यकथा के वारतामां न मूकता आपणा विद्वानोअे 'अैतिहासिक प्रबन्ध' अेवी 'पद्यवार्ता' जेवी नवी ज संज्ञा आपीने प्रचलित करी. डॉ. के. बी. व्यासे करेला कान्हडदेप्रबन्धना सम्पादन अने अभ्यासमां आ पर्याय अने सोदाहरण चर्चा करी, अे पछी आवी इतिमूलक कथा धरावती रचना माटे अैतिहासिक प्रबन्ध अेवी संज्ञा प्रयोजावा लागी. परन्तु काळक्रमे ऐतिहासिक प्रबन्धमां 'ऐतिहासिक' मात्र वधारानुं विशेषण मानी मात्र 'प्रबन्ध' कहेवायुं अने रास, आख्यान, पद्यवार्ता अने प्रबन्ध अे मध्यकालीन कथाश्रयी स्वरूपो छे, अेम बोलातुं-लखातुं थयुं. आवी शिथिलताने कारणे हकीकते तो रास, आख्यान, पद्यवार्ता पण प्रबन्धजातिना पेटा प्रकार छे, तेवी स्पष्टता धूंधळी बनी.

अहीं बीजी पण अेक स्पष्टता अे करवानी जरूर छे के वीरगाथा, वीरकविता Heroic Poetry, वगेरे माटेना स्वरूप-वाचक पर्यायो तो वेदकालीन साकाथी आरम्भीने ते मध्यकालीन छन्द, पवाडो, साका, अेवी जुदी जुदी संज्ञाओ प्रयोजाई छे, जे अभ्यासीओना ध्यानमां न रही. 'साका'नो अर्थ पराक्रमना प्रसंगोनी शृङ्खला अेवो छे. लोकमहाकाव्य 'निहालदे-सुलतान'मां नायकना आवा बावन

पराक्रमोने बावन साका कहेवाय छे. बारोटी परम्परामां आ माटे 'छन्द' अेवो पर्याय छे. अेनो अर्थ जेनी पराक्रमगाथा विशिष्ट लय-आवेग साथे गवाय छे अेवी वीररस पोषक रचना. बारोटी स्रोतमां आ माटे 'रासा' अेवो पर्याय छे. 'पृथ्वीचंद रासा'मां, चंदबारोटनी रचनामां अे छे. देवीनी वीरगाथा पण 'छन्द' तरीके ओळखाय छे. आ 'चर्यागीति' अेटले के Heroic deedsनुं, पराक्रमनुं गान करतो प्रकार छे. मार्कण्डेय देवीपुराणनो चोथो अध्याय 'शक्रादय' अेनुं दृष्टान्त छे. मधु अने कैटभ राक्षसोनो देवीअे वध कर्यो अेनी प्रशंसा इन्द्र (शक्र) आदि देवोअे करी. चण्डीपाठनो आ अध्याय पण ओजस-आवेशपूर्वक गवाय छे.

आम, मुख्य तात्पर्य अहीं अे छे के जैनस्रोतनी रासकरूप गेय कथारचनाओने 'राससाहित्य' अेवा वर्गमां ज मूकी देवाने बदले अेनी कृतिओनो पण आख्यान, पद्यवार्ता वगेरेना प्रकार-स्वरूपमां ज मूकीने चर्चवा जोईअे. कलासाहित्यना शास्त्र सेक्युलर आर्ट्सना धोरणे ज थाय, अर्थात् कोई धर्मपन्थ Sect मां ज अेने न मूकी शकाय. धर्मपन्थ प्रमाणे, हेतु प्रमाणे कृतिना बाह्य अङ्गोमां ज केटलीक भिन्नता होय. दा.त. कृतिकर्तानुं ईश्वरस्तवन, अेनां गुरुवन्दन, कृतिहेतु, फलश्रुति वगेरे पन्थ-धर्मनी परम्पराअे जुदा होय अेटलुं ज. भारतीय धोरणे वैदिक अने जैन बन्नेमां सरस्वती विद्यानी देवी छे ते समान होय, परन्तु वैदिकमां गणेश होय ते जैनस्रोतमां न होय, शिव-विष्णु वगेरेना स्थाने तीर्थङ्कर-वन्दना होय, लखनार साधु होय तो स्वाभाविक छे के अेना ज्ञाति, अवटंक, गाम, मातापिता वगेरेनी विगत न होय परन्तु अेना स्थाने गुरु होय, गच्छ होय. फलश्रुतिमां पण अेवुं केटलुंक भिन्नत्व होय. परन्तु स्वरूप-दाखल आ ग्रन्थबन्धना बहिरङ्ग छे. अेनुं अन्तरङ्ग तो समान छे अने ते ज स्वरूपनिर्णयमां लेवुं जरूरी छे. जो के डॉ. भायाणी, डॉ. सांडेसरा, डॉ. के. का. शास्त्री, प्रो. अनन्तराय रावलना मनमां तो आ स्पष्ट छे अने तेमनां अभ्यासमां पण अे जोवा मळे छे. जैनस्रोतनी अनेक रचनाओने अेमणे मध्यकालीन लौकिककथामां ज मूकीने चर्ची छे. अनन्तराय रावल पण 'पद्यवार्ता'ना प्रवाहमां रासरूप कृतिओ मूकीने चर्चे छे. परन्तु हवेना आपणा मध्यकालना अभ्यासमां आ कामचलाउ अेवा बृहत् कौंसने कौंस बहार काढी यथास्थाने मूकवा पर ध्यान अपावुं अनिवार्य गणाय.

खरेखर तो साहित्यसामग्रीनी जे मुख्य १. कथाश्रयी Narrative अने २. भावाश्रयी Lyrical जातिओ छे तेनी मूळ विभावना स्पष्ट करवी जोईअे अने

अेक अभ्यास स्पष्टता अने विशदता माटे त्रीजी जाति पण उमेरवी जोईअे – ज्ञान, माहिती, इतिहास वगेरे केन्द्रमां छे ते. कथाश्रयी जातिना मुख्य प्रवर्तक चारेक प्रकारो उपरान्त पण केटलाक विशेष भेद धरावता पेटा प्रकारो छे ते लक्षमां लेवा जोइअे. ऊर्मिमूलक / भावाश्रयी जातिना पण पद, ऋतुमूलक / आदि प्रकारो मांहेना तथा अेमां समाता नथी अेवा प्रकारोना स्वरूपनी स्पष्टता पण थई नथी. आ बीजी जातिमां 'पद' अेटले के निश्चित चरणसंख्यामां कोई अेक विषयसंलग्न भावोर्मिने व्यक्त करती मध्यमकदी रचना. आनी आपणी विवेचना-चर्चा अधूरी छे. मारा मध्यकालीन इतिहासना सम्बन्धित प्रकरणमां पद विशे, अेना हेतु, प्रयोजन, सामग्री, पंथ वगेरेना कारणे जे जे पेटाप्रकारो छे अेनी चर्चा करी कामचलाउ तालिका आपी छे, अेनो निर्देश करुं छुं. ज्ञानाश्रय-भावाश्रयी पदो-भक्तिरचनाओनो विचार करीअे त्यारे अेमां जैनस्तोतना सज्झाय, स्नात्रपूजादि अन्य प्रकारोनो समावेश करवो जोईअे. अष्टक, चोवीसी, बत्रीसी, बावनी वगेरे चरणसंख्याधारित प्रकारो, कळशादि भाग्ये ज चर्चायेला प्रकारो, मात्र भावपूर्ण भक्ति निरूपण अने नाम स्मरण चरित-महिमा साथेनां पदोना मात्र स्मरणरूप अने प्रयोजित (अेटले के अर्चन-पूजनादि विधिमां Applied छे ते) चर्चरी, मातृका-कक्का, विवाहलु, धवल अने अेना बे प्रकार (जे हेमचन्द्राचार्ये 'छन्दोनुशासन'मां चर्च्या छे), ऋतुकाव्यनी जाति अन्तर्गत वसन्तपद, हिंडोळा, बारमासी अर्चन-पूजन संलग्न स्नान, शणगार, पूजन, आरती, थाळ वगेरे तथा जीवनचक्र Life Cycle अने ऋतुचक्र Season Cycle संलग्न मोहक-मनोरंजक गीतो, पद अने गीत वच्चेनो भेद, संदेशकाव्य अने अेनुं पण वैविध्य, कथावलम्बित अने मात्र भावोर्मिसंलग्न अेवी रचनाओ : आम, हजु पण आवी अनेक दिशाओ, अेनां विविध पासांओ, परिमाणो, संगीत-नृत्यादि साथेनो अनुबन्ध : आ बधुं ज ध्यानमां लईने मध्यकालीन गुजराती जातिओ अने अंतर्गत स्वरूपो पर विचारवानी, अभ्यास करवानी जरूर छे. नवी पेढीमां मध्यकालीन साहित्यना अभ्यास परत्वे जे कंईक उदासीनता जामवा लागी छे अे दूर थाय अने आ दिशाना अभ्यास थाय !

C/o. १, पद्मावती बंगलोज,
थलतेज, अमदावाद-५९

* * *

कवि लावण्यसमय

— राजेश पंड्या

उमाशङ्कर जोशीनुं एक काव्य छे : 'गुर्जरी गिरा'. अेनी शरुआत आ रीते थाय छे : 'जे जन्मतां आशिष हेमचन्द्रनी / पामी, विरागी जिन साधुओअे / जेनां हींचोळ्यां ममताथी पारणां'. आम, गुजराती भाषाना आरम्भकाळे, हेमचन्द्राचार्यथी लईने इ. १८५० सुधी अनेक जैन कविओ थया. गुजराती भाषा-साहित्यना घडतरमां अेमनुं बहुमूल्य प्रदान छे.

आवा ज अेक महत्त्वना जैन कवि छे, लावण्यसमय. लावण्यसमय पंदरमी सदीना एक समर्थ गुजराती कवि छे. कवि पोते ज पोतानो परिचय आपतां जणावे छे :

नवमइ वरसि दिख वर लीध, समयरत्न गुरि विद्या दीध
सरसति माता मया तव लही, वरस सोलम वाणी हुइ
रचिया रास सुंदर-संबंध, छंद कवित चुपइ प्रबंध
विविध गीत, बहु करिया विवाद, रचीआ दीप सूरि संवाद
सरस कथा हरीआली कवइ, मोटा मंत्री राय रंजवइ.

आ कडीओमां कविअे साधुदीक्षा, गुरुनाम, सर्जननो आरम्भ अने रास, प्रबन्ध, चोपाई, संवाद, गीत जेवां स्वरूपोमां करेला काव्यलेखननो निर्देश कर्यो छे. लावण्यसमये लगभग चालीस जेटली कृतिओनी रचना करी छे. अेमां 'विमलप्रबन्ध' अने 'नेमिरङ्गरत्नाकर छन्द' जेवी कृतिओ तो मध्यकालीन गुजराती साहित्यमां खूब जाणीती छे. सौ पहेला 'विमलप्रबन्ध' विशे थोडीक वात :

'विमलप्रबन्ध' अे अैतिहासिक कथानक पर आधारित दीर्घ चरित्रकाव्य छे. सोलंकी युगना राजा भीमदेव पहेलाना समय (ई. १०२४ थी ई. १०६६)मां थई गयेला गुजरातना सुप्रसिद्ध राज्यमन्त्री-दण्डनायक विमलदेवनुं जीवनचरित्र अेमां आलेखायुं छे. जो के 'विमलप्रबन्ध'ने शुद्ध अैतिहासिक काव्य कही न शकाय. केम के अेमां दन्तकथाओनो पण घणो आधार लेवामां आव्यो छे.

'विमलप्रबन्ध'मां, विमलमन्त्रीनी चरित्रकथाने कविअे ९ खण्ड अने १३५६ कडीमां रजू करी छे. कृतिनो आरम्भ, मध्यकालीन जैन प्रणालिका मुजब वन्दनाथी थाय छे, ते मंगलाचरणनी कडीओ सांभळो :

आदि जिणवर आदि जिणवर-पय प्रणमेवि
अंबाई धुरि अर्बुदा, सकल देवि श्रीमात ध्याउं
पुमावइ चक्केसरी, वागवाणि-गुण रंगि गाउं
सहिगुरु आयस सिरि धरि, आलस अलग कर्योस
कहइ कवीयण हुं विमलमति, विमलप्रबंध रच्योस

'विमलप्रबन्ध'ना पहेला पांच खण्डमां, अेमना जन्म, अभ्यास, लग्न अने पाटणनिवासनुं आलेखन छे. जे विमलचरित्रकथानी भूमिकारूप बनी रहे छे. विमलमन्त्रीना चरित्रनी दृष्टिअे प्रबन्धकाव्यनो छठ्ठो खण्ड खूब अगत्यनो छे. अेमां, पोताना बुद्धिचातुर्य अने शौर्यपराक्रमथी विमल कई रीते गुर्जरनरेश भीमदेवने प्रसन्न करी दण्डनायकनुं पद प्राप्त करे छे तेनुं वर्णन छे. विमलना राजकीय अभ्युदयथी निराश थयेला ईर्षाळु कारभारीओनी राजखटपट अने पेंतरा-कावतरांओनुं वर्णन पण आ खण्डमां रसप्रद रीते थयुं छे. सातमा अने आठमा खण्डमां विमलना युद्धसाहसनुं आकर्षक वर्णन छे, जेने लीधे अेना राजकीय सम्मानमां वधारो थाय छे.

'विमलप्रबन्ध'नो ९मो खण्ड अैतिहासिक दृष्टिअे घणो अगत्यनो छे. आ खण्डमां विमलमन्त्रीअे, युद्धहिंसाना प्रायश्चित्तरूप अर्बुदपर्वत पर करेला जिनमंदिरना निर्माणनी अैतिहासिक विगतो आपवामां आवी छे. देशना कुशळ कारीगरो द्वारा आरसपहाणमांथी बंधावेला आ नकशीदार मन्दिरोमां, जैन आचार्यश्री धर्मघोषसूरिनी निश्रामां, ई. १०३२मां जिनप्रतिमानो स्थापना महोत्सव थयो. आबुना आ जैनमन्दिरो आजे 'विमलवसहीनां देरां' तरीके प्रख्यात छे.

'विमलप्रबन्ध'नुं मुख्य पात्र विमलमन्त्री छे. कृतिना आरम्भथी ते अन्त सुधी अेमनुं व्यक्तित्व प्रभावक बनी रहे छे. केटलाक प्रसंगोअे अेमना उदारचरित व्यक्तित्वनी आपणा मन पर ऊंडी छाप पडे छे. जेम के, जिनमन्दिरोना निर्माण माटे अे दण्डनायक तरीकेना प्रभावनो के सत्ता-बळनो जराय उपयोग कर्या

विना, समजावट द्वारा, योग्य वळतर आपी, भूमिसम्पादन करे छे. मन्दिरना बांधकाम वखते पण ए वेठिया मजूरी करावता नथी, पण श्रमिको प्रसन्न थाय तेवी मजूरी चूकवे छे. कुशळ कारीगरो ने शिल्पीओने तो ए सोनामहोर आपी पुरस्कृत पण करे छे. आ बधामां एक समर्थ सत्ताधीशना मानवीय अभिगमनो आपणने परिचय थाय छे. विमलमन्त्री जैनधर्मना अनुयायी होवा छतां, बधा धर्मना लोको माटे विश्रामस्थानो अने शिक्षण माटे पाठशाळाओ बंधावी आपे छे तेमां पण एक सहिष्णु अने समदर्शी अधिकारीनो परिचय मळे छे.

आवा युद्धवीर, धर्मवीर अने दानवीर विमलमन्त्रीने, कवि लावण्यसमय प्रबन्धकाव्यना चरित्रनायक तरीके पसंद करे छे ते खरेखर योग्य जणाय छे. विमल मन्त्रीना आ चरित्रकाव्यमां, विमलपत्नी श्री अने माता वीरमतीनी चरित्ररेखाओ पण हृदयस्पर्शी छे. गुजरातना राजा भीमदेव, सिन्धुदेशना राजवी, रोमनगरना सुलतानो अने एमनी बेगमबीबीओ, गुरुदेव धर्मघोषसूरि जेवां अन्य चरित्रो कथापोषक रीते रजू थयां छे.

'विमलप्रबन्ध'नी एक वधु विशेषता ते एनी वर्णनात्मकता छे. कविनी वर्णनशैली आम तो परम्परागत छे, छतां प्रसंगोपात्त ए आकर्षक पण बने छे. कलियुगनुं वर्णन, सुलताननी बीबीओनुं हास्यमय वर्णन, बंभणियाना राजा साथेनुं तादृश युद्धवर्णन, विजयी विमलना सत्कारनुं वर्णन, चन्द्रावतीनगरीनुं वर्णन जेवा केटलाय वर्णनखण्डो कृतिने रसात्मक बनावे छे. कृतिनी गेयता पण आस्वाद्य छे. जुदी जुदी मात्रामेळ देशीओ अने गेयढाळोथी एनो पद्यबन्ध बंधायो छे.

'विमलप्रबन्ध'नी काव्यभाषा तत्कालीन गुजरातीना अभ्यासनी दृष्टिए घणी महत्त्वनी छे. एमां कविए घणी कहेवतो पण कुशळताथी वणी लीधी छे. 'मगण मरण समाणुउ जोइ' अने 'गाजवीज घण थोडा मेह' जेवी उक्तिओ आजे पण आपणी भाषामां थोडा फेरफार साथे टकी रही छे. आ प्रबन्धकाव्यनी वच्चे वच्चे सुभाषित जेवी केटलीक काव्यपंक्तिओ चमक चमक चांदरणां जेम चमकती दीपी ऊठे छे, एनां बे'क उदाहरण जोइए :

१. *एक वयरि, विषवेलडी ए बिहु, त्रीजी व्याधि*
जाउ उगती छेदीइ, तु सिरि हुइ समाधि

२. *कडूआं फल नवि लागइ अंबि, सोनइ किम्हइ न लागइ संखि*
माणिकि मल न बइसइ सार, सील न चूकइ विमल कुंआर.

'विमलप्रबन्ध'नी रचना विमलमन्त्रीना जीवनकाळ पछी लगभग पांचसो वरसे थई छे. समयदृष्टिअे आ अन्तर घणुं मोटुं छे. अेटले अेमां लोकश्रुति अने अनुश्रुतिजन्य घणी किंवदन्तीओ भळी गई होय ते स्वाभाविक छे. तेम छतां 'विमलप्रबन्ध' ए 'कान्हडदेप्रबन्ध' पछीनुं बीजुं महत्त्वनुं अैतिहासिक प्रबन्धकाव्य छे. अेमां तत्कालीन गुजरातना इतिहासनी घणी मूल्यवान सामग्री रहेली छे.

हवे, लावण्यसमयनी बीजी महत्त्वनी दीर्घकृति 'नेमिरङ्गरत्नाकरछन्द' विशे थोडुंक :

'विमलप्रबन्ध' जो अैतिहासिक चरित्रात्मक काव्य छे तो, 'नेमिरङ्गरत्नाकरछन्द' साम्प्रदायिक चरित्रात्मक काव्य छे. आ काव्यमां, जैनधर्मना बावीसमां तीर्थङ्कर श्री नेमिनाथप्रभुनुं जीवनचरित्र रजू थयुं छे. कृति नेमिनाथना जन्मवर्णनथी शरु थाय छे. ते पछी, तेमनां किशोरवयनां पराक्रम, लग्ननो अस्वीकार, राजिमती साथे नेमिनाथना लग्न करावववा कृष्णनो प्रयत्न, अे माटे कृष्णनी वसन्तखेलनी युक्ति, नेमिनाथनी लग्नसंमति, परन्तु लग्नप्रसंगे भोजन आदि माटे थनारी जीवहिंसाथी नेमिनाथमां जागेलो विरक्तिभाव, अेमनो संसारत्याग, आशाभङ्ग राजिमतीनी विरहव्यथा, गिरनार पर्वत पर नेमिनाथनी तपस्या, दीक्षा अने केवलज्ञाननी प्राप्ति, राजिमती अने संसारीओने देशना-जेवा अनेक प्रसंगोनुं 'नेमिरङ्गरत्नाकरछन्द'मां रसात्मक आलेखन थयुं छे.

नेमिनाथ प्रभु विशे घणा जैन कविओअे विधविध प्रकारनी पद्यरचना करी छे, अेमां लावण्यसमयनी आ कृति घणी विशिष्ट छे. बे-चार प्रसंगो तो नेमिनाथ विशेनी कोईपण कृतिमां न होय तेवा छे. अेवो अेक प्रसंग छे नेमिकुमारना लग्न करावववानो कृष्ण प्रयत्न अने अे माटे वसन्तखेलनुं आयोजन. आ प्रसंगमां गोपीओ अने नेमिकुमार वच्चेनो संवाद घणो आकर्षक छे. आ समग्र प्रसंगयोजना कविनी आगवी कल्पना छे. अेमां कृष्ण-गोपीनी रासलीलानुं सादृश्य जोई शकाय. नेमिनाथ अने कृष्ण बन्ने यादवकुळना राजकुमार हता अने पितराई सम्बन्धथी जोडायेल हता अेवी कथा जैनपरम्परामां प्रचलित छे. कविअे अेनो लाभ लीधो छे.

'नेमिरङ्गरत्नाकरछन्द' भावनिरूपणनी दृष्टिअे खूब हृदयस्पर्शी कृति छे. नेमिनाथ लग्नना वरघोडामांथी सीधा गिरनार पर तप करवा जता रहे छे त्यारे राजिमतीनो आशाभङ्ग थाय छे. जीवनना सर्व सुखपदार्थ अेने नीरस लागे छे. अेनी सखीओ आ जाणती नथी अेटले शणगार, आभूषण, खानपान, फूलशैया जेवी भोगसामग्री दर्शावे छे. अे वखते भग्नहृदयी राजिमती 'अहं अहं' कही तेनो अस्वीकार करे छे. आ 'अहं अहं' उद्गारने कविअे कुशळताथी काव्यपंक्तिमां वणी लीधो छे, आ रीते :

सहीय भणिइ : सुणि देवि, अम कहि करुं कि ? 'अहं अहं'
उगटि अंगि करेवि, पंक परिहरुं कि ? 'अहं अहं'
नवउ ति नवसर हार, गलि धरुं किं ? 'अहं अहं'
कुसुम-सेज सुकुमाल सोई पत्थरुं किं ? 'अहं अहं'

आ पछी, राजिमतीनी सघन विरहव्यथानुं वर्णन कवि करे छे; जे आ कृतिनो सौथी वधु आस्वाद्य अंश छे. अेमांनी केटलीक पंक्तिओ सांभळीअे :

खिण खाटइं खिणि वाटइ लोटइ, खिणि उंबरि खिणि ऊभी ओटइ
खिणि भीतरि खिणि वली आंगणइअे, प्रिय विण सूनी वलीआं गणइअे.

*

सूणि सूणि सहियर आज राज मुज न गमइ दीठउं
भोजनि कूर कपूर पूर नवि लागइ मीठउं
कोमल कमल मृणाल विरहदव-झाल न झल्लइ
प्रिय दीठउ परतखि सोइ मन मांहइ सल्लइ.

आ रचनानुं शीर्षक 'नेमिरङ्गरत्नाकरछन्द' घणुं सूचक छे. मध्यकालीन साहित्यमां झडझमक प्रासानुप्रासवाळी शैली अने विविध मात्रामेळ छन्दोमां लखायेली कृतिने 'छन्द' तरीके ओळखाववानी रूढ परम्परा हती. आ कृतिमां छन्दवैविध्य घणुं छे. दुहा, रोळा, छप्पा, हरिगीत, चरणाकुळ, त्रिभङ्गी, दुमिळ, पध्धडी जेवा अनेक छन्दोने लीधे आ पद्यरचना प्रभावक बनी छे.

कविना छन्दप्रभुत्वनी जेम भाषाप्रभुत्व पण प्रशंसनीय छे. छन्दरचना कृत्रिम न बने अे रीते काव्यभाषा प्रयोजाई छे. प्रास-अनुप्रास ने आन्तरयमकनी

योजना पण घणी साहजिक छे. आ रचनानुं जो परम्परागत रीते लयात्मक गेयपठन करवामां आवे तो ज अेनी खरी खूबी जाणी शकाय. समग्र रीते जोईअे तो 'नेमिरङ्गरत्नाकरछन्द'ना सौन्दर्यनिर्माणमां आवी चारणी शैली मोटो भाग भजवे छे.

*

'नेमिरङ्गरत्नाकरछन्द' अने 'विमलप्रबन्ध' बंने पद्यकृतिओमां लावण्य-समयनी कविप्रतिभानो पूरो परिचय मळे छे; तेम छतां लावण्यसमयनी बीजी कृतिओमांथी हवे 'सूर्यदीपवाद' अने 'करसंवाद' जेवी कृतिओ विशे केटलुंक जाणीअे :

'सूर्यदीपवाद'मां कविअे सूरज अने दीवा वच्चेना वादविवादनुं त्रीस कडीमां सुन्दर वर्णन कर्युं छे. आखी कृति छप्पयछन्दमां छे. दरेक छप्पानो नादलय असरकारक छे. दीपकना लाक्षणिक अर्थ दर्शावतो आ छप्पो सांभळो :

रमणी-दीपक चंद्र, दिवस-दीपक जो दिणयर
कामणी-दीपक कंत, देश-दीपक राजेश्वर
त्रिभुवन-दीपक दान, ज्ञान-दीपक गुरु भणइ
वंश-दीपक सुपुत्त, विनय-दीपक (मन) सुणीइ
दीपक दिनकर देखि करी, अणप्रीछइ कां तडफडुं ?
लावण्यसमय कहइ सूरथी जो, दीपकगुण दीपे वडुं.

कवि लावण्यसमयनी संवादशैलीमां रचायेली बीजी कृति छे 'करसंवाद'. आ लघुकाव्यनो कथासन्दर्भ अेवो छे के, जैनधर्मना प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव, वरसीतपना पारणां निमित्ते, श्रेयांसकुमारने त्यां पधारे छे. श्रीभगवानने भिक्षा वहोरावववा बाबते श्रेयांसकुमारना डाबा-जमणा हाथ वच्चे विवाद थाय छे. बन्ने हाथ पोतपोतानी विशेष महत्ता बतावे छे. छेवटे भगवान ऋषभदेव बेय हाथ वच्चे संप करावे छे. आवी रमणीय कल्पना आ काव्यमां छे. आ कविकल्पित संवादकाव्य दुहा-चोपाईमां रचायेलुं छे. दयारामनुं काव्य 'लोचनमननो झघडो' जेम आ काव्य पण रसप्रद संवादकाव्य छे. मध्यकालीन गुजराती साहित्यमां 'रावण-मन्दोदरी संवाद', 'हनुमान-गरुडसंवाद' जेवा पौराणिक संवादकाव्यनी समान्तरे आवा कल्पित संवादकाव्यनी रचना पण कविप्रिय रही छे.

मध्यकालीन गुजराती जैनसाहित्यमां धार्मिक पूजापठन माटे स्तुतिकाव्य अने स्तवनकाव्यनी रचना परम्परा पण घणी समृद्ध छे. अेमां लावण्यसमयरचित 'चतुर्विंशतिजिनस्तवन' काव्य खूब जाणीतुं छे. आ काव्यमां कविअे जैनधर्मना चोवीसे तीर्थङ्करनी, मालिनीछन्दना अेक-अेक श्लोकमां वन्दना करी छे. अेना अेक वन्दनश्लोकथी समापन करीअे :

कनक तिलक भाले, हार हीई निहाले
ऋषभ पय पखाले, पापना पंक टाले
अरचि नव रसाले, फूटडी फूलमाले
नर भव अजुआले, राग नइं रोग टाले.

* * *

मथुराना देव निर्मित स्तूपनी प्रतिमाओ अने शिल्पोनी विशेषता

– डो. रेणुका पोरवाल

विषयप्रवेश :

मथुरानगर स्थित जैन स्तूपनी साइट-स्थळ कंकाळी टीलामांथी उत्खननमां प्राप्त थयेला ब्राह्मी लिपिना १२५ अने देवनागरी लिपिना २० जेटला शिलालेखोवाळी प्रतिमाओ अने अन्य शिल्पो जैनधर्मनी आगवी ओळख अने धरोहर छे. पत्थर पर अङ्कित आ विद्याधन ''न चोरहार्यं, न भ्रातृभाज्यं न च भारकारि, व्यये कृते वर्धते'' जेवुं अणमोल धन, सर्व धनोमां प्रधान होवाथी अेनी किंमत केवळ विद्याव्यासंगी जौहरी ज कल्पी शके छे. जैनधर्मना पवित्र यात्राधामोनो विकास प्रथम स्तूपमां, त्यारबाद गुफाओ अने पछी वर्तमानना देरासरोना रूपमां थयो. मथुरानो स्तूप पंदरमी सदी सुधी सारी स्थितिमां हतो.

जैन शास्त्रो पहेलां मौखिकरूपे ज हतां परन्तु कोईक अगम्य कारणसर अे शास्त्रज्ञान विसरातुं जाय तो आगमवाचना अेनो प्रथम उपाय हतो, परन्तु महामारी के बीजी कोई कुदरती आफत के समस्या उद्‌भवे तो अेने कंइक अंशे स्मरणमां राखवानो उपाय पण आपणा महान गुरुजनोअे विचार्यो हतो. तेमणे जैनधर्मना आचारो, सिद्धान्तो, प्रभुपूजनविधि, गुरुपरम्परा, गोचरी वहोरवाना नियमो, चतुर्विधसंघनो पहेरवेश, जिनकल्पी अने स्थविरकल्पी बंने साधुओना पात्र अने प्रतिलेखना साथेना परिधान, सम्यक् दर्शन, ज्ञान, अने चारित्रनी रत्नत्रयी, वगेरेने शिल्पोमां मढी लीधी जेथी भविष्यमां कोई बाबते चर्चाओ ऊभी थाय तो अेनुं समाधान शक्य बने. आम आ शिल्पो स्वतः authentic reliable sources of knowledge कही शकाय. आ शिल्पो विविध सम्प्रदायोनी भ्रामक मान्यताओनो छेद उडाडे छे. दा.त. खड्‌गासनवाळी जिनप्रतिमा सलिंगी छे तो साथे नेत्रो खुल्लां छे. बे हजार वर्ष पहेलाना मन्दिरोना अवशेषोमां मूर्तिओ, उत्तम कारिगरीयुक्त स्तम्भ, तोरण, बारशाख, छत्र, पुतळी, वगेरेनो विपुल जथ्थो जैनोमां प्रतिमापूजननी महत्ता अने मन्दिरोना अस्तित्वने सिद्ध करे छे. आ स्थळना उत्खननमां अेक

स्तूप अने बे देरासरो - अेक श्वेताम्बर अने अेक दिगम्बर उपरान्त घणी इमारतोना पायाओ मळी आव्या जे बसो ई. पूर्वेथी लई बारसो ई. ना छे.

जैन धर्मने स्वतन्त्रधर्म तरीकेनी मान्यता अने 'देवनिर्मित स्तूप' शब्द :

मथुरापुरीमां तैयार कराती मथुरा शैलीनी प्रतिमाओ अने शिल्पो पर प्रेरणादायी गुरुजनोनी वंशावली- कुळ-गण-शाखा, अेने भरावनारनुं नाम, स्थापना-वर्ष तथा राज्य करतां राजानुं नाम, शिल्पनो प्रकार अने क्यां स्थापित कराय छे ते भवननुं नाम आपवानी प्रथा हती.

अेक समये इतिहासकारो जैन धर्मने स्वतन्त्रधर्म तरीके स्वीकारता न हता. परन्तु अेक प्रतिमा पर संवत ७९मां 'देवनिर्मित स्तूप'मां स्थापित थई होवानो उल्लेख अने अन्य त्रण बारमी सदीनी मूर्तिओ पर तेमने 'देवतेती'मां स्थापित कराई होवाना उल्लेखो जोतां तेमने पोतानी मान्यता – 'जैन धर्म बौद्ध धर्मनी शाखा छे' अे भूलभरेली जणातां जैनधर्मने स्वतन्त्र धर्म तरीके मान्यता आपी. अहींथी वधु प्रतिमाओ मेळववानी लालचे तेमणे उतावळे स्तूपनुं खोदकाम कराव्युं, जेथी स्तूपनुं स्थापत्य केवुं हतुं के केटला मन्दिरो, उपाश्रयो, धर्मशाळा, वगेरेना पायाओ हता तेना पर ध्यान न अपायुं. अन्ते अे Site ने पूरी दईने विशाळ प्रतिमाओ, स्तम्भो, शिल्पो इत्यादि विविध म्युझियमोमां मोकलवामां आव्या. सौथी वधु अवशेषो लखनउना म्युझियममां छे.

मथुरानगरनुं शास्त्रोमां महत्त्व :

मथुरानगरीना उल्लेखो ज्ञातासूत्र, प्रज्ञापनासूत्र, महापुराण वगेरे ग्रन्थोमां मळे छे. जैनोना पवित्र यात्राधामना रूपमां आ नगर सदीओथी जाणीतुं हतुं. महुरी - महुराउरी - मथुरापुरीने 'जगचिंतामणी चैत्यवंदन'मां दुःख अने पापनो नाश करनार सुपार्श्वनाथना तीर्थ तरीके वन्दन कराय छे – ''महुरि सुपास दुहदुरिअ-खण्डण''.

मथुराना देवनिर्मित स्तूपना उल्लेखो आवश्यकनिर्युक्ति, आवश्यकचूर्णि अने टीका, निशीथचूर्णि, व्यवहारचूर्णि-टीका वगेरे घणा जैन शास्त्रोमां जोवा मळे छे. निशीथचूर्णि वगेरेमां स्तूपने देवीअे निर्माण कर्यो होवानी कथा उपरान्त अेना स्थापत्यनो प्रकार वर्णव्यो छे.

आचार्य संगमसूरि रचित 'तीर्थमाळा', सोमदेवसूरिना 'यशस्तिलकचम्पू'

काव्य, तथा अन्य रचनाओ - सर्वदेवचैत्यपरिपाटि, प्रभावकचरित्र इत्यादिमां मथुरानगरीने जम्बूस्वामीना कल्याणक अने देवीनिर्मित स्तूपना यात्राधाम तरीके ओळखावी छे. आचार्य जिनप्रभसूरिना 'विविधतीर्थकल्प'मां नवमा 'मथुरा-पुरीकल्प'मां मूळनायक सुपार्श्वस्वामी अने पार्श्वनाथनी विगत उपरांत गुरु-महाराजाओनी मथुरानी यात्रा वगेरेनो इतिहास पण दर्शाव्यो छे.

स्तूपने थयेल नुकसान, जीर्णोद्धार अने फरी विनाश :

गझनीथी आवेला हुमलाखोरोअे आखी मथुरा नगरीनो १०१८मां नाश कर्यो. गझनीअे अेनुं वर्णन करता लख्युं छे के ''स्तूपना जेवुं सुन्दर बांधकाम कोई मनुष्य धारे तो कुशळ बे हजार कारीगरोने लई खूब धन वापरे तो पण बसो वर्षे आवुं सुन्दर भवन निर्माण न करी शके... लोको कहे छे के अेने देवीअे बनावेल छे''. अेणे स्तूपने नष्ट कर्यो अेना पांच ज वर्षमां मथुरा संघे अेनो जीर्णोद्धार करी लीधो हतो अेवुं ई.स. १०२३नी सालमां अने त्यारबाद ६३ वर्ष सुधी पण अे स्थळे भरावेल प्रतिमाओना आधारे कही शकाय के अे यात्रानुं मोटुं धाम हतुं. त्यारबाद त्रणसो वर्ष पछी जिनप्रभसूरि यात्राअे आव्या त्यारे पण स्तूप सारी स्थितिमां हतो.

स्थळनुं नाम कंकाळी टीला शा माटे :

भारतदेश पर दशमी सदीना परदेशी आक्रमणोमां सोमनाथ, भरुच, काशी अने मथुरा विशेषपणे क्षतिग्रस्त थया हता. अेमां मथुरानो देवनिर्मित स्तूप पण हतो. आक्रमणकारोअे नोंधेला वर्णन अनुसार तेओ पांच वार ऊंचाईवाळी पांच सोनानी प्रतिमाओ तथा अेना नेत्रोमां जडेला रुबी वगेरे अढळक संपत्ति लूंटी गया. खेदानमेदान थयेला स्तूपनो जीर्णोद्धार मथुराना जैन संघे पांच ज वर्षमां कराव्यो. अकबरना राज्यमां पण आ स्थळे टोडरमले नवा स्तूपो बनाव्याना उल्लेखो छे. परन्तु त्यारबाद नादीरशाह अने अहमदशाह अब्दालीना आक्रमणोमां सम्पूर्ण मथुरा नगर नाश पाम्युं अने अंते त्यांना ख्यातनाम मन्दिरो अगणित टेकराओना रूपमां पेरवाया जेमां मुख्यत्वे चोबाराटीला, कटरा केशवदेव टीला, लक्ष्मणगढी, चोर्याशीटीला, कंकाळीटीला वगेरे हता. आ सर्वमां कंकाळी टीलो खूब विशाळ अने ऊंचो हतो. लोको पोताना घर बांधवा माटे अहिंथी इंटो लइ जता हता. उपरान्त आ स्थळेथी लोको देवीनी आकृतिवाळा स्तम्भो खेंची काढी

तेने स्थापीने देवमन्दिर बनावता हता. कोई अेक व्यक्तिअे आवा ज स्तम्भनी स्थापना अहिं करी अने अेणे मन्दिरनुं नाम कंकाळीदेवीनुं आप्युं जेना कारणे आ टेकरो कंकाळीटीला तरीके जाणीतो थयो. स्तूप अने जैन मन्दिरोने श्रावको धीरेधीरे विसरी गया. परन्तु स्थानीय लोको अे टेकराने जैनी टीला तरीके ओळखता हता अेम ग्रोवसेअे ''मथुरा - अ डीस्ट्रीक्ट मेमोर''मां नोंध्युं छे. मथुरामां जे स्थळे जम्बूस्वामीनुं निर्वाण ८४ वर्षे थयुं हतुं अने ज्यां तेमनां पगलां श्री हीरविजयसूरिजीना शिष्ये स्थापित कराव्यां हतां ते मन्दिर पण नाश पाम्युं हतुं. त्यांथी पण घणी प्रतिमाजीओ, स्तम्भो वगेरे मळी आव्या. आ स्थळ आजे पण चोर्याशीना नामे जाणीतुं छे ज्यां अेमनी यादमां सुन्दर दिगम्बर मन्दिर तैयार थयुं छे.

स्तूपनी प्रतिमाओनुं वैविध्य अने शिल्पो :

अहिंथी मळेल आदीश्वरजीनी सर्व प्रतिमाओ केशसहित छे. तो पार्श्वनाथनी धरणेन्द्रदेवना छत्र साथेनी छे. उपरान्त अरिष्टनेमिनी मूर्ति कृष्ण-बलराम साथे जोवा मळे छे. आवी प्रतिमा मथुरानगरनी विशिष्ट कलाकृति गणाय. सर्वतोभद्र प्रतिमाओ खड्गासनमां स्तम्भ उपर स्थापित कराती हती.

प्राचीन शिल्पोमां अेक अगत्यनुं शिल्प प्रभु महावीरना गर्भहरणनुं छे, जेमां आसन पर हरिणैगमेषी देव बिराज्या छे. उपरान्त अेना पर 'भगवान नेमेशो' शब्द अंकित छे. बीजा अेक शिल्पमां ऋषभदेवजीने अप्सरा नीलांजनानुं नृत्य जोतां जीवननी क्षणभङ्गुरता समजाई अने दीक्षा माटे प्रयाण कर्युं अे प्रसङ्गनुं अङ्कन छे. आ जैन शिल्प भारतीय नृत्यकळामां अति प्राचीन गणाय छे. विश्वनी सौथी प्राचीन देवी सरस्वतीनी प्रतिमामां तेनी स्थापनानी तारीख, सरस्वतीनो नामोल्लेख, हस्तप्रत, जैनसाधु वगेरे छे. अहिंना स्तूप अने मन्दिरोना उत्खननमां चक्रेश्वरी, लक्ष्मी, अंबिका, कृष्ण, बलराम, सूर्य, कुबेर वगेरेनी स्वतन्त्र मूर्तिओ मळी छे. जैनोनुं आ अेवुं स्थळ छे ज्यांथी दरेक काळनी जिनप्रतिमाओ प्राप्त थई छे. अहिंना शिलालेखोमां गुरुमहाराजोनां नामो अने वंशावली कल्पसूत्र अने नन्दीसूत्रनी पट्टावलीओने अनुरूप होवाथी जैनधर्मनी प्राचीन स्थिति जाणवा मळे छे.

मोहें-जो-डेरोनी सभ्यता पछीनी जैन स्तूपनी इमारत :

ई.स. १८८८-१८९२ सुधीमां ब्रिटिशरोअे मथुरानगरना घणा टेकराओनुं

खोदकाम कराव्युं तेमां आ स्तूपनो टेकरो पण हतो. आ अति विशाळ स्तूपमांथी घणां शिल्पो अने प्रतिमाओ प्राप्त थया. अेनी इंटो तथा स्तूपना स्थापत्यनुं बारीकाईथी अवलोकन करीने विन्सन्ट स्मिथे जणाव्युं के – ''मोहें-जो-डेरोनी प्राचीन सभ्यता पछी अन्य कोई प्राचीन इमारत भारतमां मळी आवेल होय तो अे जैनोना आ स्तूपनी छे.'' मोटाभागना विद्वानो अेने १०००-१२०० ई.स. पूर्वेथी पहेलानी गणे छे. आर. सी. शर्मा पण स्तूपना बांधकामोना अवशेषोमां पाणीना निष्कासननी व्यवस्था जोईने उपरोक्त विधानने टेको आपे छे.

अेक प्रतिमा लेखमां शक-कुषाण संवत ७९ आपी छे. अेना लेख मुजब ''संवत ७९, वर्षाऋतुना चोथा महिनाना वीसमा दिवसे कोटिकगणनी वैरी शाखाना आचार्य वृद्धहस्तिअे मुनिसुव्रतस्वामीनी आ प्रतिमानुं देवनिर्मित स्तूपमां स्थापन कराव्युं''. आ प्रतिमामां प्राचीन समयमां अहिंना स्तूपने देवनिर्मित कहेवामां आवतो हतो अेवो अगत्यनो दस्तावेजी पुरावो छे. अहिं साधुना हाथमां मुखवस्त्रिका देखाय छे.

अेक अन्य प्रतिमाना पबासनमां अेक स्त्री गोचरी वहोरावबा माटे पात्र लईने बिराजी छे ज्यारे साधुना अेक हाथमां झोळी अने बीजा हाथमां प्रतिलेखना छे. अेक खण्डित मूर्तिनुं फक्त पबासन ज रह्युं छे. अेमां सचेलक अने अचेलक बंने मुनिओ साथे उभा छे. शिलालेखवाळी सरस्वतीनी प्रतिमाना हाथमां हस्तप्रत छे. अेक तरफ जैन साधु हाथमां कुम्भ लइने बताव्या छे. अहिंथी प्राप्त थयेल अेक साधुनी प्रतिमा मस्तकविहीन छे परन्तु अेना हाथमां हस्तप्रत छे अने बीजो हाथ आशीर्वादमुद्रामां छे.

प्रतिमाओना पबासनो पर अंकित चतुर्विध संघ :

पुरातनकाळथी तैयार थती जैन प्रतिमाओ बे ज मुद्रामां होय छे – पद्मासन अने खड्गासन. मथुराकळानी पद्मासनवाळी प्रतिमाओना पबासन पर शीलालेखनी नीचे मध्यमां धर्मचक्र, तेनी जमणी बाजु साधुओ अने श्रावको तथा डाबी तरफ साध्वीओ अने श्राविकाओ कंडारेला होय छे. प्रभुना दर्शन साथे चतुर्विध संघने तीर्थङ्कर मानी नमस्कार करवानो कदाच आशय होई शके. दरेक प्रतिमालेखनो प्रारम्भ 'सिद्धम्' शब्दथी थाय छे जे दरेक आत्माने तेना सिद्धत्व पामवानी क्षमता दर्शावतुं होय अेवुं बनी शके. पद्मासनवाळी प्रतिमानी पादपीठ

पर प्रभुनुं सिंहासन दर्शाववा माटे सिंहनी पूर्ण आकृति बंने तरफना खूणाओ पर होय छे जे आ काळनी विशेषता गणाय.

आयागपटो, तोरणो अने अलङ्कृत बारशाख :

प्राचीन समयनी उत्तममां उत्तम कलाकृतिओनी यादीमां विशिष्ट नाम आयागपट के शिलापटनुं छे. आ स्थळेथी २७ जेटला शिलालेखयुक्त आयागपटो मळ्या छे. शिलालेखोमां अङ्कित प्राचीन ब्राह्मी लिपिना शब्दोना आधारे (On the basis of palaeographic and aesthetic ground) विद्वानो ए सर्वने ई.पूर्वे स्थापित थयेला जणावे छे. आ प्रकारना शिल्पोनी विशेषता नीचे मुजब छे –

नवकारमन्त्रना प्रथमपदथी शिलालेखनो आरम्भ थाय छे. बे फूटना चोरस पत्थरना पट पर उत्कीर्ण कलामां स्वस्तिक, नन्द्यावर्त, धर्मचक्र, सम्पूर्ण स्तूप, आर्यावती देवी उपरान्त मंगळ प्रतीको दृष्टिगोचर थाय छे.

अहिं केन्द्रमां जिनेश्वरनी मूर्ति अने अेनी चारे बाजु सम्यक्ज्ञान, दर्शन अने चारित्रनी रत्नत्रयीनी मध्यमां बिराजमान अरिहंतनी मूर्ति पर छत्र अने चैत्यवृक्ष होय छे. त्रण लोकना जीवो रत्नत्रयीना सिद्धान्तना आधारे सिद्धत्व पामी शके छे अेवुं प्रतिपादन अहिं जणाय छे.

केटलाक अगत्यना आयागपटो, नीचे मुजब छे –

१. लोणशोभिका नामनी गणिकाना आयागपट तरीके जाणीता शिल्पमां सम्पूर्ण स्तूप दृष्टिगोचर थाय छे – अहीं स्तूपना तोरणद्वार पर पहोंचवा माटे अष्ट सोपान नजरे पडे छे अेनी बन्ने तरफ गवाक्षमां क्षेत्रपाल-कुबेरादेवी जोवा मळे छे. उपरान्त, सुन्दर अलङ्कृत तोरण, रेलींग, त्रण वेदिकाओ, सौथी उपर चैत्यवृक्षनी वेलीओ अने अेनी नीचे अर्धगोळाकार डोम - स्तूपनुं मूळ माळखुं, बन्ने बाजुअे स्तम्भनी उपर धर्मचक्र अने सिंह अथवा हाथी कंडारेलो जोई शकाय छे. रायपसेनीयसूत्रना आधारे द्वारनी उभय बाजुअे सोळ-सोळ शालभञ्जिकाओ स्थापित करी छे. अहिं पण प्रतीक तरीके बन्ने तरफ आकर्षक भावभङ्गिमा धरावती अेक-अेक पूतळी स्थापित करेली देखाय छे. सौथी उपरना भागे बन्ने तरफ जैन साधु आकाशमार्गे स्तूपना दर्शने आवता बताव्या छे. तेओ जमणा हाथे वन्दन करे छे तथा तेमना डाबा हाथमां पात्र अने कंबल धारण करेला जोवाय छे.

२. शिवयशानो आयागपट जेने अेक नर्तके स्थापित कर्यो हतो. अेना

पर अर्धगोळाकार वृत्त छे, बन्ने तरफ शालभञ्जिकाओ, विशाळ स्तम्भ, प्रदक्षिणापथ अने अेनी चारे तरफ सादी रेलींग नजरे पडे छे. अहिं पण अलङ्कृत तोरण प्रवेशद्वारने अनेरी शोभा आपे छे. परन्तु सोपान पांच छे तथा अेनी आसपास गवाक्षनो अभाव छे.

अेक घणा ज विशाळ तोरणद्वार पर स्तूपनी पूजा माटे आवता अर्धमानवी अने अर्धघोडावाळा ग्रीक देवी-देवता कंडारेला छे. स्तूपनो आकार समवसरणने मळतो छे. आ तोरणमां पाछळ तरफ हाथी अने घोडागाडीमां बिराजेला भक्तो प्राचीन समयमां वाहनोमां केवी रीते लोको यात्राअे जतां तेनुं दृश्य छे. आ शिल्प विश्वमां प्रसरेल जैन धर्मना महत्त्वने आबेहूब रजू करे छे.

मङ्गळ प्रतिको :

लगभग १४ जेटला मङ्गळ प्रतीको विविध शिल्पोमां जोवा मळे छे अेमां मोटाभागना आयागपटोमां प्रतीको हारबंध कंडारेलां जोवाय छे. आ स्थळेथी त्रिरत्न, श्रीवत्स, भद्रासन, कुम्भ अने स्वस्तिक वगेरेनां अलग शिल्पो पण मळ्यां छे.

शालभञ्जिकाओ :

स्तूपना उत्खननमां मळी आवेल शालभञ्जिकाओ बे प्रकारनी छे : अेकमां स्वतन्त्र रीते अङ्कित थयेल छे, तो अन्यमां स्तम्भ उपर कंडारेली छे. आ शिल्पप्रकार मथुराकळानो होवाथी अे चारे तरफ कोतरणीवाळी तैयार कराय छे. स्तम्भ उपरनी पूतळीओ रायपसेणीयसूत्रना आधारे छे अेम वी. सी. अग्रवाले वर्णव्युं छे. आ पूतळीओ जेवां शिल्पो हवे देरासरना घुम्मट, स्तम्भ अने रङ्गमण्डपमां कंडारेलां जोवां मळे छे. तेओ स्त्रीओने रोजिंदा स्वरूपमां रजू करे छे, दा.त. मन्दिरमां पूजानी थाळी लईने जती स्त्री, दडो रमती स्त्री, हार्प नामनुं वाजिंत्र वगाडती स्त्री, अरीसामां पोताने जोती स्त्री वगेरे.

थोडां विशिष्ट शिल्पो :

अेक शिल्पने ओळखवामां इतिहासकारोने मुश्केली आवी. कारण के तेओ जैन देरासरोनी अेक सामान्य परम्पराथी अजाण हता. तीर्थङ्करोना जीवनना अगत्यना प्रसंगोने मंदिरोनी दिवालो पर दर्शन माटे कंडारवानी प्रथा आजे पण छे. एमां मोटाभाई नन्दीवर्धन पासे महावीरस्वामी दीक्षानी अनुमति मांगे छे अने

चन्दनबाळा प्रभु महावीरने बाकुळां वहोरावे छे अे बे प्रसङ्गोनो समावेश पण होय छे. आ बन्ने प्रसङ्गने वर्णवतां शिल्पो अन्य शिल्पोनी साथे स्तूपना स्थळेथी प्राप्त थयां छे. जेने तेमणे अजाणतां भगवान बुद्धना जीवन साथे जोड्यां छे. चन्दनबाळानुं शिल्प आगळ अने पाछळ बन्ने तरफ अङ्कन करेलुं छे. तेणे त्रण दिवसथी अन्न वापर्युं नथी अे बतावववा माटे ते अेक हाथ पेट पर बतावी हाथमां बाकुळानी थाळी पकडीने ऊभी छे. आ ज शिल्पनी पाछळनी बाजु ते दरवाजा पासे थाळी लइने पगमां बेडी साथे ऊभी छे अेवुं दर्शाव्युं छे.

विशिष्ट शिलालेखो :

त्रण शिलालेखो देवनागरी लिपिना छे, जेमां श्वेताम्बर, मूळसंघ, माथुरसंघ वगेरे शब्दो श्वेतांबरनी प्रतिमाओ पर आलेखन करेला छे अने 'श्रीदेवतेती' शब्दो मुख्यत्वे जोवा मळे छे. आ त्रण प्रतिमाओ विक्रम संवत १०३८ अने ११३४ वच्चेनी छे.

१. नंबर जे १४३, लखनऊ म्युझियम.
''संवत १०३६ (अथवा १०३८) कार्तिक शुक्ला अेकादश्यम्
श्री श्वेताम्बर मूलसंघेन पश्चिम चतुस्थि
क्यमं श्री देवनिर्मिता प्रतिमा प्रतिस्थापिता.''

२. नंबर जे १४४, लखनऊ म्युझियम.
''श्वेतांबर...माथुर...देवनिम्मीता प्रतिस्थापिता.''

३. नंबर जे १४५, लखनऊ म्युझियम.
''संवत ११३४ श्री श्वेतांबर श्रीमाथुरसंघ
श्रीदेवतेती
विनिर्मिता प्रतिमा करीता''

जैन समाजने पोताना किमती इतिहासमां रस पडे अेवी असंख्य नवी नवी माहितीओ अहिंथी जाणवा मळे छे.

C/o. A-११०५, झेनीथ टावर, पी. के. रोड,
मुलुण्ड (वे), मुंबई-८०
मो. ०९८२१८७७३२७

* * *

सन्दर्भसूचि

जिनप्रभसूरि, विविधतीर्थकल्प, सम्पादन - जिनविजयजी, १९३४
Devavimal, Hir Saubhagyam Rasa, 14th Sargah, 729
डॉ. रेणुका पोरवाल-
१. ध जैन स्तूप एट मथुरा : आर्ट ऐन्ड आइकोन्स, २०१६
२. जैन स्तूपनी कळा सम्पदा, लेख, अरिहन्त प्रकाशन, भावनगर, २०१४
३. सर्वतोभद्र इमेजीस फ्रोम कंकाळी टीला, मथुरा : शोध निबंध, ओरिएन्टल कोन्फ. श्रीनगर, २०१२
४. ध कन्सेप्ट ऑफ शालभञ्जिका इन जैन स्क्रीप्चर्स एन्ड स्कल्पचर्स, शोध निबंध, ओरिएन्टल कोन्फ., तिरुपति, २०१०
५. जिनप्रभसूरि'स अेकाउन्ट ओन मथुरा... लेख-संबोधि- एल.डी. इन्स्टि., २०११
६. जिनप्रभसूरि'स एकाउन्ट ऑन मथुरा इन विविधतीर्थकल्प - शोधनिबंध, ओरिएन्टल कोन्फ., कुरुक्षेत्र, २००८
७. मोक्षदायी मथुरा - हमारी धरोहर, लेख - जैन जगत, भारत जैन महामंडळनुं मेगेझीन, २००८
वी. एस. अग्रवाल-
८. मथुरा म्युझियम केटलोग, भाग-त्रीजो, १९५२
९. मथुरा आयागपट जर्नल, यु.पी., भाग-सोळ.
१०. भारतीय कळा, वाराणसी, १९६६
११. पी.के. अग्रवाल - मथुरा रेलिंग पीलर, वाराणसी, १९६६
१२. ग्रोवसे अेफ. एस. - मथुरा - अ डीस्ट्रीक्ट मेमोर - १८७४, १८८०, १८८३
१३. Doris Meth Shrinivasan - कल्चरल हेरीटेझ, न्यू दिल्ही, १९८९
१४. अे. घोष - जैन आर्ट एन्ड आर्किटेक्चर, १९७४
१५. जैन सागरमलजी - श्वेतांबर मूलसंघ एवम माथुरसंघ अेक विमर्श - लेख, जैन विद्या के आयाम, १९९८
१६. ल्युडर्स - मथुरा इन्स्क्रीप्सन्स, एडीटेड, १९६१
१७. शर्मा आर. सी. - ध जैन तीर्थ कंकाळी.

* * *

संत-समागम कीजे... साधो... मारी हेली

– डो. नाथालाल गोहिल

भारतीय आध्यात्मिक जगतमां 'सन्त' अेक अेवी संज्ञा छे के जेणे परमसत्ने, परमात्माने, अस्तित्वने आत्मसात् करेल छे ते सन्त छे. आवा सन्तोनुं सांनिध्य त्यारे ज मळे ज्यारे जो होय पूर्वनी ओळख-कमाई. जैन अवधू आनन्दघनजी कहे छे :

'साधु संगति बिनु कैसे पेयें, परम महारस धामरी'

साधुनी संगत, साधुनुं सानिध्य, परमसत्नी अनुभूति साधु सन्तनी कृपा विना शक्य नथी, आ परम महारसनो स्वाद माणी शकातो नथी. मारी सद्नसीबी अे रही छे के परिवारमांथी भजन अने सन्तोनुं सांनिध्य मळ्युं छे, आ संस्कारना बळे मने नन्दीग्राम मळ्युं. नन्दीग्राममां सन्त सांई मकरन्दभाईनुं सांनिध्य मळ्युं, तेमना प्रतापे मारी सूतेली चेतना जागी ऊठी. तेमना मार्गदर्शनथी भजन-संशोधनना मार्गे वळ्यो, लखतो थयो ने भजननो परम महारस आस्वादी शक्यो.

साधु सन्तना समागमथी अन्य साधु, सन्त, साधकना दर्शन थाय छे ने तेमनो पण कृष्णप्रसाद पामी शकाय छे. आवा पूज्य सन्त, साधु, साधक विजयशीलसूरि महाराज छे. तेमना सांनिध्यथी भजन ने साधनानी अवावरु केडीअे चालवानी तेमज संशोधन करवानी रीति मळी. सौ प्रथम तो तेमनुं निर्मळ ने बाल्यसहज हास्य स्पर्शी गयुं. तेमनी विमल वाणी सांभळता अनेकविध आध्यात्मिक दर्शननी माहिती मळी. तेओ जाणे के मात्र अंत्यवासी ज नहीं पण परिवारना वडील बन्धु होय तेम आपणा खबर अन्तर पूछी दिलासो आपे त्यारे आपणे परम शाता अनुभवीअे.

महाराज साहेब जैन साधु होवा छतां धर्मनिरपेक्ष रही सर्वधर्मसमभाव प्रगटावी रह्या छे. तेमने आ सृष्टि, जीवमात्रने ब्रह्मरूप मानता होय तेवो मारो अनुभव छे. तेओ गोधरा मुकामे चातुर्मास गाळी रह्या हता त्यारे विविध पन्थ परम्पराना सन्तो विशे संगोष्ठि तो राखे ज परन्तु तेनी साथे अरवल्लीनी पर्वतमाळामां रहेता आदिवासीओने बोलावी, तेमनी प्राचीन परम्परानो 'धूळानो पाट' - ज्योतपाट उपासराना आरासरामां योजी तेमना नृत्य साथे 'पजन'- भजन सांभळे त्यारे अेम

थयुं के संतसाधुने कोई मारुं के तारुं नथी, कोई नानुं के मोटुं नथी, जुदा जुदा पंथना वाद-विवाद साथे कोई लेवा देवा नथी. सन्त लाओत्से कहे छे :

'There fore the sage is square but does not cut others,
He is angled but does not chip others,
He is Straight but does not stretch others,
He is bright but does not dazzle others.'

अर्थात् : *'अेटले संत चतुष्कोण छे परंतु अन्यने कापता नथी;*
तेने खूणा छे परन्तु अन्यनां छोडियां पाडता नथी;
ते सीधा छे परन्तु अन्यने ताणता नथी;
ते तेजस्वी छे परन्तु अन्यने आंजता नथी.'

जैन साधुना चातुर्मास अेटले तेमना माटे स्वाध्याय अने साधनाना दिवसो. आ स्वाध्याय अने लेखनना प्रतापे जैनसाहित्यना भण्डारो अभरे भर्या छे. आ भण्डारोमां प्राचीन ने दुर्लभ हस्तप्रतो, आध्यात्मिक दर्शन, चिन्तनना ग्रन्थो अने केटलीक उत्तम कृतिओ के जे हस्तप्रतमां पडी छे ने प्रकाशित थई नथी तेवी कृतिओनी शोध, तेनी समीक्षा, तेने प्रकाशित करवी तेमज साहित्यनी दृष्टिअे, इतिहासक्रमनी दृष्टिअे, भाषानी दृष्टिअे जे उत्तम छे तेने आजे 'अनुसन्धान' सामयिकना माध्यमे पूज्य विजयशीलसूरि महाराज करी रह्या छे ते अेक जैन साहित्यनुं यशस्वी पृष्ठ बनी जशे. आ सामायिक नित्य मळवाथी मारे पण अनायास अभ्यास थतो रह्यो छे. आजे 'अनुसन्धान'७५मा अङ्कमां प्रवेशे छे तेनो राजीपो अनुभवुं छुं.

महाराज साहेब गोधरा, अमदावाद, तगडी के महुवामां चातुर्मास गाळता होय त्यारे जवानी आदत पडी गई छे, शुं करुं ? नेडो बंधाई गयो छे ने ए मनभावन रह्यो छे. तेओनी निश्रामां मारे 'स्वामी आनंदघनजी अने कबीरसाहेबना पदोनी तुलना' विषये स्वाध्याय प्रगट करवानी तक मळी हती तेमां जैन साधुनुं अनुभूति दर्शन आनन्दघनजीना पदमां गवायुं छे याद आवे छे :

'निसानी कहा बतावुं रे, तेरे अगम अगोचर रूप
रूपी कहुं तो कबु नहीं रे, बंधे केसे अरूप
रूपारूपी जो कहुं प्यारे, अैसे न सिद्ध अनुप.'

आ अगम अगोचर रूपनी कोई निशानी कही शकाय तेम नथी, कारण अे शब्दातीत छे. जो रूप कहेवा जइअे तो ते अरूप छे तेनुं शुं ? छतां आ दिव्य अनुभूतिने सन्तोअे वाणीना माध्यमे प्रतीकात्मक के मरमी वाणीमां अभिव्यक्त करेल छे. सन्तवाणी-भजनमां आ प्रकारनी अनुभूतिनी अभिव्यक्तिने 'हेली' प्रकारनी भजन रचनाओ कहे छे. भजननुं आ रूप स्वाध्याय, प्रकाशनथी वंचित छे तेने 'अनुसन्धान' सामयिकना माध्यमे प्रगट करवा इच्छुं छुं.

'हेली' भजन प्रकारमां जे 'हेली' शब्द प्रयोजायो छे तेनो 'भगवत गोमण्डल'ना शब्दकोश प्रमाणेनो अर्थ थाय छे : 'हेली' - लहेर, 'हेली' - साहेली, 'हेली' - वगर अटक्ये पडतो वरसाद. अेटले सन्त-भक्तने ज्यारे अनुभूतिमांथी आनन्दनी लहेर, आनन्दनी हेली उभराय ने जे भजन रचाई जाय ते 'हेली' छे. आ अखण्ड नूरनी वरसती हेली मेघनी हेली मंडाय तेवी छे. आ अनुभूतिना मेघनी हेली केवी छे'? तेनो जवाब सन्त भवानीदास आपे छे के –

'अंबर वरसे ने अगाध गाजे, दादुर करे रे किलोळ;
कंठ विनानी अेक कोयल बोले, मधरा मधरा बोले मोर.'

हवे आ अम्बर वरसे ने अगाध गाजे अेटले सहस्त्रारमांथी थती अमृतनी वर्षा. आ वर्षा थतां सन्त-साधु साधकने अनाहत नाद संभळाय छे, जाणे के दादूर करे रे किलोल. बीजो संकेत मूके छे कंठ विनानी कोयल बोले ने मधरा बोले झीणा मोर. अहीं कोई बहारना सूर के शब्दनी वात ज नथी. कच्छना सन्त मेकरण कापडीअे पण गायुं छे के - 'वरसे धरती भींजे आसमान'. अहीं धरती वरसे छे ने आकाश भींजाय छे एटले मूलाधार (धरती)थी आरंभी कुण्डलिनी शक्ति सहस्त्रार (आसमान) सुधी पहोंचे तेनी आ अखण्ड नूरनी, आनन्दनी हेलीनी शब्दाभिव्यक्ति छे.

हवे आ अनुभूति, आ आनन्दनी लहेर कहेवी कोने ? गमे तेने कहेवा जइअे तो मूरखमां खपीअे ने वळी जे समजी शके तेवा मायला-भायलाने अेटले के केटलीक वातो तो जे नजीकनी बहेनपणी होय, साहेली होय तेने ज पियु मळ्यानी वात करी शकाय. अेटले अहीं सन्तो 'साहेली'ने उद्देशीने कहे छे तेमां 'सा' गळाई गयो ने रहे छे मात्र 'हेली' हे मारी हेली - साहेली ! शब्दकोशमां नोंधेलुं छे : 'हे अलि' → 'हेल्लि' → 'हेली'. आपणे लोकबोलीमां साहेलीने

'अेली' कही बोलावीअे छीअे ते 'हेली' शब्द बनी जाय छे ('अ'नो 'ह' बोलीमां छे.)

सन्तवाणीना मरमने समजवा माटे आ साहेलीनो अर्थ पण बदलवो पडशे. अहीं साहेली अेटले दृश्यमान सखी, सहियर नथी. सन्तो 'सुरता'ने 'साहेली'- 'हेली' तरीके उद्‌बोधे छे. सन्त पोतानी अनुभूति जे घटभीतरनी सुरता छे तेने संभळावे छे. आ रमत ज कंईक अद्‌भुत छे जे अगम अगोचरनी शोध छे, ते घटमां रमी रहेल छे. 'ब्रह्माण्डे सो पिण्डे' आ दर्शन पण सुरताने कहेवाय छे.

संतवाणीमां समयनी दृष्टिअे प्रथम 'हेली' प्रकारनी भजनरचना कबीरनी मळे छे :

'तीहां पोंचत वीरला संत
मारी हेली कठणपंथ वैरागका'

आ अनुभूतिनुं दर्शन के ते स्थाने पहोंचवुं सहेलुं नथी. जे कोई वीरला सन्त हशे अे ज त्यां पहोंची शकशे. आ वैरागनो पन्थ कठिन छे. मायला दुश्मन (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अेषणा)ने मारीने मन, वचन ने कर्मथी वैरागी थवानुं छे. हंसात्मानी आ मानसरोवर सुधीनी यात्रा छे. हंस बनीने जशो तो मानसरोवरना साचा मोती चणवा मळशे. माटे प्रथम तो तमारे तमारी 'कगवावृत्ति' - कागवृत्ति छोडवी पडशे, मन स्थिर राखी, मायाथी मुक्त थई सुरताने ठेरावो. त्यारे कबीरनुं दर्शन कहे छे :

'हे मारी हेली रेन समाणी अेक भाणमां, भाण समाया आकाश,
आकाश समाणा अेक वचनमां वचन कोई वीरला पास मारी हेली.'

आ 'वचन'नी विगते वात थई शके, परन्तु ते अहीं अस्थाने छे.

'हेली' प्रकारनी भजनरचनाओ सौथी विशेष भाणशिष्य हंसदासनी मळे छे. आ 'भाण' रविभाण सम्प्रदायना भाणसाहेब नथी. मूळे सिन्ध-पाकिस्तानथी आवेला, कच्छमां वसेला, 'हंसनिर्वाण साहेबपन्थ'ना स्थापक, प्रचारक. हंसनिर्वाण साहेबनी भजनरचनाओ हेली प्रकारनी छे जे अति लोकप्रिय छे. जेमां अनुभूतिनुं दर्शन अने मरमी प्रश्नोत्तरी 'हेली'मां सांभळवा मळे छे तेमांनी सौथी नोंधनीय हेली छे :

'हे मारी हेली चडी शिखर पर
जोई ल्यो बेहदका प्रमाण.
दोई कमलकी बीचमें भमरा करत गुंजार;
सुगंध बहेंके फूलनी, फूल खील्या अपार.

मारी हेली उन भ्रमराने पांख नहीं, बीना पांखे उड जाइ,
अमी सरोवर ज्यां भर्या उनमें जइ समाय.

मारी हेली उन सरोवरने पाळ नहीं, नहीं सरोवर का रूप,
विना पाळे त्यां नीर भर्या, अेसा खेल अनूप.

मारी हेली भमरा नीर पी शके, पीतां त्रुपत होइ,
भाण कहे **हंसदास**ने अेना खेल हे सोई.
मारी हेली चडी शून्य शिखर पर.

अर्थात् मारी सुरता शिखर पर चडी. आ शिखर अेटले चिदाकाशमां आवेल शून्य शिखर. त्यां कोई हद नथी. त्यां जोइ ल्यो बेहदका प्रमाण. कबीर ते स्थानने शून्यशिखर कहे छे.

'सुन्न मंडलमें घर किया, बाजे शब्द रसाल'

आ सन्त साधुनी सहज योगसाधनानुं दर्शन छे. आ सुन्न घरमां अनाहतनाद बाजी रह्यो छे. 'त्यां दोई कमल की बीचमें-' त्रिनेत्रमां 'भमरा करत गुंजार' परन्तु आ भमराने पांख नथी छतां ते उडी शके छे. रविसाहेब कहे छे : 'चांच बिन चूगना, पाँव बिन चलना, विना पंखसे ऊड जाय'. भवानीदासे 'कण्ठ विनानी कोयल बोले' तेम कह्युं छे. अेटले सन्तोने समान दर्शन थयुं छे.

सन्त रैदास कहे छे : 'जहांक उपजा तहां बिलाई, सहज सुन्नमें रहो लुकाइ.' सन्त दादूदयाल तेने 'सुन्न सहज महि बुनत हमारी' कहे छे.

आ शिखर उपर अमृतनुं सरोवर छे परन्तु तेने कोई पाळ नथी छतां नीर भर्युं छे एटले आ अनुपम खेल छे. हे मारी सुरता ! आ नीर पीतां त्रुपत - तृप्त थवाय छे. आ प्रकारे जे अनुभूति प्रगट थई तेने 'हेली' स्वरूपनुं भजन कहे छे.

'हेली'नी अेक बीजी विशिष्टता अे छे के तेमां सन्तोना सवाल जवाब

आपे छे. आ सवाल पूछनार ज तेनो जवाब आपे छे. नमूना रूपे जणावुं तो - हंसदास कहे छे :

प्रश्न : 'कोन जगाडे नामने, कोन जगाडे प्रेम;
कोन जगाडे पुरुषने, कोन जगाडे ब्रह्म.'

जवाब : 'मारी हेली सुरता जगाडे नामने, नाम जगाडे प्रेम;
प्रेम जगाडे पुरुषने, पुरुष जगाडे ब्रह्म.'

आ समग्र प्रक्रिया नामसाधनानी छे. आ नामसाधनाथी भीतरनी चेतनाओ जागे छे.

प्रश्न : 'मारी हेली कोन ब्रह्मका रूप है, कौन ब्रह्मका स्थान;
कोन ब्रह्मका बेसणा, कौन ब्रह्मका मेलाण'.

जवाब : 'मारी हेली आनंद ब्रह्मको रूप हे, गगन ब्रह्मका स्थान;
निरांत ब्रह्मका बेसणा, अप्रोक्ष ब्रह्मका मेलाण'.

अर्थात् आनन्द ब्रह्मनुं रूप छे, गगन-चिदाकाश-शून्य शिखर ब्रह्मनुं स्थान छे. निरांत अेटले दरेक प्रकारना संकल्प-विकल्पथी मुक्त थाय ते स्थितिने कहे छे. पछी तेने सुख-दुःख, जन्म-मरण, मारुं-तारुं, ऊंच-नीच आवा कोई विकार रहेता नथी. आ स्थितिने ब्रह्मनुं बेसणुं कहेवामां आवे छे. ने आ ब्रह्मनुं मेलाण-पथारो सचराचरमां ने अपरोक्ष विलसी रहेल छे. आवा ब्रह्मनी अनुभूति दर्शननी अभिव्यक्ति 'हेली' प्रगट थयेली अनुभवाय छे. आवुं दर्शन थया पछी शुं ? भादुदास कहे छे :

'आनंद हेली उभराणी संतो
आनंद हेली उभराणी रे जी.'

मात्र आनन्द माणी शकाय छे. आ आनन्द केवो ? अलौकिक, मात्र हरखने हेली चडे छे. तेम छतां आपणे तेमने पूछीअे के त्यां शुं छे ए तो कहो :

'चंद्र सुरज तो वां घर नाहीं, नहि पवन नहि पाणी;
अष्ट कूळ पर्वत उस घर नांही, नहि वेद नहि वाणी.'

सन्तोअे दृश्यमान जगतथी, वेद अने वाणीथी पर थईने ऊडवानो मार्ग

दर्शावे छे. आपणने बीजो सवाल थाय के तो पछी आ स्थाने, आ दर्शने पहोंचवानो मार्ग शुं ? भादुदास कहे छे :

'सोहम् वचनने साधीने जोतां, निर्गुण जात जणाणी;

अधर तखत पर आप बिराजै, पोते पुरुष पुराणी.'

आ सोहम् वचननी साधना छे, निर्गुण दर्शन छे. अधर तखत पर नाम, रूप, गुण रहित मात्र नरनो प्रकाश छे जेनुं सन्तोओ प्रतीकात्मक रूप 'ज्योत'-प्रकाशनुं दर्शावेल छे. संतो बोलवानुं बंध करी मात्र आनन्दहेली उभराणी अेटलुं ज कहे छे.

भजनना आ 'हेली' स्वरूपने प्रथम वखत मूकी रह्यो छुं त्यारे तेमां समीक्षाने अवकाश छे. नवो दृष्टिकोण उमेराशे तो गमशे. आजनी तके तो 'हेली'नां लक्षणो नीचे प्रमाणेना जणायां छे.

१. 'हेली' सन्त-भक्तने थयेली अनुभूतिनुं दर्शन करावे छे.

२. 'हेली' साहेली, सुरताने उद्देशीने कहेवामां आवेल छे.

३. 'हेली'नी ध्रुवपंक्ति (प्रथमपंक्ति)मां 'हेली' शब्दप्रयोग आवे छे.

४. 'हेली' निर्गुण सन्त-भक्त-साधुनो साधनामार्ग दर्शावे छे.

५. 'हेली'नुं दर्शन मायला, भायला, आ मार्गना जाणतलने कहेवाय छे.

६. 'हेली' सचराचरमां अपरोक्ष विलसी रहेला परमात्मानुं दर्शन करावे छे.

७. 'हेली' भजन प्रकार ब्रह्ममुखी वाणी (वाणीना चार प्रकार पाड्या छे. प्रथम प्रहरमां जीवमुखी, बीजा प्रहरमां गुरुमुखी, त्रीजा प्रहरमां शिवमुखी अने चोथा प्रहरमां ब्रह्ममुखी वाणी गावामां आवे छे) रात्रीना चोथा प्रहरमां गावामां आवे छे. आ हेली गवाया पछी अजवाळुं थाय ने ते पछी रामगरी ने ते पछी प्रभाती गवाय छे.

अन्ते आनन्दनी हेली ऊभराय छे.

* * *

प्रभास-पाटणमां जैन धर्म

– हसमुख व्यास

पुराण प्रसिद्ध 'सोमनाथ' सामान्य रीते भगवान शिव-सोमनुं धाम-तीर्थ मनाय छे. परन्तु 'सोम' रुद्रनो पर्याय छे तो 'चन्द्र'नो पण वाचक छे. शतरुद्रीय (शुक्ल यजुर्वेद १६-७९)मां 'नमः सोमाय च रुद्राय च' अे रीते 'रुद्र'नो पण वाचक छे. आ सामासिक शब्दनो विग्रह-उमया सह वर्तमानः सोमः. उमा(पार्वती)नी साथे रहेल[१] भगवान सोमनाथ ज्यां बिराजे छे अे 'प्रभास' क्षेत्र अति प्राचीन छे. महाभारतमां सुराष्ट्रनां मुख्य बे नगरोना उल्लेख मळे छे : द्वारका अने प्रभास. म.भा.मां तेने 'तीर्थस्थान' गण्युं छे. अर्जुनना वनवास दरम्यान ते द्वारका तरफ जतो हतो त्यारे प्रभासना प्रदेशमां पण गयेल अने श्रीकृष्ण तेने प्रभास आवी मळेल. पुराण प्रभासने आनर्तसार (आनर्तदेशना साररूप) कहे छे. प्रभास-सोमनाथनी विशिष्टता प्रागैतिहासिककाळ जेटली प्राचीन छे.

भारतनी त्रण प्राचीनतम धार्मिक परम्परामांनी एक ते जैन. त्रणे मळीने हिन्दुस्तानना प्राचीन धर्मनुं पूर्ण स्वरूप बंधाय छे.[२] वैदिक आर्यसंस्कृतिना निर्माण अने घडतरमां वैदिक अने बौद्ध संस्कृतिओनी जेम अने जेटलो ज जैन धर्मसंस्कृतिनो पण फाळो छे.

प्रभास जैनोनुं पण प्राचीन-पवित्र तीर्थ मनाय छे. जैन अनुश्रुति परम्परा प्रमाणे जैनोना प्रथम तीर्थङ्कर श्री आदिनाथना पुत्र कुमार भरतना समयमां स्थापित थयेल. आ अंगेनी विसतृत माहिती कथा 'श्री शत्रुञ्जयमाहात्म्य' (सर्ग ५-८-१३-१४)मां वर्णित छे.[३] प्रस्तुत ग्रन्थ प्रभासने 'चन्द्रप्रभास' तरीके उल्लेखे छे. आ उपरांत प्राचीन-मध्यकालीन जैन ग्रन्थोमां प्रभासना देवपत्तन, सुरपत्तन, शिवपत्तन, सोमनाथ पत्तन, सोमपुर, देवका पाटण, देवकई पाटणि अने प्रभासपत्तन-पाटण व. उल्लेख मळे छे. स्कन्दपुराण सरखा ब्राह्मणीय ग्रन्थोमां जैन मन्दिरोना उल्लेखनी अपेक्षा राखी न शकवानो वसवसो श्री मधुसूदन ढांकी करे छे. अेनो उल्लेख अस्थाने नहि गणाय, परंतु जैन साहित्य-ग्रन्थोमां प्रभासमां जैन धर्मना पुष्कळ प्रमाणमां उल्लेख सन्दर्भ मळे छे. आमांनो सौथी अगत्यनो सन्दर्भ छे, वलभीथी आवेल ने अहीं प्रभासमां प्रस्थापित थयेल प्रतिमाओनो. आने जरा विगते जोईअे :

अेक समयनी गुजरातनी समृद्ध शक्तिशाळी मैत्रक राजधानी वलभी विद्यातीर्थ पण हती ते जैन धर्मनी महान प्रवृत्तिओनुं प्राचीन महाकेन्द्र हतुं. अहीं ज नागार्जुन सूरिना नेतृत्वमां आगमनी वाचना करायेल जे 'वलभीवाचना' तरीके प्रसिद्ध छे. (ई.स. ३००-३१३). आ पछी ई.स. ५४३-४६मां वलभीमां ज आचार्य देवर्धिगणि क्षमाश्रमणना नेतृत्वमां अन्तिम वाचना तैयार थई. हाल समस्त भारतमां श्वेताम्बर जैनो आ समीक्षित वाचनाने अनुसरे छे. आम क्षत्रप-मैत्रक समय दरम्यान वलभीमां जैनधर्मनुं बाहुल्य होवानुं सिद्ध थाय छे. अहीं चन्द्रप्रभुनुं चैत्य अने भगवान महावीरनुं प्रसिद्ध मन्दिर हतुं.

आ पछी विदेशी आक्रमणखोरो द्वारा वलभीभङ्ग (आठमा सैकानो लगभग अन्त भाग) थतां : अेक मत मुजब जैनोने तेनी पूर्व माहिती-अणसार आवी जतां जैनो वलभीमांथी अन्यत्र स्थळान्तर करी गयानुं मनाय छे. साथोसाथ तेओअे त्यांनी महत्त्वनी जैन प्रतिमाओने अन्यत्र खसेडी लीधेल; तेमांनी प्रमुख चन्द्रप्रभनी मूर्ति, अम्बा ने क्षेत्रपालनी प्रतिमाओ देवपत्तन-शिवपत्तनमां, अर्थात् प्रभासमां प्रतिष्ठित करायेल;[५] 'प्रबन्ध-चिन्तामणि'अने 'विविधतीर्थकल्प' जेवां जैन ग्रन्थोमां[६] चन्द्रप्रभनी प्रतिमा आकाशमार्गे शिवपत्तन-देवपत्तन गयानुं मळे[७] छे. आने गाळी नाखीअे तो, अे प्रतिमाओ सलामत-सुरक्षित स्थळ प्रभासमां प्रतिष्ठित करवा स्थलान्तर करायेल अे तारण नीकळे. वलभीथी छेक प्रभासमां प्रतिमाओ प्रतिष्ठित कराई ते अे समये प्रभास अे युगनुं प्रसिद्ध जैन केन्द्र हशे तेम मानी शकाय.

गुजराती भाषाना साहित्यनो प्रारम्भ जैनोना हाथे अर्थात् जैन मुनि कवि विद्वानोना हाथे थयेलो मनाय छे. रचना वर्ष धरावती सौथी पहेली जैन कृति शालिभद्रसूरिनो 'भरतेश्वरबाहुबलिरास' (वि.सं. १२४१-ई.स. ११८५) छे; ज्यारे रचना वर्ष धरावती सौथी पहेली जैनेतर कृति असाईतनी 'हंसाउली' (वि.सं. १४२९-ई.स. १३७१) छे. रचना वर्ष वगरनी अज्ञात कवि कृत 'वसन्तविलास' जेवी जैनेतर जणाती कृति थोडी वहेली रचायेली होय अेम मानीअे तो पण उगती गुजराती भाषामां रचना करवानुं पहेलुं साहस जैन कविओअे कर्युं छे अे हकीकत छे.[७]

आगळ कह्युं अे अर्थात् 'गुजराती' पहेलां अपभ्रंश युगना कविओमां पण जैनोनुं विशेष प्रदान छे. आ अपभ्रंशयुगना धनपाल नामना कविनी 'पाइयलच्छीमाला' (रचाया सं. १०२९, ई.स. ९७४) प्रसिद्ध रचना छे. मूळे अे

ब्राह्मण हतो ने पछीथी जैनधर्म स्वीकार्यो हतो. मालवपति मुंज सिन्धुराज अने भोजनी सभानो ते अग्रणी हतो. तेमणे १५ गाथाओनुं 'सत्यपुरमण्डन महावीरोत्साह' नामनुं अपभ्रंश काव्य लख्युं छे. आमां अेक अैतिहासिक विगत सचवाई रही छे. मारवाडना सत्यपुर-साचोर नामना नगरमां आवेल महावीरना मन्दिरनो म्लेच्छो भंग करी शक्या नहोता, अेम कहेतां धनपाल लखे छे :

भंजेविणु सिरिमालदेसु अनु अणहिलवाडउं,
चड्डावल्लि सोरट्ठु भग्गु पुणु देलवाडउं;
सोमेसरु सो तेहि भग्गु जणमणआणंदणु,
भग्गु न सिरि सच्चउरि वीरु सिद्धत्थह नंदणु.
....
पूणिहि लहुय तुरुक्क कांइ सच्चउरि जिणंदह.

सार : तुर्क लोकोअे श्रीमालदेश, अणहिलवाड पाटण, चन्द्रावती, सोरठ देलवाडा अने लोकोना मनने आनन्द आपनारा सोमेश्वर (महादेव)ने भांग्या, परन्तु सत्यपुर-(वर्तमान साचोर)मां आवेला सिद्धार्थपुत्र महावीरने अर्थात् तेना मन्दिर-मूर्तिने भांगी शक्या नहि.[८]

महमूदे ई.स. १०२६ (वि.सं. १०८२)मां सोमनाथ पर आक्रमण कर्युं होई आ कवि त्यां सुधी जीवित होवो ज जोइअे, तो ज उक्त वर्णन संभवी शके. आम, सोमनाथ परना प्रथम मुस्लिम आक्रमणनो प्रथम उल्लेख पण जैन कविनी रचनामां मळतो होई तेने महत्त्वनो मानवो रह्यो.

तो मध्यकाळ दरम्यान प्रभासमां अनेक जैन कृतिओनी नकल (हाथप्रत) थयानां प्रमाण मळे छे. जेमके,

१. पेथडरास - विक्रमना १३मां शतकमां थयेलां पोरवाड वंशना पेथडशाहना सत्कृत्योनुं आमां वर्णन छे. रास १५मा शतकना प्रारम्भे रचायानो मत छे. आ रासना अन्ते सूरपत्तननो उल्लेख छे.[९]

२. साम्ब-प्रद्युम्न प्रबन्ध अथवा रासनी अेक प्रत सं. १६५९मां देवपत्तनमां लखाणी.[१०]

३. सं. १५०९मां रत्नसिंह नामना कवि रचित 'रत्नचूड' नामना ग्रन्थनी सं.

१६६३मां 'प्रभासे' नकल थई.[११]

४. अंजनासती रास (रच्या सं. १६६७)नी ६०३मी कडीमां 'देवकिपाटणि अवतरिउ रे' उल्लेख.[१२]

५. हीरविजयसूरिअे सं. १६८५मां 'देवपत्तने' लाभ प्रवहण सज्झाय कृति पूर्ण करी. आ कृतिनी प्रारम्भनी ७२ कडी खम्भातमां रचायेल.[१३]

६. मूळ सं. १६६९मां रचायेल मदनकुमार रास अथवा चोपाईनी मुनि पुण्यसागरश्रीअे देवकापत्तने संवत १७००मां नकल उतारी.[१४]

७. त्रिभुवनकुमार रास (रच्या सं. १७१२)नी अेक प्रत सं. १७३६मां देवपत्तन नगरे उताराई.[१५]

८. श्रीपाल (सिद्धचक्र रास) रच्या सं. १७२६नी सं. १७४०मां 'सुरपत्तन'नो उल्लेख.[१६]

* चैत्यपरिपाटी (रचना सं. १४८७)मां गुजरात-सौराष्ट्रना विभिन्न स्थळोना उल्लेखमां सौराष्ट्रना स्थळोमां-अजाहरि, दीव, ऊन, कोडियनारि, देवकीपाटण, वेलाउल व.नो उल्लेख.[१७]

आठमा शतकना अन्तभागमां के नवमाना प्रारम्भमां प्रभासमां बोटिक-क्षपणक के दिगम्बर सम्प्रदायना अस्तित्वना पुरावारूप कोई मन्दिर होवानो पुरावो मळे छे : हाल जूनागढ (सक्करबाग) संग्रहालयमां संरक्षित आदिनाथनी मस्तकविहीन प्रतिमा प्रभासथी लाववामां आवेली कहेवाय छे. तो, श्वेताम्बर सम्प्रदायना सौथी प्राचीन मन्दिर परम्परा अनुसार वलभी चन्द्रप्रभुनुं मनाय छे. अलबत्त आनी साथे संलग्न ८ थी ११ शतक सुधीना शिल्प के स्थापत्यना कोई पुरावा-प्रमाण दुर्भाग्ये मळ्या नथी. कदाच महमूदना आक्रमण समये चन्द्रप्रभ मन्दिरनो नाश थयो होय ने पाछळथी जीर्णोद्धार समये जूना खण्डित तमाम अवशेषो दूर कर्या होय. हालना चन्द्रप्रभ मन्दिरनो जूनो भाग स्पष्ट रीते १७मी सदीनो जणाय छे. ई.स. १२६४मां मांडवगढ (मण्डपदुर्ग)ना पेथड शाहे महातीर्थ[१८] यात्रा करेल अे दरम्यान तेने देवपत्तनमां सोमनाथ अने चन्द्रप्रभुनी वन्दना करतां दर्शाव्या छे, अे पण नोंधनीय छे. 'प्रबन्धचिन्तामणि' (ई.स. १३०५ रचनाकाळ)मां आचार्य हेमचन्द्र देवपत्तन-चन्द्रप्रभनो उल्लेख करतां मळे छे ते १२मी सदीमां

चन्द्रप्रभ जिनालयनुं अस्तित्व दर्शावे छे. सम्भवतः ई.स. १६१०मां आ मन्दिरनो जीर्णोद्धार थयो होवो जोईअे, त्यारथी अद्यापि तेनुं अस्तित्व अबाधितपणे चालु रहेल छे. छेल्ले प्रसिद्ध स्थपति स्व. श्री प्रभाशङ्कर सोमपुराना निदर्शन तळे तेनो मोटा पाया पर जीर्णोद्धार थयो. तो, कुमारपाळे (सोलंकी) पण देवपत्तनमां पार्श्वनाथ-चैत्य बंधाव्यानुं श्रीहेमचन्द्राचार्य तेना द्व्याश्रयमां कहे छे. प्र.चिं.मां श्री सोमेश्वरपत्तनना कुमारविहारनो जे उल्लेख छे, ते उक्त जिनालय मानी शकाय. प्रस्तुत जिनालय १२मी सदीना अन्त भागे बंधायुं होवानुं अनुमान करी शकाय.

सोलंकीयुग दरम्यान अहीं (प्रभासमां) जैन मन्दिरोनी जाहोजलाली हशे जे हालना चन्द्रप्रभ जिनालयना भूमिगृहमां संगृहीत जिन प्रतिमाओनां परिकरो इत्यादि परथी जाणी शकाय छे. अहीं हाल जुदा जुदा दश पबासण अने अेटला ज परिकरनां खण्डो छे. अहीं अेक वात नोंधीअे. प्रभास हिन्दु-जैन धर्मनुं समयांतरे तीर्थ रह्या कर्युं होई अहीं जैन देवालयो बंधायां होय अे सहज छे. तो, विधर्मी आक्रमणो दरम्यान ते तूट्यां-खण्डित पण थयां होय ए सहज छे. प्रभास पाटण अने वेरावल वच्चेना रस्ते दक्षिणे आवेल माईपुरी मस्जिद प्रभासनां प्राचीन स्थापत्योना अवशेषोमांथी बनावाई होवानो तद्विदोनो मत छे. माईपुरीना वितानती तमाम लाक्षणिकताओ १३मी सदीना प्रारम्भकाळनी छे. अेमां जैन चिह्नाङ्कनो पण छे. आज रीते जुमा मस्जिदमां पण बनेल छे. ई.स. १९२७मां डॉ. शार्लोटे अेमनी प्रभासनी मुलाकात वखते आ मस्जिदनी निरीक्षा कर्या बाद अे जैन मन्दिर होवानो अभिप्राय आपेल.[२०]

उलूघखानना प्रभास परना आक्रमण पूर्वे (ई.स. १२९८) प्रभासमां नीचे दर्शावेल जैन देवालयो विद्यमान हतां –

चन्द्रप्रभ जिनालय (दिगम्बर सम्प्रदाय)
चन्द्रप्रभ जिनालय (श्वेताम्बर सम्प्रदाय)
राजा कुमारपाल निर्मित कुमार विहार प्रासाद
(पार्श्वनाथ चैत्य)
वस्तुपाल निर्मित अष्टापद प्रासाद
तेजपाल निर्मित आदिनाथ जिनालय
पेथड शाह निर्मित (?) नेमिनाथ चैत्य.[२१]

सौराष्ट्रमां जैन धर्मना मूळ प्राचीन समयथी होवा छतां तेनो विशेष प्रचार-प्रसार क्षत्रप-मैत्रक समय दरम्यान थयो छे. तो, सोलंकी समय तेनो सुवर्ण समय छे. आ समय दरम्यान आचार्य हेमचन्द्रसूरिना कारणे ते विशेष फूल्यो-फाल्यो. आ बधा समय दरम्यान प्रभास पाटण पण जैन धर्मनुं अेक विशिष्ट तीर्थस्थान रह्यानुं प्राचीन-मध्यकालीन जैन साहित्यिक-धार्मिक-पुरातत्त्वीय पुरावाओना आधारे कही शकाय. अलबत्त उत्तर मध्यकाळथी तेनुं महत्त्व क्रमशः ओछुं थतुं गयुं के सीमित थतुं गयुं अेम कहीअे तो अन-उपयुक्त नहि लागे.

सन्दर्भ

१. शास्त्री के.का., 'श्री सोमनाथ : सोमेश्वर' पृ. ३०, अमदावाद, ई.स. २०००
२. ध्रुव आनन्दशंकर बा., 'धर्मवर्णन', पृ. १०३, वडोदरा ई.स. १९७८, त्रीजी आवृत्तिनुं द्वितीय पुनर्मुद्रण.
३. देसाई शंभुप्रसाद, 'प्रभास अने सोमनाथ', पृ. ५०८-९, प्रभासपाटण, ई.स. १९६५, प्रथम आवृत्ति.
४. ढांकी मधुसूदन, 'निर्ग्रन्थ अैतिहासिक लेख समुच्चय', भाग-२, पृ. २०२, अमदावाद, ई.स. २००२
५. डॉ. शास्त्री हरिप्रसाद गं., 'मैत्रककालीन गुजरात', भाग-२, पृ. ४२२; अमदावाद, ई.स. १९५५
६. क्रम-३, पृ. ५११
७. (१) कोठारी, जयन्त (सं.), मध्यकालीन गुजराती जैन साहित्य', पृ. ६, कान्तिभाई शाह, मुंबई, ई.स. १९९३.
(२) शास्त्री के.का., 'आपणा कविओ', पृ. २९९, अमदावाद, ई.स. १९७८, बीजी आवृत्ति.
(३) कोठारी, जयन्त, 'मध्यकालीन गुजराती साहित्यमां जैनोनुं प्रदान', पृ. ६, अमदावाद, ई.स. १९८५
८. शास्त्री के.का., 'आपणा कविओ', पृ. ४५-४६, अमदावाद, खण्ड-१, रासयुग, ई.स. १९७८, बीजी आवृत्ति.
९. मूळ (सं.) मोहनलाल द. देसाई; संवर्धित बीजी आवृत्तिना सम्पादक - कोठारी, जयन्त, 'जैन गुर्जर कविओ', भाग-१, पृ. ७२, मुंबई, ई.स. १९८६
१०. अेजन, भाग-२, पृ. ३१३, मुंबई, ई.स. १९८७
११. अेजन, भाग-१, पृ. ९८
१२. अेजन, भाग-३, पृ. १३५, मुंबई, ई.स. १९८७

१३. अेजन, भाग-२, पृ. २७७-७८
१४. अेजन, भाग-३, पृ. १००
१५. अेजन, भाग-४, पृ. २४९, मुंबई, ई.स. १९८८
१६. अेजन, भाग-४, पृ. ५८
१७. अेजन, भाग-१, पृ. ६०
१८. ढांकी मधुसूदन, 'निर्ग्रन्थ औतिहासिक लेख समुच्चय', भाग-२, पृ. २०९, अमदावाद, ई.स. २०१२.
१९. अेजन, पृ. २१६
२०. अेजन, पृ. २२४
२१. अेजन, पृ. २०६-७

* * *

महाकाव्यो जेवी रचनाओमां प्रक्षेपोनो प्रश्न

– शिरीष पंचाल

विद्वानो प्रक्षेपोनो प्रश्न गम्भीरताथी घणा समयथी चर्चता आव्या छे, क्यारेक पूर्वपक्ष-उत्तरपक्ष वच्चे भारे वादविवाद थता होय छे. वडोदराना प्राच्य विद्यामन्दिरे 'रामायण'नी अने पूणेनी भाण्डारकर रिसर्च इन्स्टिट्यूटे 'महाभारत'नी समीक्षित वाचनाओ दायकाओ पहेलां प्रगट करी. आ वाचनाओना इतिहासमां न जईअे, जेवी रीते सार्थ जोडणीकोशना प्रकाशन पछी गांधीजीअे वटहुकम बहार पाडता होय तेम कह्युं हतुं के हवे पछी स्वेच्छाअे जोडणी करवानो कोईने अधिकार नथी तेवी रीते केटलाक विद्वानोए समीक्षित वाचनाओने ज प्रमाणभूत मानीने बीजी बधी वाचनाओने बाजु पर मूकवानी सूचना आपी हती. विद्वत्तापूर्ण अभ्यास माटे समीक्षित वाचनाओ पर आधार राखवो जरूरी छे अेनी तो कोई ना नहीं पाडे पण प्रक्षेपोवाळी रचनाओने बाजु पर सदंतर मूकवी अे सांस्कृतिक, अैतिहासिक दृष्टिअे केटलुं वाजबी? आ बन्ने महाकाव्योना सर्जक वाल्मीकि, व्यास कोण हता? विश्वनी दरेक प्रजाने किंवदन्तिओनो शोख होय छे. व्यास विशे नहीं पण वाल्मीकि विशे प्रजाअे किंवदन्तिओ जोडी ज काढी छे - एक प्रचलित कथा अनुसार वालियो लूंटारु हतो, मरा-मराथी राम-राम सुधी पहोंच्यो. कालिदास पोते जे डाळ पर बेठो हतो तेने ज कापवा तैयार थयो हतो - अेवो मूर्ख हतो. कदाच मनोविज्ञानीओ आवी कथाओने गप्पां ज माने. केटलाक विद्वानो तो अेम ज कहे छे के व्यासे तो कौरव-पाण्डव वच्चे थयेला युद्धनी ज कथाने 'जय' तरीके आलेखी हती, पछी बीजाओअे अेमां उमेरणो कर्यां, अे रीते तो मोटा भागनुं महाभारत प्रक्षेप पुरवार थाय. रामायण-महाभारत जेवी कृतिओ जेम जेम लोकप्रिय थती गई तेम तेम तेमां उमेरणो थतां ज गयां, क्यारेक मूळ कृतिथी साव जुदुं ज आलेखन जोवा मळे. दा.त. 'पउमचरिय' नामनी जैन कृतिमां तो हनुमान लग्न करे छे, रावणना पक्षे रहीने युद्ध पण करे छे. आजे मोटा भागनी प्रजा आवां उमेरणोथी अजाण छे, नहींतर भारे विवाद ऊभा थाय.

दरेक सर्जक स्थळ-काळने केन्द्रमां राखीने रचनाओ करे छे, वळी पोतानी वैयक्तिक प्रतिभा तो खरी ज. दा.त. कालिदास महाभारतने आधारे

'अभिज्ञानशाकुन्तल'नी रचना करे छे, पण महाभारतमां जोवा मळता कथावस्तुने कालिदास वफादार रहेता नथी, महाभारतमां जे न होय ते उमेरीने पोतानी सर्जकप्रतिभा अनुसार जे रचना करे छे ते वधु रम्य, रमणीय पुरवार थाय तो! अने भवभूति 'उत्तररामचरित'मां अन्त सुखद आणे छे तेने शुं? कंब रामायण, कृत्तिवास रामायण, तुलसी रामायण, गिरधर रामायण - आ बधानुं शुं ?

घणीवार प्रजामां अेक अथवा बीजा कारणे केटलांक कथावस्तुओ तेमना लोहीमां वणाई जाय छे. अेथी विरुद्धनुं कशुं पण स्वीकारवा प्रजा तैयार थती नथी. आपणे हरिश्चन्द्रनी कथा लईअे. सौथी पहेलां आ कथा 'अैतरेय ब्राह्मण'मां जोवा मळे छे. आ कथा अनुसार हरिश्चन्द्र वचनभंगी छे, अमानवीय छे, सत्यद्रोही छे. हवे आपणी परम्परा हरिश्चन्द्रनी आ छबिने स्वीकारवाने बदले जुदा प्रकारनी छबि सर्जे छे, ए छबि छेक वीसमी सदी सुधी टकी रही. आजे 'अैतरेय ब्राह्मण'ना हरिश्चन्द्रने कोई याद करतुं नथी. आ आखी छबि पलटाता समयने केन्द्रमां राखीने सर्जवामां आवी अे वात भूलवी न जोईअे.

हवे आपणे 'रामायण'नी वात करीअे. सौथी पहेलां लक्ष्मणरेखानी वात करीअे. बारसो वरस पूर्वे रचायेला कंब रामायणमां के तुलसी रामायणमां लक्ष्मणरेखा नथी, हा - सोळमी सदीना कृत्तिवास रमायणमां लक्ष्मणरेखा छे, कदाच त्यारथी भारतभरमां लक्ष्मणरेखानो महिमा विशेष थवा मांड्यो हतो. समीक्षित वाचनामां राम मायावी मृग पाछळ जाय छे अने लक्ष्मणने सीतानी रक्षानो भार सोंपे छे. मायावी मृगनो अवाज सांभळीने सीता लक्ष्मणने रामनी सहाय माटे मोकलवा इच्छे छे, पण लक्ष्मणने रामनी वीरतामां अडग विश्वास एटले ते जता नथी. आ घटनाथी सीता अकळाईने लक्ष्मणने घणां कठोर वाक्यो संभळावे छे. सीतानी व्यक्तिताने न छाजे एवां वाक्यो समीक्षित वाचनामां जोवा मळशे. आ वाक्योनो टूंकसार अेवो के लक्ष्मण सीताने पामवा माटे राम भले मृत्यु पामे तो पण तेमनी वहारे नहीं जवुं एवुं नक्की करीने बेठा छे. हवे आ स्थितिमां लक्ष्मण शुं करे? हवे समीक्षित वाचना जुओ - लक्ष्मणे सीताने बे हाथ जोड्या, मैथिली सामे अेकाधिक वार जोईने राम पासे जवा नीकळ्या (अरण्यकाण्ड, ४३-३७) आवी कठोर वाणी सांभलीने क्रोधे भरायेला लक्ष्मण विलम्ब कर्या विना राम पासे जवा नीकळ्या. अेवामां ज त्यां दशानन-रावण परिव्राजकनो वेश लईने सीता पासे आवी चढ्यो. (अरण्यकाण्ड, ४४-१,२)

हवे आपणे सीता अने लक्ष्मणनां बे व्यक्तित्व वच्चेनो विरोध पण जोई शकीशुं. सीता आटलुं बधुं संभळावे छे तो पण लक्ष्मण चुपचाप सांभळी ले छे. वनवास जवाना प्रसंगे लक्ष्मण तो आखी अयोध्याने निर्जन करवा मागता हता; सीतानी भाळ काढवामां विलम्ब करता सुग्रीवने पण शिक्षा करवा तत्पर हता - पण अहीं सीतानी सामे कशुं बोलता नथी. आ स्थितिमां मुकायेला लक्ष्मण बीजुं करे शुं?

समीक्षित वाचनामां लक्ष्मण चुपचाप राम पासे जता रहे छे.

वाल्मीकिअे आलेखेलां सीता स्वतन्त्र प्रकृतिनां, कदाच पोतानी रक्षा पोते करवाने समर्थ हशे. प्रश्न तो थाय - रामायण अने महाभारतमां आवुं बने त्यारे जे ते व्यक्ति पासे शापवाणी उच्चारावी छे. महाभारतमां तो देवोनी कूतरी सरमा पण जनमेजयने शाप आपी शके छे. पण सीता आवो कोई शाप आपतां नथी.

वाल्मीकि अने मध्यकाळ वच्चे घणुं बधुं अन्तर छे. परदेशीओनां घोडां भारतमां प्रवेश्यां, विधर्मीओनां राज थयां. आ परिस्थितिमां स्त्रीनी रक्षा कोण करे? तेने घरनी चार दीवालोमां ज पुराई रहेवुं पडे, घरनी बहार पग मूकवामां डगले-पगले जोखम, तेने लक्ष्मणरेखानी जरुर पडे. पछी तो जाणीती हिन्दी फिल्मोमां पण लक्ष्मणरेखा प्रवेशी. मूळमां वात छे स्त्रीनी सुरक्षानी. विज्ञान अने टॅक्नोलोजीना आ जमानामां स्त्री केटली बधी अरक्षित बनी गई छे! क्यां क्यां अने केटली केटली लक्ष्मणरेखाओ ऊभी करीशुं?

हवे अेक बीजा जाणीता प्रक्षेपनी वात करीअे.

विश्वामित्र ऋषि रामलक्ष्मणने लईने अेक पछी अेक स्थळे विहार करे छे, अने अेम तेओ अेक सुन्दर पण निर्जन आश्रममां जई चढे छे. ऋषिमुनिओ विनाना आश्रमने जोईने रामने जिज्ञासा थाय छे, एटले विश्वामित्र ऋषिने अेने लगती विगतो पूछे छे. विश्वामित्र अे बधी वात विगते करे छे. तुलसी रामायणमां विगते कशुं आवतुं नथी, त्यां तो मात्र अेटलुं ज कहेवामां आवे छे के ऋषिना शापथी पथ्थर बनी गयेली ऋषिपत्नीनो उद्धार करो. कंब रामायण पण कहेशे के गौतम ऋषिनो वेश लईने आवेला इन्द्रे अहल्याने भ्रष्ट करी, अेटले इन्द्रने शाप मळ्यो अने अहल्याने शिला थई जवानो शाप मळ्यो. कृत्तिवास रामायण पण

आवा ज शापनी वात करशे. अन्य पुराण पण अहल्यानुं शिलामां रूपान्तर थवानी वात करशे. समीक्षित वाचनामां बे स्थळे अहल्याना शापनी वात आवे छे.

सौथी पहेलां उत्तरकाण्ड जोइअे. रावणपुत्र मेघनादे इन्द्रने पराजित कर्यो (त्यार पछी मेघनादनुं नाम इन्द्रजित पड्युं), पछी इन्द्र ब्रह्मा पासे उदास थईने जाय छे, त्यारे ब्रह्मा तेने ठपको आपे छे - पछी उमेरे छे, पहेलां में सरखा रूपवाळी, अेकसरखी भाषावाळी, अेकसरखा वर्णवाळी प्रजानुं सर्जन कर्युं हतुं, पछी मने विचार आव्यो एटले अेक विशिष्ट स्त्रीनिर्माण कर्युं; रूपगुणसम्पन्न स्त्री. तेनुं नाम अहल्या (हल अेटले विरूपता, विरूपताहीन ते अहल्या) लोकमां जे विशिष्ट हतुं ते लईने आ नारीनुं निर्माण कर्युं. अे कोनी पत्नी थशे तेनी मने चिन्ता थई, तने अेम के अहल्या मारी पत्नी थशे पण में गौतम ऋषिने आपी. तारा हाथे न आवी अेटले कामवश थईने तुं आश्रममां गयो, अहल्या पर बळात्कार कर्यो. ऋषिअे तने शाप आप्यो - युद्धमां तारो पराजय थशे. पछी अहल्याने शाप आप्यो - मारा आश्रमथी दूर था, तारुं रूप बीजी स्त्रीओमां वहेंचाई जशे. तुं ज अेकली रूपवान नहीं रहे.

आ प्रकारना शापनी वात मोटा भागना वाचको कदाच नहीं जाणता होय. तेओ तो अहल्या शिला थई अे ज वात जाणे छे.

हवे बालकाण्ड आ घटना विशे शुं कहे छे ते जोइअे. रामे कोई निर्जन आश्रम जोईने ए विशे विश्वामित्र ऋषिने पूछ्युं. देवताओ पण आ आश्रमने अेक जमानामां पूजता हता. अहीं गौतम ऋषिअे पत्नी अहल्या साथे वर्षो गाळ्यां हतां. अहल्याथी मोह पामेला इन्द्र गौतमनो वेश लईने अेकवार अहल्या पासे आवी चढ्या. अहल्या इन्द्रने ओळखी तो गई, पण अहो - मने इन्द्र पण चाहे छे अेम अभिमान करी इन्द्रनो सहवास कर्यो अने पछी त्यांथी वेळासर जता रहेवा कह्युं. इन्द्र आश्रम बहार जवानुं करता हता अने त्यां गौतम आवी चढ्या, गौतमना शापथी इन्द्रना वृषण खरी पड्या अने पोतानी पत्नीने पण तेमणे शाप आप्यो - हजार हजार वर्ष सुधी तुं वायु भक्षण करती रहेजे, भस्ममां सूई रहेजे. कोई प्राणी तने जोई नहीं शके, अर्थात् तुं अदृश्य रहीश.' (समीक्षित वाचना, बालकाण्ड, ४५)

अहीं स्पष्ट छे के अहल्यानो वांक हतो, अने गौतम ऋषिना शापथी ते

सम्पूर्ण अदृश्य थई. पाछळथी राम ज्यारे ते आश्रममां प्रवेश्या त्यारे ते दृश्य बनी.

हवे प्रश्न अे थाय के शापने कारणे कोई स्त्री शिलामां रूपान्तरित थई जाय अे कथाघटक आव्युं क्यांथी? विश्वामित्र ब्रह्मर्षिपद मेळववा आकरुं तप करे छे, इन्द्र तेमनो तपोभंग करवा अप्सरा रम्भाने मोकले छे, रम्भा डरती डरती विश्वामित्र पासे जाय छे, आरम्भे ऋषि मोह पामे छे, पछी समजी जाय छे अने रम्भाने शाप आपे छे – 'हुं कॉमक्रोध पर विजय मेळववा मागुं छुं अने तुं मने लोभावे छे. जा – तुं दस हजार वर्ष सुधी शिला थईने रहीश. कोई तपोबळवाळो ब्राह्मण तने आ शापमांथी छोडावशे.' (समीक्षित वाचना, बालकाण्ड, ६३)

आ अेक जाणीतुं कथाघटक छे, मात्र भारतीय कथाओमां ज नहीं पण अरेबियन नाइट्स सुध्धामां जोवा मळे छे. (जुओ – अरेबियन नाइट्स – अनुवाद इच्छाराम देसाई, भाग-१, पृ. ४७, १२४)

रामायणना हजु अेक लोकप्रिय कथाघटकनी वात करीअे.

सुग्रीव रामलक्ष्मणने मळे छे त्यारे तेओ बन्ने भाईओने आश्वासन आपे छे, तेओ तो अेटली हदे कहे छे के रसातलमां सीता हशे तो पण हुं तेमने शोधी आपीश, ते वखते सुग्रीवने याद आवे छे. रावण ज्यारे सीतानुं अपहरण करी जता हता त्यारे सीता राम, लक्ष्मणना नामनो पोकार पाडतां हतां अने तेमणे पोतानां उत्तरीय तथा आभरणो फेंक्यां हतां. रामने सुग्रीव अे बधुं बतावे छे. त्यारे राम लक्ष्मणने कहे छे के लक्ष्मण, जो आ वस्त्र अने आभरण. (समीक्षित वाचना, किष्किन्धाकाण्ड, ६)

हवे अहीं आगळ भारतमां बहु जाणीतो थयेलो श्लोक प्रक्षिप्त थयो छे – नाहं जानामि केयूरं... हुं तो मात्र तेमना झांझरने ज ओळखुं.

आने कोई आदर्श के भावनाना प्रतिबिम्ब तरीके ओळखावे. पण ए अवास्तविक पण अेटलो ज लागे. जो के समीक्षित वाचनामां स्पष्ट कह्युं छे, 'लक्ष्मणे सीताने बे हाथ जोड्या, मैथिली सामे अेकाधिक वार जोईने राम पासे जवा नीकळ्या.'

अेवी ज रीते 'शबरीनां अेंठा बोर' वाळो प्रक्षेप पण जाणीतो छे. वाल्मीकि रामायणमां तो मात्र अेटली ज वात आवे छे के ऋषिमुनिओअे शबरीने

कह्युं हतुं के राम आवशे. रामना स्वागत माटे शबरीअे विविध फळ अेकठां कर्यां हतां. (समीक्षित वाचन, अरण्यकाण्ड, ७०) पाछळथी कोईअे उमेरी दीधुं के शबरीअे अेकेअेक बोर चाखी चाखीने भगवानने आप्यां. मूळमां तो विविध फळनी वात छे. अने भारतीय प्रजा भक्तिना पुरमां आ वात पण स्वीकारी बेठी.

*

महाभारत तो अेक मोटुं कथावन छे. वेदव्यासना शिष्योथी मांडीने अर्वाचीन युगना कथाकारो, नाट्यकारोने ते आकर्षतुं ज रह्युं छे. स्वाभाविक रीते समयना जुदा जुदा तबक्के अेमां नवां नवां उमेरणो थतां ज रह्यां. आवां एक-बे उमेरणोनी-प्रक्षेपोनी वात करीअे. पाण्डवो लाक्षागृहमांथी हेमखेम बहार आवीने आगळ प्रयाण करे छे. बक नामना राक्षसनो वध भीमसेन करे छे अने पछी ब्राह्मणवेशी ते पाण्डवोने केटलाक ब्राह्मणो मळे छे, ते बधा द्रौपदीस्वयम्वरमां भाग लेवा जई रह्या हता. अेमना कहेवाथी पाण्डवो पण स्वयम्वरमां जाय छे. द्रुपदे उपर आकाशमां अेक यन्त्र बनाव्युं अने तेमां सुवर्णलक्ष्य गोठव्युं. द्रौपदीनो भाई वधु व्यवस्थित रीते जाहेरात करे छे - यन्त्र उपर जे लक्ष्य छे (शानो आकार छे तेनी स्पष्टता करवामां आवी नथी, पाछळथी अे लक्ष्यवेध अेटले मत्स्यवेध अेवी वात प्रचलित थई) तेने पांच बाण वडे वींधवानुं. दुर्योधन, कर्ण समेत घणा राजाओ त्यां आव्या हता. राजाओनी अेक लांबीलचक यादी आपवामां आवी. क्षत्रिय राजाओ उपरान्त रुद्रगण, आदित्यगण, अश्विनीकुमारो, यमराज, कुबेर, देवगण, दैत्यगण, नारद, गन्धर्वो, कृष्ण-बलराम पण आव्या हता. कृष्णे पाण्डवोने ओळखी लीधा, बीजाओनी दृष्टि पण पाण्डवो पर न पडी. कोई पण राजा धनुष्यनी पणछ चडावी न शक्या. ब्राह्मणवेशी अर्जुन लक्ष्यवेध करवा ऊभा थया. त्यां ब्राह्मणो बोले छे - 'जे धनुष कर्ण, शल्य जेवा पण सज्ज न करी शक्या त्यां आ ब्राह्मण केवी रीते सफळ थशे?' बीजा शब्दोमां कर्ण पण लक्ष्यवेध करी शक्या न हता. अने अर्जुन लक्ष्यवेध करी शक्या. ब्राह्मण द्रौपदीने लई जाय अे वात क्षत्रियो वेठे केवी रीते? बधा क्षत्रिय राजाओ द्रुपद अने अर्जुन सामे ऊभा रही गया. कर्ण अर्जुन सामे, शल्य भीम सामे.

पण गीताप्रेस (गोरखपुर)नी महाभारत वाचना आ स्वयम्वरनुं जुदुं चित्र आपे छे.

राजाओनी निष्फळता जोईने कर्ण आगळ आवे छे अने पणछ चडावी पांच बाण तैयार करे छे. पाण्डवोने प्रतीति थाय छे के आ लक्ष्यवेध करशे पण तरत ज द्रौपदी बोले छे - ए सूतपुत्रने हुं नहीं परणुं.

गीताप्रेसनी वाचना अेटलुं तो कहे छे के कर्णे धनुष सज्ज कर्युं, पण अे वात भाण्डारकर वाचनामां नथी.

बीजा शब्दोमां समीक्षित वाचनामां द्रौपदीनी उक्ति नथी. गीताप्रेस तथा अन्य वाचनाओमां द्रौपदीनी उक्ति छे, अने पछी तो घणी बधी वाचनाओमां द्रौपदीवाळी उक्ति प्रवेशी गई. आनो अर्थ अे थयो के जातिगत सभानता जे समये वधवा मांडी थशे ते वखते द्रौपदीना मोढामां आ उक्ति प्रवेशी गई.

उमाशंकर जोशीअे ज्यारे 'कर्णकृष्ण' कृति रची त्यारे तेमनी सामे समीक्षित वाचना न हती, अेटले ज तेओ कर्णना मोढे कहेवडावे छे के स्वयम्वरोमां पौरुष जोवानुं होय, व्यक्तिनी जाति जोवानी न होय.

अेक बीजो प्रक्षेप द्रौपदी वस्त्रहरणना सन्दर्भे छे, मोटा भागनी भारतीय प्रजा माने छे के द्रौपदी-वस्त्रहरण प्रसंगे श्रीकृष्णने द्रौपदी याद करे छे अेटले श्रीकृष्ण द्रौपदीने ९९९ चीर आपे छे. हवे महाभारतनी समीक्षित वाचना जोईअे. युधिष्ठिर जुगारमां भाईओने अने पोताने होडमां मूके छे अने बाजी हारी जाय छे, छेवटे द्रौपदीने होडमां मूके छे. बधा वृद्धो 'धिक्कार छे' बोले छे, पण धृतराष्ट्र आनन्द पामे छे, कर्ण आनन्द पामे छे. पछी द्रौपदीने केवी रीते सभामां लाववामां आवे छे अे वातने बाजु पर राखीअे.

दु:शासन अेकवस्त्रा, रजस्वला द्रौपदीनुं वस्त्र खेंची रह्यो छे त्यारे कर्ण पोताना व्यक्तित्वने न छाजे अेवी रीते वस्त्रहरणनी घटनाने वाजबी ठरावे छे अने नरी अभद्र भाषामां बोले छे के पांच पतिवाळी द्रौपदी तो वारांगना कहेवाय, अे अेकवस्त्रा होय, नग्न होय तो पण सभामां लावी शकाय ! अने कर्ण दु:शासनने कहे छे, 'तुं द्रौपदीनां वस्त्र उतार!'

दु:शासन भरसभामां द्रौपदीनुं वस्त्र दूर करवा जाय छे त्यारे शुं बन्युं?

'ज्यारे द्रौपदीनुं वस्त्र खेंचायुं त्यारे ते वस्त्रमांथी बीजुं वस्त्र, अने अेमांथी *अनेक अनुपम वस्त्र नीकळवा लाग्यां... सभामां द्रौपदीनां वस्त्रोनो ढगलो थई* गयो अने दु:शासन थाकीने बेसी गयो.' (सभापर्व, ६१, ४०-४१)

हवे गीताप्रेसनी महाभारत वाचना शुं कहे छे ?

दु:शासने ज्यारे द्रौपदीना केश पकडीने तेने खेंचवा लाग्यो त्यारे द्रौपदीओ कृष्ण भगवानने याद कर्या,

द्रौपदी मनोमन बोले छे के आपत्ति आवे त्यारे भगवानने याद करवा जोइओ, अेवुं वसिष्ठ ऋषि पण कही गया छे. अेटले द्रौपदी वारे वारे गोविन्द-कृष्णने पोकारवा लागी. 'हे गोविन्द-हे द्वारकावासी, गोपीजनप्रिय, आ कौरवो मारुं अपमान करी रह्या छे, शुं तमे नथी जाणता ? हे नाथ, हे रमानाथ, हे व्रजनाथ, हुं कौरवरूपी समुद्रमां डूबी रही छुं, मारो उद्धार करो. हे सच्चिदानन्द, हे महायोगी, गोविन्द, कौरवोनी वच्चे हुं दु:खी थई रही छुं, मारी रक्षा करो.'

आम द्रौपदी त्रिभुवनना ईश्वरने वारे वारे याद करीने मों ढांकीने रुदन करवा लागी. याज्ञसेनीनो आ करुण विलाप सांभळीने श्रीकृष्णे गळागळा थईने त्यांथी दोडवा मांड्युं. श्रीकृष्ण अव्यक्त रूपे तेना वस्त्रमां प्रवेशी सुन्दर सुन्दर वस्त्रोथी द्रौपदीने आच्छादित करी दीधी. द्रौपदीनुं वस्त्र खेंचातुं रह्युं अने नवां वस्त्र पुरातां रह्यां. अनेक वस्त्र, विविधरंगी वस्त्र प्रगटवा लाग्यां.'

गीताप्रेसनी आवृत्ति पण नवसो नव्वाणुं वस्त्रनी वात करती नथी, आ आंकडो पण पाछळथी उमेरायो छे. लोकमहाभारतमां अेक बीजो प्रसंग नोंधायो छे. अेक वेळा पाण्डवो, द्रौपदी अने कृष्ण वातो करी रह्या हता. कृष्ण छरी वडे शेरडी छोली रह्या हता, अचानक कृष्णने छरी वागी अने लोही वहेवा लाग्युं. त्यारे द्रौपदीअे पोतानी साडी चीरीने पाटो बांधी आप्यो. पाछळथी कृष्णे अे पाटामांना सूतरना तार गण्या तो नवसो नव्वाणु तार नीकळ्या. कृष्णे मनोमन निर्धार कर्यो के आ नवसो नव्वाणु तारनुं ऋण मारे चूकववुं पडशे.'

न्हानालाल कविअे आ विषयने लगती अेक कृति रची छे - 'भरतगोत्रनां लज्जाचीर'.

आ आखाय प्रसंगमां सौथी वधु तिरस्कारपात्र कोई बन्युं होय तो ते कर्ण.

हवे बुद्धिजीवी वाचकने प्रश्न थाय के द्रौपदीनी एक साडीमांथी आटलां बधां वस्त्र नीकळे केवी रीते? पण कोईने कोई रीते द्रौपदी ऊगरी तो जवी जोईअे, तेनी लज्जा ढांकवा कशोक उपाय तो करवो ज पडे, अे समय चमत्कारोनो

हतो अेटले अदृष्ट सत्ता द्वारा वस्त्र पुरायां. पछी कृष्णभक्तिनो महिमा विस्तरवा लाग्यो त्यारे कोई अनुगामी कविने कृष्णना पात्रने आणवानी अेक सरस तक मळी.

अेक बीजो नोंधपात्र प्रक्षेप सहदेवना अतिज्ञाननो छे. गुजरातना विख्यात कवि कान्ते 'अतिज्ञान' काव्य द्वारा आ कथाघटकने खूब ज जाणीतुं कर्युं छे. महाभारतनी समीक्षित आवृत्तिमां के गीताप्रेसनी आवृत्तिमां सहदेवना अतिज्ञाननी वात आवती नथी. तात्त्विक रीते जोईअे तो अतिज्ञान वरदान नहीं, अभिशाप छे. जाणीता चिन्तक कियर्केगार्दे पण संवेदननी अतिमात्राने अभिशाप तरीके ज ओळखावी हती. आ अतिज्ञाननुं कथाघटक क्यांथी, केवी रीते आव्युं तेनी तपास करवा जेवी छे. मध्यकाळमां महाभारत आधारित जे कृतिओ रचाई तेमां आ अतिज्ञाननो प्रवेश थयो छे. पूणेथी प्रगट थयेला 'प्राचीन चरित्रकोश'मां पण सहदेवना आ अतिज्ञाननो निर्देश नथी.

गुजरातमां कवि वल्लभनुं महाभारत खूब जाणीतुं छे. तेमां आ अतिज्ञाननी वात आवे छे. अेक वखत पाण्डु वनमां पक्षीओनी वात सांभळे छे. 'जे कोई आ पुरुषनुं काळजुं खाशे तेने त्रिकाळज्ञान थशे.' पाण्डु विचारे छे के मारा मृत्यु वखते पुत्रोने आ जाण करीश. अने अेवी जाण पाण्डु पुत्रोने करे छे पण खरा. पाण्डुना अग्निदाह वखते शबमांथी काळजुं काढी लई अेक हांल्लीमां उकाळवा मुकाय छे, पण आ घटनानी जाण भगवान श्रीकृष्णने थाय छे, तेओ ब्राह्मणवेशे आवीने चीलझडप करी पेली हांल्ली कबजे करवा जाय छे त्यारे सहदेव अेमना हाथमांथी हांल्ली पडावी दोट मूके छे. गरम गरम काळजुं उछाळतां उछाळतां अेनी वराळ सहदेवना नाक द्वारा प्रवेशे छे अने तेने त्रिकाळज्ञान थाय छे, ते श्रीकृष्णने पगे पडे छे. बंने वच्चे करार थाय छे. श्रीकृष्ण सहदेवने कहे छे – 'कोई पूछे नहीं त्यां सुधी तारे कशुं कहेवुं नहीं. कूवामां बधा पडता होय तो तारे पण अेमनी साथे कूवामां पडवुं.' सहदेव सामी शरत करे छे, 'अमारामांथी अेकेनुं मरण थाय तो तमारे पण मरी जवुं.'

स्वाभाविक रीते ज आ आखुं कथाघटक लोकसाहित्यमांथी आव्युं होवानुं अनुमान करी शकाय. हिन्दीना प्रख्यात विद्वान वासुदेव शरण अग्रवाले महाभारत पर अेक ग्रन्थ 'भारतसावित्री' लख्यो छे, तेमां पण सहदेवना अतिज्ञाननी

कथा नथी. अतिज्ञाननुं कथाघटक अेक रीते रोमांचक छे अने कान्ते अेने केन्द्रमां राख्युं अे पण अेक मोटी वात गणाय.

आवा प्रक्षेपोनी चर्चा इतिहास, समाजविद्याना सन्दर्भे वधु व्यवस्थित रीते थवी जोईअे. वेदकाळना समाजथी मांडीने मध्यकालीन समाजमां थयेलां परिवर्तनोनां सन्दर्भे ज प्रक्षेपोनी चर्चा थई शके. वळी जे ते प्रक्षेपो समयना कया बिन्दुअे थया तेनी माहिती इतिहासकार वधु सारी रीते आपी शके. धर्मसत्ता, राजसत्ता अने जन-सत्ताना संवाद-विसंवाद पण प्रक्षेपो जेवी घटनाओने साकार करवामां महत्त्वनो भाग भजवे छे. आनो पूरेपूरो ख्याल मेळववा माटे आपणां पुराणोने ध्यानमां राखवां पडे.

केटलीक वखत सूत्रात्मक पंक्तिओ पण मूळ वाचनामां न होय अने पाछळथी प्रवेशी जती होय छे. दा.त. दुर्योधनना मोढामां मूकेली जाणीती उक्ति 'जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिः, जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः.' (धर्म जाणतो होवा छतां तेनुं आचरण करी शकतो नथी अने अधर्म जाणतो होवा छतां अेमांथी निवृत्त थई शकतो नथी.) आ मात्र दुर्योधननी उक्ति बनी रहेवाने बदले मानवमात्रनी उक्ति नथी बनी रहेती? अेक ग्रीक नाटकमां पण आवा ज भावार्थवाळी उक्ति जोवा मळे छे. जाणीता कविविवेचक टी. एस. अेलियट कहे छे ते प्रमाणे धर्मप्रवृत्ति के धर्मनिवृत्ति - आ बेमांथी अेक प्रवृत्ति थती होय त्यां सुधी ते मानवीनी प्रवृत्ति लेखाय; बीजा शब्दोमां मानव्यनी पहेली शरत सद् के असद्नुं आचरण करवानी छे. हवे महाभारतनी समीक्षित वाचनामां क्यांय दुर्योधनना मोढामां आवी उक्ति मूकवामां आवी ज नथी.

महाभारतमां युधिष्ठिर सत्यवादी तरीके जाणीता हता, आम तो ते धर्मपुत्र हता. आ महायुद्धमां अेक तबक्के द्रोणना हाथे पाण्डवसेनानो संहार थाय अेवी परिस्थिति उभी थई. श्रीकृष्णने आ संहार स्वीकार्य न हतो, अेटले तेओ भीमसेन पासे अश्वत्थामा नामनो हाथी मरावी नाखे छे अने भीमसेन द्रोण पासे जईने बूम मारे छे - अश्वत्थामा मरायो, अश्वत्थामा मरायो. द्रोणने पोतानो पुत्र अश्वत्थामा बहु वहालो हतो, तेना मृत्यु पछी युद्ध करवानो अर्थ शो? पण द्रोणने भीमसेन पर विश्वास नहीं, युधिष्ठिर कहे तो ज वात साची मनाय. कृष्ण युधिष्ठिरने समजावे छे, प्राण बचाववा असत्यनो आश्रय लेवो पडे तो ते असत्य न गणाय. छेवटे

युधिष्ठिर बोले छे, 'हा, अश्वत्थामा मरायो.' पछी द्रोण न सांभळे तेम बोले छे, 'हाथी अश्वत्थामा मरायो.' आवुं बोल्या अेटले धरतीथी चार आगळ अध्धर रहेतो तेमनो रथ नीचे बेसी गयो. भारतमां युधिष्ठिरनी अेक उक्ति जाणीती थई - नरो वा कुंजरो वा. समीक्षित वाचनामां आ उक्ति नथी. अलबत्त पाछळथी प्रवेशेली आ उक्ति वधु प्रभावशाळी लागे छे. श्रीकृष्णना मोढामां अेक बीजी कथा अन्यत्र योजी छे. त्यां पण भावार्थ अे छे के आपणा सत्यवचनने कारणे कोई निर्दोषनो जीव जतो होय तो अे सत्य सत्य न कहेवाय.

आजे धारो के आ महाकाव्योनां पुनर्लेखन थाय तो अेमां शुं शुं नवुं उमेराशे? अे बधुं ज प्रक्षिप्त अने अेटले शुं अे बधुं फगावी देवानुं?

C/o. २३३, राजलक्ष्मी सोसायटी,
जूना पादरा रोड,
वडोदरा-७

* * *

तिर्यञ्च स्त्री से देवों के अल्पबहुत्व की तटस्थ समीक्षा

— आ. श्रीरामलालजी म.

सारांश :

तिर्यञ्च स्त्री से देव 'संख्येयगुण' है, लेकिन कहीं-कहीं 'असंखेज्ज' पाठ आने से 'असंख्येयगुण' माना जाने लगा।

इस विषय में उभय पक्ष से प्राप्त पाठ आदि की तटस्थ विचारणा से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि तिर्यञ्च स्त्री से देव संख्येयगुण ही है असंख्येय-गुण नहीं। एतत्सम्बन्धी संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है -

१. संख्यातगुणा के कई बोल मिलाकर असंख्यातगुणा हो सकते हैं। यहाँ इस परिकल्पना से संगति की जाने लगी; जो कि यहाँ कतई उपयुक्त नहीं है। (देखें 'भ्रान्त परिकल्पना' उपशीर्षक)

२. श्रीमद् जीवाजीवाभिगम सूत्र में अनेक स्थलों पर 'संख्येयगुणा' बताया है। (देखें-बिन्दु क्रमाङ्क-१)

३. श्रीमद् जीवाजीवाभिगम सूत्र की मलयगिरि टीका में प्रायः सर्वत्र 'संख्येयगुणा' है। (देखें-बिन्दु क्रमाङ्क-२)

४. असंख्येयगुणा मानने पर तिर्यञ्च स्त्री से गर्भज तिर्यञ्च नपुंसक को 'असंख्येय गुणा' मानना होगा, जो कि असंगत है, क्योंकि श्रीमद् भगवतीसूत्र में बताया है कि एक जीव एक भव में उत्कृष्ट पृथक्त्व लाख (संख्येय) पुत्र ही उत्पन्न कर सकता है। (देखें-बिन्दु क्रमाङ्क-३)

५. महादण्डक (९८ बोल) के ३८वें बोल से ४५वें बोल की तुलना से संख्येयगुणा स्पष्ट है तथा ३७वें बोल से ३८वें बोल को बहुत बड़ा संख्यातगुणा मानने की क्लिष्ट कल्पना अनौचित्य पूर्ण है। (देखें-बिन्दु क्रमाङ्क-४)

६. जीवसमास (सवृत्तिक) तथा षट्खण्डागम ('धवला' टीका सहित) से भी 'संख्येयगुणा' स्पष्ट है। (देखें-बिन्दु क्रमाङ्क-५ व ६)

विषयप्रवेश :

प्रज्ञापनासूत्र के तृतीय पद में महादण्डक सम्बन्धी वर्णन इत्यादि पाठों से देवों की संख्या तिर्यञ्च स्त्री की अपेक्षा संख्येयगुणी प्राप्त होती है, तथापि इसी तृतीय पद में वर्णित गतिसम्बन्धी अल्पबहुत्व आदि में 'तिर्यञ्च स्त्री से देव असंख्येयगुण' ऐसा पाठ क़हीं-कहीं आ जाने से महादण्डक में आगत संख्येयगुण को बड़े संख्येय के रूप में मानकर तिर्यञ्च स्त्री से देवों को असंख्येयगुण मानने की धारणा चलने लगी । इस विषय में उभयपक्षों में प्राप्त पाठादि की तटस्थ विचारणा से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि तिर्यञ्च स्त्री से देव संख्येयगुण ही हैं, *असंख्येयगुण नहीं* ।

एतत्सम्बन्धी सविस्तर समीक्षा इस प्रकार है -

⇨ भ्रान्त-परिकल्पना

श्रीमत् प्रज्ञापनासूत्र के तृतीय पद में आगत महादण्डक (९८ बोल की अल्पबहुत्व) में-

३७. जलचर तिर्यञ्च स्त्री से

३८. वाणव्यन्तर देव संख्यातगुणा

३९. उससे वाणव्यंतर देवी संख्यातगुणी

४०. उससे ज्योतिषी देव संख्यातगुणा

४१. उससे ज्योतिषी देवी संख्यातगुणी बताई गई है ।[१] तदनुसार तिर्यञ्च स्त्री से देवी संख्यातगुणा प्राप्त होती है ।

प्रज्ञापनासूत्र के इसी तीसरे पद में 'गति' नामक द्वितीय द्वार में तिर्यञ्च स्त्री से देव 'असंख्यातगुणा' एवं उससे देवी संख्यातगुणी बताई गई ।[२] इस पाठ की संगति हेतु महादण्डक में आए ३८वें, ३९वें एवं ४०वें बोल के संख्यात को बहुत बड़ा मानकर तीनों संख्यात के मिलने से असंख्यात हो जाएगा, इस प्रकार की परिकल्पना भी वर्तमान में कहीं-कहीं प्रचलित है ।[३]

आगमों के आधार पर तटस्थ विचारणा करने से यह समझा जा सकता है कि वस्तुतः तिर्यञ्च स्त्री से ज्योतिषी देव संख्येयगुण ही होते हैं, असंख्येयगुण नहीं । इसके अनेक हेतु हैं जो बिन्दुशः इस प्रकार हैं -

⇨ बिन्दु क्रमाङ्क-१

१. प्रज्ञापनासूत्र के पूर्वोक्त एक स्थल के आधार पर तिर्यञ्च स्त्रियों से देवों को असंख्यातगुणा बताया जा रहा है जबकि जीवाजीवाभिगमसूत्र में विभिन्न स्थलों पर तिर्यञ्च स्त्रियों से देव-देवियों को संख्येयगुणा बताया है । वे इस प्रकार हैं -

(१) जैसलमेर के आचार्य जिनभद्रसूरि ज्ञानभंडार में विद्यमान *जीवाजीवाभिगमसूत्र की एक ताड़पत्रीय प्रति*[४] *में जीवाजीवाभिगम सूत्र की तृतीय प्रतिपत्ति में तिर्यञ्च पुरुषों से देव पुरुषों को संख्येयगुणा बताया है ।*[५] *इस प्रति में* पाठों को अपेक्षाकृत विस्तार से लिखा गया हैं । अन्य कुछ प्रतियों में इसी स्थान पर पुरुषों की अल्पबहुत्त्व के विषय में 'जहेवित्थीणं' कहकर स्त्रियों की अल्पबहुत्व की भोलावण दी है ।[६]

यद्यपि टीकाकार आचार्य मलयगिरि ने स्त्रियों के अल्पबहुत्व का वर्णन करते हुए तिर्यञ्च स्त्रियों से देव स्त्रियों को असंख्येयगुण कह दिया है ।[७] किन्तु वे ही आचार्य मलयगिरि यहां पुरुषों के अल्पबहुत्व का वर्णन करते हुए तिर्यञ्च पुरुषों से देव पुरुषों को संख्येयगुणा कह रहे हैं ।[८] (विशेष स्पष्टीकरण बिन्दु क्रमाङ्क २ में देखें)

(२) जीवाजीवाभिगमसूत्र की सर्वजीवप्रतिपत्ति के अन्तर्गत अष्टविध प्रतिपत्ति में 'तिर्यञ्च स्त्री से देव को संख्येयगुणा' बताया है ।[९]

(३) जीवाजीवाभिगमसूत्र की षष्ठ 'सप्तविध' प्रतिपत्ति में 'तिर्यञ्च स्त्री से देव को संख्येयगुणा' बताया है ।[१०]

(४) जीवाजीवाभिगमसूत्र की द्वितीय 'त्रिविध' प्रतिपत्ति में 'तिर्यञ्च स्त्री से देव पुरुषों को संख्येयगुणा' बताया है ।[११]

(५) जीवाजीवाभिगमसूत्र की द्वितीय 'त्रिविध' प्रतिपत्ति में 'तिर्यञ्च स्त्री से देव स्त्रियों को संख्येयगुणी' बताया है ।[१२]

उपर्युक्त इन स्थलों पर किन्हीं-किन्हीं मुद्रित अथवा हस्तलिखित प्रतियों में कदाचित् लिपिप्रमादादिवश संख्येय की जगह असंख्येय भी अङ्कित हो गया है, तथापि मलयगिरि टीका में प्रायः सर्वत्र 'संख्येयगुण' का स्पष्टोल्लेख प्राप्त है।

⇨ बिन्दु क्रमाङ्क-२

जीवाजीवाभिगमसूत्र की मलयगिरि टीका के एतद्विषयक वर्णन के प्रसंगों में से एक स्थल (देखें टिप्पण क्रमाङ्क ७) को छोड़कर शेष सभी स्थलों (देखें इस लेख की टिप्पणी क्रमाङ्क - ९, १०, ११, १२) से यह स्पष्ट है कि तिर्यञ्च स्त्री से देव या देव स्त्री, संख्यातगुणी अधिक होती है।

जिस एक स्थल पर टीकाकार ने तिर्यञ्च स्त्री से देव स्त्री को असंख्यात-गुणी अधिक बताया है, इसकी अशुद्धता स्वयं टीकाकार द्वारा आगे प्रस्तुत किए गए पाठ से प्रकट होती है। आगे जहाँ आगम में पुरुषों की अल्पबहुत्व की बात दी गई है, वहाँ 'अप्पाबहुयाणि जहेवित्थीणं' (जीवाजीवाभिगमसूत्र, द्वितीय प्रतिपत्ति, सूत्र ५६-आगमोदय समिति) कहकर पुरुषों के अल्पबहुत्व को स्त्रियों के अल्पबहुत्व के समान बताया है। इसी प्रकरण को स्पष्ट करते हुए टीकाकार ने तिर्यञ्च पुरुषों से देवपुरुषों को संख्येयगुणा बताया है। वह टीका पाठ इस प्रकार है -

''सर्वस्तोका मनुष्यपुरुषाः सङ्ख्येयकोटीकोटीप्रमाणत्वात्, तेभ्यस्तिर्यग्यो-निकपुरुषा असङ्ख्येयगुणाः, प्रतरासङ्ख्येयभागवर्त्यसङ्ख्येयश्रेणिगताकाशप्रदेश-राशिप्रमाणत्वात्तेषां, तेभ्यो देवपुरुषाः सङ्ख्येयगुणाः, बृहत्तरप्रतरासङ्ख्येयभागवर्त्य-सङ्ख्येयश्रेणिगताकाशप्रदेशराशिप्रमाणत्वात्।''

चूँकि जीवाजीवाभिगमसूत्र की कुछ प्रतियाँ पुरुषों के अल्पबहुत्व के प्रसंग पर स्त्रियों के अल्पबहुत्व की भोलावण देकर (अतिदेश करके) उसे स्त्रियों के अल्पबहुत्व के समान कह रही है[१३], इसी सूत्र की एक अन्य प्रति खुला पाठ देकर पुरुषों के अल्पबहुत्व के प्रसंग पर स्पष्टतः तिर्यञ्च पुरुषों से देव पुरुषों को संख्येयगुण कह रही है[१४] तथा इसी सूत्र की टीका करते हुए टीकाकार, पुरुषों के अल्पबहुत्व में तिर्यञ्च पुरुषों से देव पुरुषों के संख्येयगुणा मान रहे हैं,[१५] *अतः यह स्पष्ट है कि स्त्रियों के अल्पबहुत्व में भी तिर्यञ्च स्त्रियों से देव स्त्रियाँ* संख्येयगुण अधिक ही मान्य है।

जीवाजीवाभिगमसूत्र के एतद्विषयक इतने वर्णन मिल जाने पर प्रज्ञापना-सूत्र के तृतीय पद के गति द्वार में आगत 'असंख्येयगुण' पाठ की शुद्धता संदिग्ध हो जाती है। अतः मात्र प्रज्ञापनासूत्र के एक पाठ के आधार पर

महादण्डक (९८ बोल के अल्पबहुत्व) में ३७वें बोल से ४१वें बोल में अर्थात् तिर्यञ्च स्त्री से ज्योतिषी देवी को, क्रमशः संख्येय गुणा-संख्येय गुणा वर्णन होने पर भी सबको मिलाकर क्लिष्ट कल्पना से असंख्यात मानना उचित नहीं है।

⇨ बिन्दु क्रमाङ्क-३

भगवतीसूत्र शतक २ उद्देशक ५ में कहा है कि "एक जीव एक भव में उत्कृष्ट पृथक्त्व लाख पुत्र उत्पन्न कर सकता है।[१६]

प्रज्ञापनासूत्र के तृतीय पद में प्राप्यमाण महादण्डक (९८ बोल के अल्पबहुत्व) में ४१वें बोल ज्योतिषी देवी से ४२वें बोल (गर्भज) खेचर नपुंसक को संख्येयगुण माना है।[१७]

यदि तिर्यञ्च स्त्री से देवों को असंख्येयगुणा माना जाए तो तिर्यञ्च स्त्री से गर्भज तिर्यञ्च नपुंसकों को भी असंख्येयगुणा मानना होगा अर्थात् ऐसा मानना होगा कि एक स्त्री असंख्य पुत्रों को जन्म देगी जो कि भगवतीसूत्र के उपर्युक्त कथन से विरुद्ध होगा क्योंकि वहाँ स्पष्ट बताया है कि एक जीव एक भव में पृथक्त्व लाख अर्थात् संख्येय पुत्रों को जन्म दे सकता है इससे यह सिद्ध होता है कि २६वें बोल में तिर्यञ्च स्त्री से ४१वाँ बोल ज्योतिषी देवी संख्येयगुणी ही है, असंख्येय गुणी नहीं।

⇨ बिन्दु क्रमांक-४

महादण्डक में ३७वें बोल से ४५वें बोल तक का अल्पबहुत्व इस प्रकार बताया है :—

३७. जलचर तिर्यञ्च स्त्री संख्येयगुणी
३८. वाणव्यन्तर देव संख्येयगुणा
३९. वाणव्यन्तर देवी संख्येयगुणी
४०. ज्योतिष्क देव संख्येयगुणा
४१. ज्योतिष्क देवी संख्येयगुणी
४२. खेचर तिर्यञ्च नपुंसक संख्येयगुणा
४३. स्थलचर तिर्यञ्च नपुंसक संख्येयगुणा
४४. जलचर तिर्यञ्च नपुंसक संख्येयगुणा
४५. चतुरिन्द्रिय पर्याप्त संख्येयगुणा[१८]

३८वें बोल से ४५वें बोल की तुलना :

प्रज्ञापनासूत्र के बारहवें पद में वाणव्यन्तरों की संख्या संख्येय सौ योजन वर्ग से विभाजित प्रतर के परिमाण वाली कही है।[१९] प्रज्ञापनासूत्र की मलयगिरि टीका, जीवाजीवाभिगमसूत्र की मलयगिरि टीका में पर्याप्त चतुरिन्द्रियों की संख्या अंगुल के संख्यातवें भाग (वर्ग) से विभाजित प्रतर के परिमाण वाली कही है।[२०]

तदनुसार ३८वें बोल वाणव्यन्तर देवों की अपेक्षा ४५वाँ बोल पर्याप्त चतुरिन्द्रिय संख्येयगुणा ही प्राप्त होता है। यथा-

''संख्यात सौ योजन वर्ग ÷ अंगुल के संख्यातवें भाग वर्ग = संख्यात''

३७वें बोल से ३८वें बोल को संख्यातगुणा अधिक बताया है। आगे ३८वें बोल से ४५वें बोल तक के प्रत्येक बोल को भी संख्येयगुणा अधिक माना है तथा ३८वें बोल से ४५वाँ बोल भी संख्येयगुणा ही कहा है अर्थात् ३९वें, ४०वें, ४१वें, ४२वें, ४३वें, ४४वें तथा ४५वें - इन सारे संख्यातगुणा अधिक के बोलों को मिलाने पर भी ३८वें बोल से ४५वाँ बोल असंख्येयगुणा नहीं होकर संख्येयगुणा ही रहता है। इन सात बोलों (३९ नं. से ४५ नं.) के 'संख्येयगुण' को मिलाने पर भी संख्येयगुणा ही रहता है तो ३७वें से ४०वें बोल में मात्र ३८वें, ३९वें एवं ४०वें - इन तीन 'संख्यातगुणा' को मिलाने पर 'असंख्यातगुणा' कैसे माना जाए? इन तीन में भी ३८वें से ३९वें के संख्यातगुण का प्रमाण 'बत्तीस गुणा बत्तीस अधिक' माना है[२१] तथा ३९वें से ४०वें बोल के संख्यातगुण का प्रमाण भी लगभग ''संख्यात सौ योजन वर्ग ÷ २५६ अंगुल वर्ग''[२२] अर्थात् इन दोनों संख्यातगुणों में संख्यात का परिमाण बहुत ही छोटा संख्यात है। ऐसी स्थिति में ३७वें बोल से ३८वें बोल के संख्यातगुण अधिक में 'संख्यात' को अत्यधिक बड़ा मानने की अतिक्लिष्ट कल्पना करने पर ही ३७वें बोल से ४०वाँ बोल असंख्यातगुणा हो सकता है।

इस प्रकार की कल्पना तभी औचित्यपूर्ण कही जा सकती थी जब आगम स्पष्टतः सर्वत्र तिर्यञ्च स्त्री से देवों को असंख्येयगुण अधिक कहते, किन्तु चूँकि आगम पाठों में संख्येय एवं असंख्येय ये दोनों पाठ प्राप्त हो रहे हैं, टीकाकार प्रधानता से संख्येयगुण ही कह रहे हैं, जीवसमास आदि में भी संख्यातगुणा

का उल्लेख है,[२३] अतः ३७वें बोल से ३८वें बोल को बहुत बड़ा संख्यातगुणा मानने की क्लिष्ट कल्पना कथमपि औचित्यपूर्ण नहीं कही जा सकती। तदनुसार ३७वें बोल से ३८वें बोल को सामान्य संख्येयगुण अधिक मानना चाहिए।

३८वें बोल से ४०वाँ बोल छोटा संख्येयगुणा अधिक है, यह ऊपर कहा जा चुका है। वैसी स्थिति में यह स्वतः सिद्ध है कि ३७वें बोल से ४०वां बोल संख्येयगुण अधिक है अर्थात् तिर्यञ्च स्त्री से देव संख्येयगुण ही है।

⇨ बिन्दु क्रमांक-५

'जीवसमास' गाथा २७२ एवं उसकी मलधारी हेमचन्द्रसूरिजी कृत वृत्ति में भी तिर्यञ्च स्त्री से देवों को संख्येयगुणा ही बताया है।[२४]

जीवसमास गाथा १५२ एवं उसकी मलधारी हेमचन्द्रसूरिजी कृत वृत्ति से भी यही अर्थ निकलता है कि तिर्यञ्च स्त्री से देव संख्येयगुणा है।[२५]

⇨ बिन्दु क्रमांक-६

इसके अतिरिक्त दिगम्बर ग्रन्थ 'षट्खण्डागम' तथा उसकी धवला टीका में भी ऐसा स्पष्ट उल्लेख है कि तिर्यञ्च स्त्री से देव संख्येयगुणा है।[२६]

⇨ उपसंहार :

उपर्युक्त प्रमाणों से सुसिद्ध है कि तिर्यञ्च स्त्री से देव स्त्री संख्येयगुण ही है। किन्हीं-किन्हीं सूत्रपाठों में तिर्यञ्च स्त्री से देव या देवपुरुष या देवस्त्री के असंख्येयगुण होने का जो कथन हुआ है, वह लिपि-प्रमादादि से समझना चाहिए।

*

सन्दर्भ स्थल

१. ३७. जलचरपंचेंदियतिरिक्खजोणिणीओ संखेज्जगुणाओ
३८. वाणमंतरा देवा संखेज्जगुणा
३९. वाणमंतरीओ देवीओ संखेज्जगुणाओ
४०. जोइसिया देवा संखेज्जगुणा
४१. जोइसिणीओ देवीओ संखेज्जगुणाओ
— प्रज्ञापनासूत्र (पद ३) सूत्र ३३४, सम्पादक - मुनि श्रीपुण्यविजयजी

२. "एतेसिं णं भंते ! नेरइयाणं तिरिक्खजोणियाणं तिरिक्खजोणित्थीणं मणुस्साणं मणुस्सीणं

देवाणं देवीणं सिद्धाण य अट्ठगतिसमासेणं कतरे कतरेहिंतो अप्पा वा बहुया वा तुल्ला वा विसेसाहिया वा ?

गोयमा! सव्वत्थोवाओ मणुस्सीओ, मणुस्सा असंखेज्जगुणा, नेरइया असंखेज्जगुणा, तिरिक्खजोणिणीओ असंखेज्जगुणाओ, देवा असंखेज्जगुणा, देवीओ संखेज्जगुणाओ, सिद्धा अणंतगुणा, तिरिक्खजोणिया अणंतगुणा ।''

- प्रज्ञापनासूत्र (पद-३) सूत्र २२६, सम्पादक - मुनि श्रीपुण्यविजयजी

३. ''संख्यातगुण के कई बोल मिलकर असंख्यातगुण हो सकते हैं । ९८ बोलों में अन्तिम ४०वाँ बोल देवों का आया है, वह ३७ बोल से तीन बोल आगे है । उन तीन बोलों को मिलाने से तथा पिछले देवों के बोलों को मिलाने से असंख्यगुण हो जाते हैं ।''

- समर्थ समाधान, भाग-२, प्रश्नोत्तर क्रमांक १२२९, पृ. २७५, तृतीय आवृत्ति, जून १९९९ (बहुश्रुत पं. समर्थमलजी म.सा. द्वारा दिये गये उत्तरों का संग्रह) सम्पादक-रतनलाल डोसी

४-५. ''एतेसि णं भंते! तिरिक्खजोणियपुरिसाणं मणु. देव पु. कतरे क(४) सव्वत्थोवा मणुस्सपु. तरि. असं. देवपुरि. संखे.'

- जीवाजीवाभिगम सूत्र, तृतीय प्रतिपत्ति, जेताजि २५-१, पत्र १०b

६. ''अप्पाबहुयाणि जहेवित्थीणं''

- जीवाजीवाभिगमसूत्र, तृतीय प्रतिपत्ति, सूत्र ५६ (आगमोदय समिति, पत्र ७१a)

७. ''सर्वस्तोका मनुष्यस्त्रियः.... ताभ्यस्तिर्यग्योनिकस्त्रियोऽसङ्ख्येयगुणाः... तत्ताभ्योऽपि देवस्त्रियोऽसङ्ख्येयगुणाः''

- जीवाजीवाभिगमसूत्र, तृतीय प्रतिपत्ति, सूत्र ५० पर मलयगिरि टीका, पत्र ६३a

८. ''सर्वस्तोकाः मनुष्यपुरुषाः, सङ्ख्येयकोटीकोटीप्रमाणत्वात्, तेभ्यस्तिर्यग्योनिकपुरुषा असङ्ख्येयगुणाः, प्रतरासङ्ख्येयभागवर्त्त्यसङ्ख्येयश्रेणिगताकाशप्रदेशराशिप्रमाणत्वात्तेषां, तेभ्यो देवपुरुषाः सङ्ख्येयगुणाः बृहत्तरप्रतरासङ्ख्येयश्रेणिगताकाशप्रदेशराशिप्रमाणत्वात् ।''

- जीवाजीवाभिगमसूत्र, तृतीय प्रतिपत्ति, सूत्र ५६ पर मलयगिरि टीका, पत्र ७१b

९. (a) ''तिरिक्खजोणिणीओ असंखेज्जगुणाओ, देवा संखेज्जगुणा''

- जीवाजीवाभिगमसूत्र, सर्वजीवप्रतिपत्ति (अष्टविध), आगमोदय समिति, सूत्र २६२, पत्र ४६० ब; आगम प्रकाशन समिति, पृ. २०५; घासीलालजी भाग ३, पृ. १४९१; सुत्तागमे, पृष्ठ २६०

(b) ''तेभ्यस्तिर्यग्योन्योऽसङ्ख्येयगुणाः ताभ्यो देवाः सङ्ख्येयगुणाः''

- जीवाजीवाभिगमसूत्र के उपर्युक्त पाठ पर मलयगिरि टीका, पत्र ४६१अ

१०. ''तिरिक्खजोणिणीओ असंखेज्जगुणाओ, देवा संखेज्जगुणा''

- जीवाजीवाभिगमसूत्र, षष्ठ प्रतिपत्ति, अभिधान राजेन्द्र कोष, भाग १, पृष्ठ ६३६; गुरुप्राण फाउन्डेशन ट्रस्ट, पृ. ६८४

'ताभ्यो देवाः सङ्ख्येयगुणाः, वानमन्तरज्योतिष्काणामपि जलचरतिर्यग्योनिकीभ्यः सङ्ख्येयगुणतया महादण्डके पठितत्वात्'

- जीवाजीवाभिगमसूत्र के उपर्युक्त सूत्र पर मलयगिरि टीका, पत्र ४२८ब

११. ''तिरिक्खजोणित्थियाओ असंखेज्जगुणाओ, देवपुरिसा संखेज्जगुणा'

- जीवाजीवाभिगमसूत्र, द्वितीय प्रतिपत्ति - द्रव्यानुयोग, भाग ३, पृष्ठ १४४७ (गुजराती संस्करण); जैन विश्व भारती, लाडनूँ, सूत्र २/१४५ पृष्ठ २५३; गुरुप्राण फाउण्डेशन ट्रस्ट, पृष्ठ १६७, सूत्र ११९

१२. ''तिरिक्खजोणित्थियाओ असंखेज्जगुणाओ, देवित्थियाओ संखेज्जगुणाओ''

- जीवाजीवाभिगमसूत्र, द्वितीय प्रतिपत्ति- अभिधान राजेन्द्र कोष, भाग १ पृष्ठ ६६३; अमोलक ऋषिजी, पत्र ८४; राय धनपतसिंह बहादुर द्वारा प्रकाशित

१३. देखे टिप्पण क्रमांक-५

१४. देखिये टिप्पण क्रमांक-४

१५. देखिये टिप्पण क्रमांक-७

१६. ''एगजीवस्स णं भंते! एगभवग्गहणेणं केवइया जीवा पुत्तत्ताए हव्वमागच्छंति?
गोयमा! जहन्नेणं इक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं सयसहस्सपुहत्तं जीवा णं पुत्तत्ताए हव्वमागच्छंति।''

- वियाहपण्णत्तिसुत्तं, शतक २, उद्देशक ५, सूत्र ८(१) (महावीर जैन विद्यालय)

१७. (४१) जोइसिणीओ देवीओ संखेज्जगुणाओ
(४२) खहयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिया णपुंसया संखेज्जगुणा
(४३) थलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिया णपुंसया संखेज्जगुणा
(४४) जलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिया णपुंसया संखेज्जगुणा

- प्रज्ञापनासूत्र, पद-३, सूत्र ३३४, सम्पादक - मुनि श्रीपुण्यविजयजी

१८. (३७) जलयरपंचेदियतिरिक्खजोणिणीओ संखेज्जगुणाओ
(३८) वाणमंतरा देवा संखेज्जगुणा
(३९) वाणमंतरीओ देवीओ संखेज्जगुणाओ
(४०) जोइसिया देवा संखेज्जगुणा
(४१) जोइसिणीओ देवीओ संखेज्जगुणाओ
(४२) खहयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिया णपुंसया संखेज्जगुणा
(४३) थलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिया णपुंसया संखेज्जगुणा
(४४) जलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणिया णपुंसया संखेज्जगुणा
(४५) चउरिंदिया पज्जत्तया संखेज्जगुणा

- प्रज्ञापनासूत्र, (पद ३), सूत्र ३३४, सम्पादक - मुनिश्री पुण्यविजयजी

१९. ''वाणमंतराणं जहा णेरइयाणं ओरालिया आहारगा य। वेउव्वियसरीरगा जहा णेरइयाणं, णवरं तासि णं सेढीणं विक्खंभसूई संखेज्जजोयणसयवग्गपलिभागो पयरस्स''

– प्रज्ञापनासूत्र, (पद १२) सूत्र ९२२, सम्पादक – मुनि श्रीपुण्यविजयजी

२०. (i) ''सर्वस्तोकाश्चतुरिन्द्रियाः पर्याप्ताः यतोऽल्पायुषश्चतुरिन्द्रियास्ततः प्रभूतकालमवस्थानाभावात् पृच्छासमये स्तोका अवाप्यन्ते, ते च स्तोका अपि प्रतरे यावन्त्यङ्गुलसङ्ख्येयभागमात्राणि खण्डानि तावत्प्रमाणा वेदितव्याः''

– प्रज्ञापनासूत्र (पद ३) सूत्र-५८ पर मलयगिरि वृत्ति, पत्रांक-१२१ब (आगमोदय समिति)

– जीवाजीवाभिगमसूत्र, सूत्र २२५ पर मलयगिरि वृत्ति, पत्रांक ४१०ब (आगमोदय समिति)

(ii) ''खेत्तेण बीइंदिय-तीइंदिय-चउरिंदिय-पंचिंदिय तस्सेव पज्जत्तअपज्जत्तेहि पदरं अवहिरदि अगुलस्स असंखेज्जदिभागवग्गपडिभाएण, अंगुलस्स संखेज्जदिभागवग्गपडिभाएण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागवग्गपडिभाएण''

– षट्खण्डागम, द्वितीयक्षुद्रकबन्ध, द्रव्यप्रमाणानुगम नामक पाँचवां अनुयोगद्वार, सूत्र ६४ (षट्खण्डागम २/५/६४) पुस्तक ७, पृष्ठ २७० (सम्पादक – पं. फूलचन्द्रजी सिद्धान्त शास्त्री)

(iii) ''सूचिअंगुलस्स संखेज्जदिभागे वग्गिदे एदेसिं पज्जत्ताणमवहारकालो होदि''

– षट्खण्डागम २/५/६४ पर 'धवला' टीका, पुस्तक ७, पृष्ठ २७० (सम्पादक – पं. फूलचन्द्रजी सिद्धान्त शास्त्री)

२१. ''देवित्थियाओ देवपुरिसेहिंतो बत्तीसइगुणाओ बत्तीसरूवाहियाओ''

– जीवाजीवाभिगमसूत्र, द्वितीय प्रतिपत्ति, अन्तिम सूत्र (सूत्र ६४)

२२. ''जोतिसियाणं एवं चेव। णवरं तासि णं सेढीणं विक्खंभसूई बेछप्पण्णंगुलसयवग्गपलिभागो पयरस्स''

– प्रज्ञापनासूत्र (पद १२) सूत्र ६२२, सम्पादक – मुनि श्रीपुण्यविजयजी

२३. देखें बिन्दु ४ एवं ५

२४. (a) ''थोवा य मणुस्सीओ नर नरयतिरिक्खओ असंखगुणा।
सुरदेवी संखगुणा सिद्धा तिरिया अणंतगुणा ॥२७२॥''

– जीवसमास (अज्ञातकर्तृक), गाथा २७२, सम्पादक – आ. शीलचन्द्रसूरिजी

(b) ''तेभ्योऽपि तिरश्चोऽसङ्ख्येयगुणाः महादण्डके हि नारकेभ्यो(ऽ)सङ्ख्येयगुणास्तिर्यक(क्)पुरुषाः पठ्यन्ते तद्योषितस्तु तेभ्यस्त्रिगुणास्त्रिरूपाधिका इति युक्तं तासां नारकापेक्षयाऽसङ्ख्येयगुणत्वम्।

– जीवसमास गाथा २७२ पर मलधारी हेमचन्द्रसूरिजी कृत वृत्ति पृष्ठ २३१ सम्पादक – आ. शीलचन्द्रसूरिजी

२५. (a) संखेज्जहीणकालेण होइ पज्जत्ततिरियअवहारो ।
संखेज्जगुणेण तओ कालेण तिरिक्खअवहारो ॥५२॥
- जीवसमास (अज्ञातकर्तृक), गाथा १५२ सम्पादक- आ. शीलचन्द्रसूरिजी

(b) अथोत्तरार्द्धेनैतेषामपि मध्यान्निर्धार्य तिर्यग्योषितां प्रमाणमाह - 'संखेज्जगुणेण तओ' इत्यादि । ततो देवसम्बन्धिनः प्रतरापहारकालात् सङ्ख्यातगुणेन कालेन तिरश्चीनां प्रतरस्याऽपहारो मन्तव्यः । संवदति चेदं महादण्डकेन । यतस्तत्र व्यन्तरादि-देवेभ्योऽधस्तात् सङ्ख्यातभागवृत्तित्वेन तिरश्च्योऽधीताः व्यन्तरादिदेवास्तु ताभ्यः सङ्ख्यातगुणाः पठिता इति । अतो बहुत्वादमी तिरश्चीप्रतरापहारकालात् सङ्ख्यातगुणहीनेनापि कालेन प्रागभिहितनीत्या प्रतरमपहरन्ति । तिरश्च्यस्तु देवेभ्यः सङ्ख्यातगुणहीनत्वात् स्वल्पा इति तदपहारकालात् सङ्ख्यातगुणेन कालेन प्रतरमपहरन्तीति युक्तियुक्तमेवेति ।
- जीवसमास गाथा १५२ पर मलधारी हेमचन्द्रसूरिजी कृत वृत्ति पृष्ठ १३०
सम्पादक - आ. शीलचन्द्रसूरिजी

२६. (a) अट्ठ गदीओ समासेण ॥७॥
सव्वत्थोवा मणुस्सिणीओ ॥८॥
मणुस्सा असंखेज्जगुणा ॥९॥
णेरइया असंखेज्जगुणा ॥१०॥
पंचिंदियतिरिक्खजोणिणीओ असंखेज्जगुणा ॥११॥
देवा संखेज्जगुणा ॥१२॥
देवीओ संखेज्जगुणाओ ॥१३॥
सिद्धा अंणतगुणा ॥१४॥
तिरिक्खा अणंतगुणा ॥१५॥
- षट्खण्डागम, द्वितीय क्षुद्रकबन्ध, ग्यारहवाँ अल्पबहुत्वानुगम
सूत्र ७ से १५ (षट्खण्डागम २/११/७-१५) पुस्तक ७, पृष्ठ ५२२-५२३
सम्पादक - पं. फूलचन्द्रजी सिद्धान्त शास्त्री

(b) ''एत्थ गुणागारो तप्पाओग्गसंखेज्जरूवाणि । कुदो? देव-अवहार-कालेण तेत्तीसरूवगुणिदेव पंचिंदियतिरिक्खजोणिणीणमवहारकाले भागे हिदे संखेज्जरूवोवलंभादो'
- षट्खण्डागम २/११/१२ पर धवला टीका, पुस्तक ७, पृष्ठ ५२३
सम्पादक - पं. फूलचन्द्रजी सिद्धान्त शास्त्री

* * *

नमः श्रीश्रुतदेवतायै ॥

बृहत्कल्पचूर्णि - बृहत्कल्पबृहद्भाष्य के पीठिकाखण्ड की प्रस्तावना*

आगम और छेदसूत्र

भगवान् श्रीवीर वर्धमान जिनके धर्मशासन की मूल परम्परा के अनुसार पञ्चाङ्गी आगम प्रमाण माने जाते हैं। सूत्र, अर्थ, ग्रन्थ, निर्युक्ति, सङ्ग्रहणी ये पांच अङ्ग, अथवा सूत्र, निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, वृत्ति ये पांच अङ्ग, इनसे युक्त आगम प्रमाणरूप में स्वीकारा जाता है। 'आगम' यानी मूल सूत्रग्रन्थ, उनमें से अमुक ग्रन्थ पर निर्युक्ति, भाष्य एवं चूर्णि की रचना हुई है। ये सभी मूल ग्रन्थ के तात्पर्य को विशद करनेवाले ग्रन्थ ही हैं।

वर्तमान में उपलब्ध आगम की संख्या ४५ है। ११-अङ्गसूत्र, १२-उपाङ्गसूत्र, १०-प्रकीर्णकसूत्र, ६-छेदसूत्र, ४-मूलसूत्र, २-नन्दीसूत्र व अनुयोगद्वारसूत्र - ऐसे वे ४५ होते हैं।

इन ४५ में से 'छेदसूत्र' ग्रन्थों का प्रधान विषय, जैन मुनिओं के आचारपालन का, एवं आचारपालन में क्षति हो तो उसके लिए क्या दण्ड या प्रायश्चित्त हो यह है। यद्यपि इन बातों के प्रतिपादन के साथ आनुषङ्गिक अनेक तात्त्विक, दार्शनिक एवं व्यावहारिक विषयों का निरूपण भी यहाँ होता रहता ही है, तथापि प्रधान विषय तो प्रायश्चित्त-विधान ही रहा है।

इस विषय का प्रतिपादन करनेवाले मुख्य तीन ग्रन्थ हैं : कल्प, व्यवहार और निशीथ। इन तीनों का मूल स्वरूप सूत्रात्मक है। तीनों के उपर भाष्य एवं चूर्णि उपलब्ध है। निशीथ के अलावा दो छेदग्रन्थों के उपर वृत्ति की रचना भी हुई है। इन तीन में से निशीथसूत्र की चूर्णि एवं इतर दो सूत्रों की वृत्ति मुद्रित रूप में उपलब्ध है, परंतु कल्पसूत्र व व्यवहारसूत्र की चूर्णि अद्यावधि मुद्रित नहीं हुई है। यद्यपि कुछ समय पूर्व कल्पसूत्र की विशेषचूर्णि मुद्रित हो गई है, परंतु चूर्णि का मुद्रण अभी बाकी है।

---

* प्र. – श्रीहेमचन्द्राचार्य शिक्षणनिधि - अहमदाबाद, ई. २०१८

कल्पचूर्णि का सम्पादन

हमारा प्रयत्न, कुछ समय से, चूर्णिग्रन्थ के सम्पादन का एवं प्रकाशन का चल रहा है। परन्तु जैसे जैसे इस कार्य में आगे बढते हैं वैसे वैसे यह कार्य कितना गम्भीर और दुरूह है उसकी प्रतीति होती जा रही है।

यद्यपि हमारे द्वारा बृहत्कल्पचूर्णि का यह प्रथम पीठिकात्मक खण्ड पहले सम्पादित व प्रकाशित हो चुका है, परन्तु तदनन्तर बृहद्भाष्य का कार्य जब प्रारम्भ किया, तब उसके परिप्रेक्ष्य में चूर्णि एवं वृत्ति का पुनः अवलोकन करना हुआ। और तब लगा कि इन तीनों को साथ में रखकर ही पुनः सम्पादन एवं संशोधन किया जाना चाहिये। और हमने पुनः आरम्भ कर दिया, मानों पहले हमने कार्य किया ही नहीं है!। इस सुदीर्घ पुनः परिश्रम का परिणाम है यह प्रथम खण्ड।

पूर्व संस्करण के बारे में

हमारा खयाल था कि जैसे अन्य संस्कृत आदि ग्रन्थों का कार्य करने में पहले प्रतिलिपि की जाय, और तदनुसार एक शुद्ध लगनेवाली वाचना तैयार कर देना होता है ऐसा इस चूर्णिग्रन्थ में भी करेंगे तो ग्रन्थ तैयार हो जायेगा। हमने जो इस चूर्णि का पीठिकात्मक प्रथम-खण्ड प्रकाशित किया है वह इसी खयाल में किया गया कार्य है, यह स्वीकारना चाहिए। बढते समय, वांचन व अनुभव के साथ स्पष्ट हुआ कि वह कार्य योग्य एवं यथार्थ, जैसा होना चाहिए वैसा, नहीं हुआ। किसी को दोष देने से हमारी जिम्मेदारी कम नहि होती है। अतः यहाँ हम निवेदन करेंगे कि इस ग्रन्थ के उक्त प्रकाशन को अब अनुपयुक्त समझा जाय। उसके आधार पर कोई अपना शोधकार्य एवं स्वाध्यायकार्य न करे। अस्तु।

नये सम्पादन की विशेषता

इस नये संस्करण में हमें कोई नई या दूसरी प्रति प्राप्त हुई है ऐसा नहीं। जो प्रतियाँ पहले थी, उन्हीं का आधार इस संस्करण में भी लिया गया है। हम इस चूर्णिग्रन्थ को, कल्पवृत्ति एवं कल्पबृहद्भाष्य - दोनों के पीठिका-खण्ड के साथ रखकर बार बार पढते रहे। तीनों के पाठों को अर्थसंगति की दृष्टि से सतत देखते रहे और वाचना का शुद्धीकरण करते गये। फलस्वरूप —

१. चूर्णि की वाचना यथासंभव अधिकांश में शुद्ध हुई ।

२. गाथाओं का क्रम पुनः प्रस्थापित हुआ ।

३. छूट जानेवाली गाथाओं का यथास्थान निवेश-समावेश किया, तो अनावश्यक गाथाओं को निकाल भी दी ।

४. चूर्णिग्रन्थ का विवरणात्मक अंश व अवतरणात्मक अंश - दोनों कई जगह पर एक-दूसरे में घुलमिल गये थे, उन अंशों का उचित विभाजन व व्यवस्थापन हुआ ।

५. प्रथम संस्करण में जो पाठान्तर टिप्पणीरूप में लिये थे, उनमें से कई पाठ मूल वाचना के अनुरूप थे, अतः ऐसे पाठों को वाचना में समाकर, वाचनावाले पाठों को पाठान्तर बनाये ।

६. ताडपत्रपोथी में भी पुनर्वाचन के समय पर कितनेक अच्छे व सुसंगत पाठ प्राप्त हुए, तो उनको भी यथास्थान ले लिये ।

७. चूर्णिकार को मान्य जो भाष्यवाचना रही होगी, अथवा जिस वाचना के शब्द एवं पाठ पर चूर्णिकार ने चूर्णि बनाई है, उस वाचना का चूर्णिग्रन्थ के अनुसार पुनः संयोजन किया । पहले संस्करण में कल्पभाष्य-गाथाओं की वाचना लगभग वृत्तिग्रन्थ में मुद्रित गाथाओं का अन्ध अनुसरणमात्र था । जब गौर से चूर्णि का वाचन हुआ, तब पता चला कि गाथा में जो पद हैं उसकी या उनकी व्याख्या चूर्णि में नहि है, और चूर्णि में जिस या जिन पद का विवरण है, वह गाथाओं में नहि है । तो हमने भरपूर प्रयास करके चूर्णिसम्मत भाष्यवाचना का संयोजन किया है । अध्येताओं को वृत्तिग्रन्थ की गाथाओं में और चूर्णिग्रन्थ की गाथाओं में अगर भिन्नता मालूम पडे, तो उसका कारण यही है ।

८. विरामचिह्नों को हरसम्भव यथास्थान लगाये । पूर्व संस्करण में विरामचिह्न आगे-पीछे यानी जहाँ होने चाहिये एवं जैसे होने चाहिये वहाँ और वैसे न होने से अर्थसंगति एवं पाठसंगति में बहुत कठिनाई व क्षति होती थी । यहाँ यथाशक्य उसका निवारण किया गया है ।

बृहद्भाष्य की बात

बृहत्कल्प-बृहद्भाष्य के विषय में भी कुछ कहना है। बृहद्भाष्य की प्रतिलिपि पं. रूपेन्द्रकुमार पगारिया ने कागज-प्रतियों के आधार से लिखी थी। वही हमारे सामने थी। हमने बृहद्भाष्य की २ ताडपत्रपोथी प्राप्त की। उनको सामने रखकर हमने बृहद्भाष्य की पुनः प्रतिलिपि लिखी। बाद में ताडपत्रीय वाचना को कागजप्रतियों के साथ अक्षरशः मिलाई। ताडपत्रसमेत सभी प्रतियाँ अशुद्ध व भ्रष्ट पाठों से भरी थी। फिर भी भ्रष्ट पाठों को कई जगह पहचान पाये, पकड सके, और थोडा थोडा शुद्ध कर सके।

तदनन्तर बृहद्भाष्य के साथ चूर्णि एवं वृत्ति को रखकर पुनः पठन किया। फलतः तीनों ग्रन्थों की कई क्षतियाँ सुधार सके और उनकी वाचना अधिक स्वच्छ हो सकी। पश्चात् बृहद्भाष्य को पुनः लिखा। लिखने से पूर्व, लिखते वक्त एवं लिखने के बाद भी सतत अन्यान्य ग्रन्थों के उपयुक्त सन्दर्भों के साथ बृहद्भाष्य के एवं चूर्णि के पाठों का मिलान और तुलना करते गये और जहाँ जो भी उचित व उपयुक्त प्राप्त हुआ उसका विनियोग इन दोनों में करते गये। और कई स्थान ऐसे भी हैं जहाँ, हमारे निरन्तरतापूर्ण एवं सातत्यपूर्ण इस विषय के अध्यवसाय व व्यवसाय बने रहने के कारण, हमें योग्य व शुद्ध पाठ की सहज स्फुरणा हुई, और बाद में ग्रन्थसन्दर्भों के साथ उसे मिलाते तो उसे उनका समर्थन मिलता रहा, तो इस तरह भी वाचनाशुद्धि हमने की है।

यहाँ पुनः स्पष्टता करेंगे कि सहज स्फुरणा हो या अन्य सन्दर्भों का आधार हो, हमने जो भी शुद्धीकरण एवं सुधारा किये हैं उनमें हमारी मतिकल्पना का एक अंश भी नहि है। हरएक सुधारा अन्यान्य शास्त्र को आधार बनाकर, अथवा शास्त्राधीन ही किया गया है। जहाँ शास्त्राधार व शास्त्राधीनता न हो वैसी कल्पना तो स्वच्छन्दता ही होगी, जो हमें उत्सूत्रकथन की ओर ले जा सकती है। अतः मतिकल्पना और स्फुरणा को लेकर कोई गलतफहमी न करें या बगैर देखे-सोचे गलत आक्षेपबाजी न करें। हाँ, क्षति हो तो अवश्य दिखाएँ, क्योंकि हम भी छद्मस्थ व अज्ञ जीव हैं, क्षति न हो ऐसा हम दावा नहि कर सकते, अतः जहाँ, जो भी क्षति दिखाई दे उसकी ओर हमारा ध्यान अवश्य दिलावें, इतनी विज्ञप्ति।

जैसा कि उपर कहा, बृहद्भाष्य की ताडपत्रप्रतियाँ एवं कागज की

प्रतियाँ अत्यन्त अशुद्ध एवं भ्रष्ट वाचना देती हैं। अतः उस वाचना को स्पष्ट एवं शुद्ध करने का कार्य बडा ही श्रमसाध्य और अनुभवसाध्य था। हमारी मर्यादा यह थी कि हमारे पास श्रम तो था, मगर अनुभव नहि था। और जिस की सहाय की आशा की जाय ऐसा कोई अनुभवी व्यक्ति भी न था। प्रवाह से उलटी दिशा में तैरने जैसा विकट था यह कार्य !।

१. बृहद्भाष्य की गाथा १ से २२ लिखने के बाद, २२ वीं गाथा के उत्तरार्ध से ही गा. ४७९ का आरम्भ हरएक प्रति में हो गया है। यह क्रम गा. ५१३ पर्यन्त चलता है, और वहाँ ५१३ के बाद यकायक २३ वीं गाथा मिलती है। और ऐसी उथलपुथल ग्रन्थ में कई बार आती है। अब कोई भी पढनेवाला पूरे ग्रन्थ का संघटन कैसे कर पाएगा ?। हमने भी अगर अपने हाथों से बृहद्भाष्य न लिखा होता, और थक गये होते, तो यह कार्य नहीं ही कर पाते।

२. पाठों की भ्रष्टता के उदाहरण - 'पयत्थ' के बदले 'पसत्त' (गा. ५११), 'वन्नंति' के बदले 'यत्तंति' (५०१), 'निव्वत्ती' के बदले 'निज्जुत्ती' (५०८), 'होंतिमे तु' के बदले 'होतिमोतु' (५२८), ऐसे सहस्राधिक भ्रष्ट पाठ थे, जहाँ हमें सही पाठ की कल्पना करने की थी।

३. कई गाथाएँ त्रुटित थी। या तो आधी-अधूरी थी, या तो गाथा के थोडे शब्द हो, शेष न हो ऐसा भी था। उन त्रुटित अंशों की संघटना, पूर्वापर सन्दर्भ एवं प्रकरण आदि के अनुसार कल्पना से करनी होती थी, और जहाँ मिले वहाँ चूर्णि एवं वृत्ति का आधार भी लेते थे।

४. गाथाओं के अङ्क या तो अनेक जगह थे नहि। थे तो कहीं कहीं गाथा के प्रथम चरण पर ही या तीसरे चरण पर ही अङ्क लिख दिया होता था। कहीं पूर्वार्ध में एक गाथाङ्क और उत्तरार्ध में दूसरा गाथाङ्क होता था। पूरी प्रति में ऐसा था। वहाँ हर जगह छन्द के बंधारण को एवं विषयनिरूपण को ध्यान में रखकर गाथाओं का व उनके क्रम का गठन हमने किया है।

५. अर्थ की दृष्टि से भी अस्पष्ट हो, उचित या संगत न हो, ऐसे पाठ अनेक जगह पर थे। एक-दो उदाहरण लें –

गा. ६२९ में 'रुक्खापुव्वेतकवा' पाठ था। यहाँ ग्रन्थकार क्या कहना

चाहते थे यह कई दिनों तक हमारी समज में नहि आया। पन्ने फेरते रहे, सन्दर्भ खोजते रहे। एक दिन अचानक स्फुरणा हुई : 'रुक्खापु' को 'रुक्खायु' पढा जाय तो ?, और प्रकाश हो गया - 'रुक्खायुव्वेतकता' यानी यहाँ 'वृक्षायुर्वेद' से किसी क्रिया करने का सन्दर्भ था। अब यह बात खुल जाने के बाद बडी आसान लगेगी, लेकिन जब तक नहि खुली थी, तब की मनःस्थिति व परिश्रम की तो हमें ही खबर है।

गा. ७०७ में 'सामयणाते' पाठ था। बहुत सोचने व खोजने पर भी स्पष्टता नहि होती थी। सहसा एक दिन चूर्णिगत 'अप्पग्गंथ महत्थं' गाथा की चूर्णि पर ध्यान गया, और स्पष्ट हो गया कि यहाँ 'सामातियं-ऽजणाति' पाठ होना चाहिए।

गा. ७३९ में 'सधगंति सत्तंते' पाठ आया। बहुत परेशानी हुई। उसको यथावत् रखकर आगे भी बढे। और एक बार सहसा स्फुरा कि यहाँ 'यति' की बात है और वह छन्द से जुडी हुई चीज है, तो यहाँ कोई छन्द का नाम तो नहि है ?, जरा जमकर सोचा तो लगा कि यहाँ 'सद्धरम्मि सत्तंते' पाठ होना चाहिए, क्योंकि 'स्रग्धरा' छन्द में सातवें अक्षर पर 'यति' आती है। और यह कई दिनों की माथापच्ची के बाद स्पष्ट हुआ था।

इन सभी कठिनाईयों के बावजूद, जब भी ऐसे स्थान पर अर्थ से और विषयनिरूपण से सुसंगत पाठ की कल्पना स्फुरित हो जाय, और उस कल्पना या स्फुरणा को अन्यान्य शास्त्रसन्दर्भों के साथ मिलाने पर वह उचित होने की प्रतीति हो जाय, तब तो हमने आनन्दोत्सव की अनुभूति पाई है, और एतदर्थ किये गये सारे श्रम का जवाब या फल प्राप्त हो जाने का परितोष पाया है।

परन्तु इतने परिश्रम के बाद भी, हम, बृहद्भाष्य के एक अंश को यानी कि पीठिका-अंश को, उसके स्पष्ट, शुद्ध एवं महत्तम उचित रूप में, प्रस्तुत कर पाएं है उसका हमें तीव्र आनन्द है।

कर्तृत्व पर विमर्श

जैसे पूर्वसूरिओं को, वैसे हमें भी कुछ सवाल उठे हैं, उठते हैं, और उन सवालों का समाधान खोजने का प्रयत्न हमने भी किया है। यद्यपि पूर्वसूरिओं ने इन

सब सवालों पर गहराई से चिन्तन किया है, और उपलब्ध प्रमाणों के व अपने तर्कों के बल से उन सवालों का हल भी दिया है या तो देने का उद्यम किया है, अतः हम यहाँ कोई नयी बात या दलील कहेंगे ऐसा तो प्रायः नहि है। तथापि थोडा ऊहापोह अवश्य करना चाहेंगे। वे सवाल ऐसे हैं –

कल्पलघुभाष्यकार कौन ?

१. कल्प-लघुभाष्य के प्रणेता कौन हैं - संघदासगणि क्षमाश्रमण या सिद्धसेनगणि ?।

२. संघदास वाचक और संघदास क्षमाश्रमण - दो भिन्न भिन्न हैं या दोनों एक ही है ?।

३. भाष्यकार संघदासगणि, श्रीजिनभद्रगणि क्षमाश्रमण के पूर्ववर्ती या परवर्ती है ?।

४. कल्प एवं व्यवहार - इन दोनों के भाष्यों के प्रणेता एक है या पृथक् पृथक् ?।

यहाँ और भी प्रश्न हो सकते हैं, और प्रायः ये सभी प्रश्न एक-दूसरे के साथ जुडे हुए हैं, इसलिए एक के बाद एक की, क्रमशः, चर्चा करना जरा मुश्किल है। हम इन सवालों पर एकसाथ ही सोचेंगे।

आगमप्रभाकर श्रुतशीलवारिधि मुनिराज श्रीपुण्यविजयजी के अनुसार 'संघदास' नाम के आचार्य दो हुए हैं[१]। एक वसुदेवहिण्डी प्रथम-खण्ड के कर्ता 'वाचक' संघदास, और दो कल्पभाष्य के कर्ता संघदास 'क्षमाश्रमण'। चूंकि दोनों के साथ जुडी पदवी भिन्न भिन्न है[२], अतः दोनों अलग व्यक्ति हैं।

वाचक संघदासगणि, जिनभद्रगणि से पूर्ववर्ती हैं, निश्चित रूप से[३]। मगर क्षमाश्रमण संघदासगणि कब हुए यह एक उलझन ही रही है[४]। पुण्यविजयजी ने पहले ऐसा कहा कि भाष्यकार संघदासगणि महाभाष्यकार से पूर्ववर्ती हैं यह बात सन्दिग्ध है, और बाद में उन्होंने ही कह दिया कि वे पांचवीं शती में हुए हैं, महाभाष्यकार से पूर्ववर्ती, मगर वाचक संघदास से परवर्ती हैं[५]।

उनके अनुसार, कल्प, व्यवहार एवं निशीथ - तीनों छेदग्रन्थों के भाष्यों के कर्ता संघदासगणि ही होने चाहिए। कल्प एवं निशीथ - दोनों के भाष्यों में

देखे जाते गाथाओं के अतिसाम्य के कारण दोनों के कर्ता एक हो यह असंभव नहीं[६]। यद्यपि कल्पभाष्य की गाथा ३२८९ में आते 'सिद्धसेणो' पद को देखकर उन्होनें कल्पभाष्य के कर्ता 'सिद्धसेन' हो ऐसी कल्पना की है, परन्तु वहाँ भी 'सिद्धसेन', 'संघदास' का दूसरा नाम हो ऐसी कल्पना भी लिख दी है[७]।

एक और बात यह है कि वे व्यवहारभाष्य के कर्ता को महाभाष्यकार के पूर्ववर्ती मानते हैं, और वे 'अज्ञात' होने का भी कहते हैं[८]। लेकिन बाद में वे तीनों भाष्य के कर्ता एक ही है ऐसा जब तर्क करते हैं तब व्यवहारभाष्य के कर्ता अज्ञात भी नहि रह पाते, और कल्पभाष्य के कर्ता का पूर्ववर्तित्व भी स्वयं सिद्ध होता है।

समग्रता से उनके उक्त विचारों का आकलन करें तो उनके प्रतिपादन में दो विभाग स्पष्ट प्रतीत होंगे। पहले विभाग में कल्पभाष्य का महाभाष्य से पूर्ववर्तित्व सन्दिग्ध है और व्यवहारभाष्य के कर्ता अज्ञात हैं। दूसरे विभाग में कल्पभाष्य का पूर्ववर्तित्व स्पष्ट हो गया है और कल्प एवं व्यवहार - दोनों के भाष्यों के कर्ता एक होने का भी स्वीकार हो चुका है। उनके इन दोनों विचारों के बीच काफी समय का फासला है ही[९]।

इनके ये सब विचार 'ज्ञानांजलि'-संज्ञक उन्हीं के अभिवादन-ग्रन्थ में उपलब्ध हैं, वहाँ उनके दो विस्तृत आलेख अनेक दृष्टि से पठितव्य हैं, और उनकी बहुश्रुत प्रज्ञा के परिचायक भी।

श्रीमोहनलाल महेता अपने ग्रन्थ 'जैन साहित्य का बृहद् इतिहास - भाग - ३' में इस विषय पर कुछ उपयुक्त ऊहापोह करते हैं वह इस प्रकार है –

'वादी, क्षमाश्रमण, दिवाकर, वाचक' ये सब शब्द एकार्थक हैं, एक ही पदवी के लिए प्रयुक्त होते हैं, अतः कहीं पर 'वाचक' शब्द हो और कहीं पर 'क्षमाश्रमण' शब्द प्रयुक्त हो, तो उससे उन व्यक्तिओं में भिन्नता की कल्पना अनावश्यक है[१०]। एक ही व्यक्ति के साथ पदवीसूचक विविध शब्द जुड सकते हैं। जैसे कि महाभाष्यकार को हम 'जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण' के नाम से जानते हैं, मगर 'अकोटा' से प्राप्त धातुप्रतिमा के उपर, जिनभद्रगणि का नामोल्लेख देखने मिलता है वहाँ 'क्षमाश्रमण' नहि, अपितु 'वाचनाचार्य' शब्द लिखा देखा जाता है[११]। अब वे हैं तो वे ही जिनभद्रगणि - महाभाष्यकार। अतः पदवाचक शब्द के भेद से 'संघदास' नामक आचार्य दो हैं ऐसा मानना उचित नहि होगा।

यहाँ ऐसा एक अन्य उदाहरण भी जोड सकते हैं : तत्त्वार्थ-कारिका की प्रशस्ति देखें तो वाचक उमास्वाति की वहाँ वंशावली है, और वे तो 'वाचकवंश' के हैं, उनके साथ, उनकी परम्परा के सभी के साथ 'वाचक' शब्द ही जुडेगा, जुड सकता है। मगर उक्त प्रशस्ति में 'घोषनन्दी' के साथ 'क्षमण' पद भी जोड दिया है[१२]। अगर ये दोनों पद समानार्थक न होते तो वहाँ ऐसा क्यों करते ? (क्षमण का तात्पर्य क्षमाश्रमण से होगा, यह स्वयंस्पष्ट है।) सारांश यह कि 'संघदासगणि' के साथ दो अलग पदवाचक शब्द जुडने से व्यक्ति भिन्न नहि होता।

लेकिन श्रीमेहता ने संघदासगणि के पूर्ववर्तित्व की समस्या को सुलझाने की कोई कोशीश नहीं की है, और उलझन को उलझन ही रहने दी है। बहुधा भाष्यविषयक बातों में श्रीमेहता ने श्रीपुण्यविजयजी के तर्कों एवं विधानों का ही अनुवाद किया है। फर्क इतना है कि तीनों भाष्यों के एककर्तृक होने की बात उन्होंने नहि कही है[१३]।

पं. दलसुख मालवणिया ने अपनी निशीथ-चूर्णि की प्रस्तावना में इस विषय पर विस्तार से चर्चा की है, व कुछ स्वतन्त्र निष्कर्ष भी दिये हैं। उनके कथनानुसार –

१. कल्प और व्यवहार - दोनों के भाष्य के कर्ता एक हैं। इसका स्पष्ट प्रमाण 'कप्प-व्ववहाराणं वक्खाणविहिं पवक्खामि' (कल्पभाष्य - १) और 'कप्प-व्ववहाराणं भासं' (व्यवहारभाष्य - १०/१४१) इन पाठों से मिलता है[१४]।

२. निशीथभाष्य की अधिकांश गाथाएँ कल्पभाष्य व व्यवहारभाष्य से ली गई हैं। बहुत अल्प अंश नई गाथाओं का है। अतः उन दोनों के जो कर्ता हो वही निशीथभाष्य के भी कर्ता हो, ऐसी संभावना उनके कथन से फलित होती है[१५]।

३. पहले कल्प-व्यवहार के भाष्य की रचना हुई है, पश्चात् निशीथभाष्य की[१६]।

४. कल्पभाष्य - गा. ३२८९ में आते 'सिद्धसेणो' पद का श्लेष पकडकर श्रीपुण्यविजयजी ने कल्पभाष्य के कर्ता 'सिद्धसेन' होने का और 'सिद्धसेन' 'संघदास' का नामान्तर होने की संभावना का जो निर्देश दिया है, उसका मालवणिया इन्कार करते हैं[१७]। चूंकि नामनिर्देश का ऐसा प्रकार यदि ग्रन्थ

के प्रारंभ में या अन्त में होता तो कदाचित् ऐसी कल्पना को बल मिल सकता। मगर वैसा तो है नहि। दूसरा, आचार्य क्षेमकीर्ति ने स्पष्ट रूप से संघदासगणि का नामोल्लेख भाष्यकार के रूप में कर दिया है, "श्रीसंघदास-गणिपूज्यैः... भाष्यं विरचयांचक्रे" इन शब्दों से[१८]। और इस संभावना को दिखाने के अलावा स्वयं पुण्यविजयजी ने भी तीनों भाष्यों के कर्ता संघदासगणि होने की मान्यता कल्पभाष्य-प्रस्तावना में प्रकट की ही है[१९]।

५. निशीथचूर्णि में अनेक बार 'सिद्धसेनाचार्य' का नाम भाष्यकार या निर्युक्ति के व्याख्याकार के रूप में आता है इसलिए निशीथभाष्य के कर्ता तो वे ही हैं, परन्तु निशीथभाष्य की संकलना उन्होंने कल्प एवं व्यवहार के भाष्यों की गाथाओं को लेकर की है इसलिए उन दोनों के कर्ता भी वे ही हो सकते हैं। अर्थात् तीनों भाष्य के प्रणेता, मालवणिया के मत अनुसार, सिद्धसेनाचार्य हैं[२०]।

६. क्षेमकीर्तिसूरि ने 'सिद्धसेन' न लिखकर 'संघदास' नाम क्यों लिखा ? इस प्रश्न को उन्होंने अनुत्तर रखा है, और भविष्य में उसका समाधान पाने की आशा व्यक्त की है[२१]।

७. आगे वे पौर्वापर्य का विमर्श करते हैं। श्रीपुण्यविजयजी ने जिनभद्रगणि को परवर्ती व व्यवहार-भाष्यकार को पूर्ववर्ती माने हैं। क्योंकि जिनभद्रगणि-कृत 'विशेष-णवति' में (गा. ३४) 'व्यवहार' का उल्लेख हुआ है। यह उल्लेख व्यवहारभाष्य - गाथा - १९२/६ की ओर संकेत देता है। इससे सिद्ध होता है कि व्यवहारभाष्य एवं व्यवहारभाष्यकार जिनभद्रगणि के पुरोगामी हैं।

इस मन्तव्य से विपरीत, मालवणिया का मन्तव्य ऐसा है कि कल्पभाष्य एवं निशीथभाष्य में विशेषावश्यकभाष्य की गाथाएँ उद्धृत हैं, अतः विशेषावश्यकभाष्य ही पूर्ववर्ती है ऐसा मानना होगा। फिर, निशीथभाष्य आदि के कर्ता सिद्धसेनगणि को चाहे जिनभद्रगणि के शिष्य मानो या उनके समकालीन आचार्य, दोनो स्थिति में वे पूर्ववर्ती तो नहीं ही होंगे[२२]।

८. फिर भी, इस विमर्श के अन्त में वे कह देते हैं कि यह कोई अन्तिम निष्कर्ष नहीं, अपितु संभावना-मात्र है। साथ ही वे एक नया प्रश्न उठाते हैं

कि निशीथभाष्य, व्यवहारभाष्य एवं जीतकल्पभाष्य - तीनों में अमुक गाथाएँ समान दिखाई देती हैं, तो इनमें से पूर्ववर्ती कौन ? और किसने किस ग्रन्थ से ये गाथाएँ ली होगी ?[२३] ।

अब इन मुद्दों पर हम कुछ विमर्श करेंगे --

श्रीपुण्यविजयजी के समग्र मन्तव्यों का आकलन किया जाय तो उनके तीन मन्तव्य ध्यान में आते हैं : १. कल्पभाष्य के प्रणेता संघदासगणि क्षमाश्रमण हैं । २. व्यवहारभाष्य के प्रणेता ज्ञात नहि है । ३. कल्प, व्यवहार एवं निशीथ - तीनों पर भाष्य के प्रणेता एक ही हो यह अधिक संभवित है ।

इन मुद्दों पर सोचें तो उनका पहला मन्तव्य बिलकुल योग्य है, तथ्यपूर्ण है । संघदासगणि ही कल्पभाष्य के प्रणेता हैं, यह निर्विवाद सत्य है ।

व्यवहारभाष्य की बात सोचें तो हमारे विनम्र मत अनुसार प्रायः, श्रीपुण्यविजयजी महाराज, व्यवहारसूत्र के भाष्य, चूर्णि, वृत्ति आदि का इस दृष्टि से अवगाहन नहि कर पाये हैं । अगर उन्होंने वह किया होता तो उनका मन्तव्य ऐसा न होता । प्रायः उनके इस विषय को लेकर लिखे गये लेखों में भी व्यवहारभाष्यादि के सन्दर्भों का उद्धरण या हवाला बहुत अल्प देखने मिलता है ।

दूसरी बात, कल्पभाष्य की प्रथम गाथा का यह अंश 'कप्प-व्ववहाराणं वक्खाणविहिं पवक्खामि' उनके लक्ष्य में क्यों नहि आया, यह भी एक समस्या है । इस पाठ का तात्पर्य स्वयं स्पष्ट है कि 'मैं (भाष्यकार) कल्प और व्यवहार - इन दोनों सूत्रों के व्याख्यान (विवरण) की विधि कहूंगा' । मतलब कि दोनों भाष्य एक ही कर्ता का प्रणयन है । तथा, व्यवहारभाष्य की यह अन्तिम उपसंहार भाग की गाथा -

कप्प-व्ववहाराणं, भासं मोत्तूण वित्थरं सव्वं ।
पुव्वायरिएहिं कयं, सीसाण हितोवदेसत्थं ॥ ४६९३ ॥

अर्थात्, पूर्वाचार्यों के किये हुए सर्व विस्तार को छोडकर, शिष्यों को हितोपदेश देने के वास्ते, कल्प एवं व्यवहार का (यह) भाष्य बनाया है । यह बात भी यदि उनके ध्यान में आई होती तो दोनों के एककर्तृत्व के बारे में वे सन्देहग्रस्त न रहते ।

तीसरी बात : कल्प-व्यवहार-भाष्य दो अलग अलग भाष्यग्रन्थ नहि, अपितु एक अखंड भाष्यग्रन्थ है । भाष्यकार ने प्रायः सर्वत्र 'कल्प-व्यवहार' का संयुक्त निर्देश ही किया है । कल्पभाष्य की समाप्ति के बाद, व्यवहारभाष्य के प्रारम्भ के अवसर पर उन्होंने मंगलाचरण आदि का कोई शिष्टाचार नहि किया है । वास्तव में कल्पभाष्य के आरम्भ में आया 'काऊण नमोक्कारं' पद ही पूरे भाष्य का अर्थात् इन दोनों भाष्यों का मंगलाचरण है ऐसा मानना चाहिए । अन्यथा, साढे चार सहस्र गाथाओं वाले व्यवहारभाष्य के प्रारम्भ में, इतने बडे शास्त्रकार, मंगलाचरण न करे यह बात बैठती नहीं है । एक और बात : व्यवहारभाष्य में अनेक स्थानों पर भाष्यकार ने गाथाओं में ही कल्पभाष्य का हवाला दिया है कि इस विषय में हमने पहले बता दिया है, अथवा यह विषय कल्पाध्ययन में निरूपित है । उदाहरणार्थ, व्यवहारभाष्य में –

वायपरायण कुवितो, चेइय, तद्दव्व, संजतीगहणे ।
पुव्वुत्ताण चउण्ह वि, कज्जाण हविज्ज अन्नयरं ॥
१२०९/१२२६ ॥[२४]

यह गाथा है । इसमें 'पुव्वुत्ताण' पद है, उसका अर्थ वृत्तिकार ने 'पूर्वोक्तानां कल्पाध्ययनोक्तानां' ऐसा स्पष्ट किया है । अर्थात्, यदि राजा उक्त ४ कारणों से कुपित हो तो, पूर्वोक्त - कल्पभाष्य में बताये गये ४ में से कोई भी कार्य हो सकता है ।

अब देखें कल्पभाष्य । वहाँ यही गाथा ५०४२ के क्रम से है[२५] । उसकी वृत्ति में 'पूर्वोक्तानां- इहैव प्रथमोद्देशके प्रतिपादितानां' यानी 'कल्पभाष्य में ही प्रथम उद्देश में प्रतिपादित ४ कार्य हो सकते हैं' ऐसा कथन है । वे चार कार्य कौन से ? तो वृत्तिकार लिखते हैं "निर्विषयत्वाज्ञापन-भक्तपाननिषेध-उपकरणहरण-जीवित-चारित्रभेदलक्षणानां चतुर्णां कार्याणामन्यतमत् कार्यम्' । यानी कुपित राजा के पास जाए तो इन चार में से कोई कार्य होना सम्भव है ।

अब प्रथम उद्देश में यह बात कहाँ है ? वह भी देखें – पीठिकाखण्ड (वह भी प्रथम उद्देश में ही जो है) में गाथा - ३८९ में –

तं पुण चेइयणासे तद्दवविणासणे दुविहभेदे ।
भत्तोवहिवोच्छेदे, अभिवायण बंध घायादी ॥ ३८९ ॥[२६]

इसमें वह बात है। तो स्पष्ट है कि व्यवहारभाष्यकार स्वयं कल्पभाष्यकार हो तो ही 'पुव्वुत्ताण' प्रयोग कर सकते हैं।

ऐसे और भी कई स्थान हैं। जैसे –

१) 'पुव्वभणिया य जयणा' (गा. २२६०)। (पूर्वमोघनिर्युक्तौ कल्पाध्ययने वा)[२७]।

२) 'परिहरिया पुव्ववण्णिया दोसा' (गा. २३८०)। (पूर्ववर्णिताः कल्पाध्ययने षष्ठोद्देशे)[२८]।

३) 'पुव्वुत्ताए करेंति जयणाए' (गा. २४८९)। (पूर्वोक्तया यतनया, या पूर्वं कल्पाध्ययने ग्लाने सूत्रे)[२९]।

४) 'पुव्वुत्ता सत्त भंगा उ' (गा. २५०३)। (पूर्वोक्ताः कल्पाध्ययनोक्ताः)[३०]।

५) 'मूलादी पुव्वुत्ता' (गा. २७८६)। (मूलादिका पूर्वं कल्पाध्ययने उक्ता)[३१]।

६) 'जं सासु तिहा०' (गा. २७९०)। (संगीतं व्याख्यातं, यथा कल्पाध्ययने तथाऽत्रापि व्याख्येयम्)[३२]।

७) *'तं चेव पुव्वभणियं' (गा. ३२३४)। (यत् पूर्वं कल्पाध्ययने चतुर्थे उद्देशके विष्वग्भवनविधानं भणितं तदेवाऽत्राऽपि द्रष्टव्यम्)*[३३]।

८) 'जे उ दोसा उदाहिया' (गा. ३२९३)। (ये दोषाः पूर्वं कल्पाध्ययने... अभिहिताः)[३४]।

९) 'अद्धाण पुव्वभणियं' (गा. ३३३०)। (अध्वनि यद् वक्तव्यं तत् सर्वं पूर्वं कल्पाध्ययने भणितम्)[३५]।

१०) 'जयणा तू जा जहिं भणिया' (गा. ३३६१)। (या... पूर्वं कल्पाध्ययने भणिता)[३६]।

११) 'छत्तं दंडस्स कारणं वुत्तं' (गा. ३४५८)। (दण्डादीनां ग्रहणे कारणं पूर्वं निशीथे कल्पे च भणितम्)[३७]।

१२) 'आरोवण वण्णिया तत्थ' (गा. ३९९२)। (तदपि च प्राक् कल्पाध्ययनेऽभिहितमिति न भूयो भण्यते)[३८]।

१३) 'जो कप्पे वण्णितो उ सत्तविहो' (गा. ४२११)[३९]।

१४) 'पढम-बिइएसु कप्पे' (गा. ४२९४) । (कल्पे - कल्पाध्ययने द्वितीय-तृतीययोरुद्देशयोः)[४०] ।

ये सभी उल्लेख या निर्देश इतना ही सूचित करते हैं कि व्यवहारभाष्यकार, अपनी ही पूर्वरचना स्वरूप कल्पभाष्य का हवाला, इन इन गाथागत विषयों के बारे में, देते हैं । जाहिर है कि स्वयं एक ही भाष्यकार दोनों का प्रणेता न होते तो, ऐसा एवं ऐसे हवाला देना अशक्य था ।

हम हैरान हैं कि ये सब उल्लेख पूज्य श्रीपुण्यविजयजी की दृष्टि में क्यों नहि आये ?, अगर उन्होंने व्यवहारभाष्य का अवगाहन इस दृष्टि से किया होता तो वे भी इसी निष्कर्ष पर आते, इसमें शंका को अवकाश नहीं । अस्तु ।

एक और बात : विक्रम की १६ वीं शती में हुए वाचक संघमाणिक्यगणि नामक विद्वान् मुनि ने 'आगम-वाचनानुक्रम' नामक एक रचना की है । उसमें प्रत्येक आगम के आदि, अन्त इत्यादि की नोंध उन्होंने की है । इस नोंध में कल्प और व्यवहार के बारे में उन्होंने लिखा है कि -

१. 'नो कप्पइ आमे तालपलंबे पडिगाहित्तए' । इति श्रीकल्प-व्यवहार-सूत्र-वाचना । ग्रन्थाग्रं ४७० ॥
२. काऊण नमुक्कारं० (गाथा पूरी है) । इति श्रीकल्प-व्यवहार-लघुभाष्य ॥
३. मंगलादीणि सत्थाणि... समत्था भवंति । इति श्रीकल्प-व्यवहार-चूर्णिः । ग्रं. १४००० । श्रीकल्प-व्यवहार-बृहच्चूर्णि नमः । ग्रं. १२००० ॥

उपर के सभी उल्लेखों में उन्होनें 'कल्प-व्यवहार' दोनों को अखण्ड या संयुक्त एक ग्रन्थ दिखाये हैं । सूत्र-ऐक्य, भाष्य-ऐक्य और चूर्णि का भी ऐक्य । अर्थात् दोनों सूत्रों के कर्ता के ज्यों दोनों के भाष्य के कर्ता भी एक, एवं दोनों की चूर्णि के कर्ता भी एक ।

चूर्णि से बृहच्चूर्णि के ग्रन्थाग्र कम इसलिये होंगे कि बृहच्चूर्णि यानी विशेषचूर्णि में पीठिकांश की व्याख्या नहि की गई है । अतः उतना अंश कम होगा, ऐसा लगता है ।

हमारे दृष्टिकोण से, उपर्युक्त रीत्या, जब कल्प-व्यवहार - दोनों के भाष्यों की एककर्तृकता सिद्ध होती है तब, सवाल यह आएगा कि कर्ता का नाम

क्या होगा - संघदासगणि क्षमाश्रमण या सिद्धसेनगणि क्षमाश्रमण ? ।

हमारा नम्र एवं स्पष्ट मन्तव्य है कि कल्प एवं व्यवहार के भाष्यकार संघदासगणि क्षमाश्रमण ही हैं। आचार्य क्षेमकीर्ति भगवन्त ने, टीका के अनुसन्धान का जहाँ प्रारम्भ किया है, वहाँ स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि –

१. कल्पेऽनल्पमनर्घं, प्रतिपदमर्पयति योऽर्थनिकुरुम्बम् ।
श्रीसङ्घदासगणये, चिन्तामणये नमस्तस्मै ॥ ३ ॥

२. ...अस्य च स्वल्पग्रन्थमहार्थतया... दुरवबोधतया च सकलत्रिलोकीसुभगङ्करण-क्षमाश्रमण-नामधेया-भिधेयैः श्रीसङ्घदासगणिपूज्यैः... दूषणकरणेनाऽप्यदूष्यं भाष्यं विरचयाञ्चक्रे[४१] ।

यहाँ उनका स्पष्ट विधान है कि भाष्य सङ्घदासगणि-कृत है। यदि उनके समक्ष सन्देह उपस्थित होता कि 'संघदास या सिद्धसेन ?' तो शायद वे ऐसा स्पष्ट विधान नहि करते । उनके पास 'यह संघदास-गणि की रचना है' ऐसी स्पष्ट जानकारी न होती तो भी वे ऐसा नामनिर्देश करने से रुक गये होते । जैसे कि चूर्णिकार के बारे में जानकारी नहि थी, तो उन्होंने चूर्णिकार का नाम नहि लिखा है[४२] ।

क्षेमकीर्ति-कृत उक्त नामनिर्देश के पश्चात् सदियाँ बीत गई, आज तक किसी ने इस विधान के विषय में प्रश्न नहि उठाया है, सन्देह भी नहि किया है, बल्कि इस विधान का निःसंशय स्वीकार करके ही सब चले हैं । 'सिद्धसेणो' वाली (३२८९) भाष्यगाथा भी श्रीक्षेमकीर्तिसूरि के सामने थी, और उन्होंने उसका विवरण भी किया ही है । परन्तु उनके मन में यह 'नामपरक श्लिष्ट निर्देश हो सकता है' ऐसा गन्ध भी हो ऐसा मालूम नहि पडता है । क्योंकि इस प्रकार से श्लेष आदि के द्वारा विचित्र भंगी से नामोल्लेख करने की प्रथा तो बहुत पुरानी व व्यापक थी[४३] । तो इस गाथा में यदि इस प्रकार से नामांकन होता तो वह वृत्तिकार से व अन्यों से अछूता या अज्ञात नहि रह सकता था । इसलिए भाष्यकार संघदासगणि क्षमाश्रमण ही हैं ऐसा मानना चाहिए ।

श्रीदलसुखभाई मालवणिया का अभिमत सिद्धसेनगणि को भाष्यकार मानने का है यह हम आगे देख चुके हैं । उनके कथन में प्रमाणों की अपेक्षा

कल्पनाविहार अधिक लगता है। संक्षेप से उनके कथन का सार ऐसा है कि -

१. जीतकल्पभाष्य की चूर्णि के कर्ता सिद्धसेनगणि हैं। २. निशीथभाष्य के संकलयिता भी वही सिद्धसेन क्षमाश्रमण हैं[४४]। ३. चूंकि निशीथभाष्य में कल्प एवं व्यवहार के भाष्यों की अनेक गाथाएँ ली गई हैं व व्याख्यायित भी हैं अतः इन तीनों के प्रणेता सिद्धसेन ही हो सकते हैं[४५]। ४. यह सिद्धसेनगणि, जिनभद्रगणि के शिष्य अथवा समकालीन हैं, अतः इन तीनों भाष्य महाभाष्य के परवर्ती हो ऐसा माना जा सकता है[४६]।

इन विधानों के समर्थन में यदि उन्होंने कोई ठोस प्रमाण दिये होते, तो उनकी इन कल्पनाओं को वजूद मिलता। लेकिन दुर्भाग्य से ऐसा नहीं है। उनके पास एक प्रमाण यह है कि निशीथ एवं कल्प के भाष्यों में विशेषावश्यकभाष्य की गाथाएँ उद्धृत हुई हैं, अतः भाष्यकार परवर्ती हैं। और परवर्ती होने से वे सिद्धसेन ही हैं, क्यों कि संघदासगणि तो बहुत पूर्ववर्ती थे, और सिद्धसेन का नाम निशीथभाष्यकार के रूप में स्पष्ट है।

पं. मालवणिया ने महाभाष्य की जिन गाथाओं को कल्पभाष्य में उद्धृत होने का बताया है, वहाँ दरअसल में कल्पभाष्य से वे गाथाएँ महाभाष्यकार ने उद्धृत की हैं। देखें –

कल्पभाष्य में गा. ९६४ 'पण्णवणिज्जा भावा०' है व गा. ९६५ 'जं चउदसपुव्वधरा०' हैं[४७]। इन दोनों को विशेषावश्यकभाष्यकार इस तरह उद्धृत करते हैं[४८] -

"विनेयः पृच्छति –

कत्तो एत्तियमेत्ता, भावसुय-मईण पज्जया जेसिं।
भासइ अणंत भागं ?, भण्णइ, जम्हा सुएऽभिहियं ॥ १४० ॥

'यस्मात् सूत्रे - आगमे वक्ष्यमाणमभिहितम्... किं तत् सूत्रेऽभिहितम् ? इत्याह –

पण्णवणिज्जा भावा अणंतभागो उ अणभिलप्पाणं।
पण्णवणिज्जाणं पुण अणंतभागो सुयनिबद्धो ॥ १४१ ॥

जं चोद्दसपुव्वधरा, छट्ठाणगया परोप्परं होंति ।
तेण उ अणंतभागो, पण्णवणिज्जाण, जं सुत्तं ॥ १४२ ॥''

इस सन्दर्भ में गा. १४० में 'जम्हा सुएऽभिहियं' यह अंश स्पष्ट निर्देश देता है कि महाभाष्यकार सूत्र का हवाला दे रहे हैं । वह सूत्र 'कल्पभाष्य' है यह कहने की आवश्यकता नहीं । अर्थात् महाभाष्य में आती गा. १४१-४२ कल्पभाष्य से उद्धृत हैं, नहीं कि महाभाष्य से कल्पभाष्य में उद्धृत ।

श्रीमालवणिया ने इस विषय में भी कहा है कि 'जम्हा सुएऽभिहियं' का तात्पर्य 'श्रुत' यानी 'सूत्र' से है, भाष्य से नहि [४९] ।

यहाँ यदि उन्होंने 'पण्णवणिज्जा भावा' इस गाथागत अर्थ का प्रतिपादक कोई आगम-सूत्र-पाठ निर्दिष्ट किया होता, तो उनकी इस कल्पना का स्वीकार होता । लेकिन उन्होंने ऐसा कोई सूत्र नहि बताया है ! । वस्तुतः यहाँ एक बात की कमी महसूस होती है, वह है परम्परा की अभिज्ञता । जहाँ तक हम, कोई भी संशोधक एवं समीक्षक, परम्परा से अभिज्ञ नहि होते हैं और परम्पराप्राप्त सभी बातों को गलत मानकर ही चलते हैं वहाँ तक हमें यथार्थ तथ्य प्राप्त नहि होता है, और अगर प्राप्त हो तो वह पूर्वग्रहभावित ही होता है ।

यद्यपि परम्परा पञ्चाङ्गी को 'सूत्र' रूप में प्रामाण्य देती है । अर्थात् 'सूत्र' शब्द, आवश्यकता के अनुसार, सूत्र, निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि, वृत्ति - इन सब में लागू होता है । लेकिन यहाँ तो 'सूत्र' नहीं, अपितु 'श्रुत' शब्द प्रयुक्त है, और भाष्य भी श्रुत ही है, वहाँ जो कहा है वह ऐसा है - ऐसा महाभाष्यकार का कथन है । सार यह कि महाभाष्य में ये दो गाथाएँ कल्पभाष्य से ली गई हैं, और इससे कल्पभाष्य एवं भाष्यकार जिनभद्रगणि के पूर्ववर्ती हैं यह स्वयं सिद्ध हो जाता है ।

एक और बात : कल्पभाष्य - गा. ९६५ की वृत्ति में महाभाष्य की गा. १४३ 'अक्खरलंभेण समा०' उद्धृत की गई है [५०] । यदि गा. १४१-४२ भी इस प्रकार कहीं से उद्धृत होनेवाली गाथाएँ होती तो एक तो उन दोनों को भाष्यगाथा का क्रम नहि मिलता, अथवा वृत्तिकार स्पष्टीकरण अवश्य देते ।

तो, जैसे कि पं. मालवणिया कहते हैं वैसे, कल्पभाष्यकार जिनभद्रगणि के परवर्ती या समकालीन सिद्ध नहि होते हैं, अतः यदि कल्पभाष्य के प्रणेता

जीतचूर्णिवाले सिद्धसेन नहि होंगे तो, चूर्णिकार सिद्धसेन को और निशीथभाष्यकार सिद्धसेन को एक मानने की, एवं उस आधार पर तीनों भाष्यों के कर्ता के रूप में सिद्धसेनगणि को ही स्वीकारने की कल्पना कितनी अतार्किक एवं क्लिष्ट बन जाती है ? । कदाचित् निशीथभाष्य के कर्ता या संकलयिता सिद्धसेनगणि, जीतचूर्णिकार सिद्धसेन ही हो, तो भी कल्प-व्यवहार-भाष्य का कर्तृत्व उनके साथ जोडना उचित नहि होगा । क्योंकि उन दो भाष्यों के कर्ता जिनभद्रगणि से बहुत पूर्वभावी हैं ऐसा प्रतीत होता है ।

एक बात यह भी है कि यदि सिद्धसेनगणि ही सब के प्रणेता हैं ऐसा मान लें, तो फिर यह भी स्वीकारना होगा कि संघदास क्षमाश्रमण नाम के व्यक्ति काल्पनिक हैं, या उन्होंने किसी ग्रन्थ की रचना नहि की है । क्योंकि उनकी मानी जाती रचना तो, इनके मत से, अन्यकर्तृक हो जाएगी । तब उनको सदियों से भाष्यकार के रूप में जो प्रसिद्धि मिली है वह गलत ही हो जाएगी ! ।

कल्पभाष्य से महाभाष्य परवर्ती है इसका एक अन्य भी प्रमाण है । विशेषावश्यकभाष्य में गा. ४६९ में ''लिंगमणुमाणमण्णे सारिक्खाई पभासंति''[५१] ऐसा पाठ है, उसमें उन्होंने 'अण्णे' कहते हुए अन्य मत प्रस्तुत किया है । आगे की गाथाओं में इस अन्य मत की बात एवं उसका खण्डन किया गया है ।

ये 'अण्णे' - अन्य मत कौन है ?, कहाँ का है ? शायद आज तक इसकी ओर किसी का ध्यान नहि गया है । स्वयं मलधारीजी महाराज ने भी अपनी वृत्ति में 'अन्ये, कैश्चित्' कहकर छोड दी है इस बात को, वे कौन हैं और यह बात कौन से शास्त्र में है ? इसकी स्पष्टता उन्होंने भी नहीं दी ।

यह मत कल्पभाष्य का मत है, और वे 'अन्ये' कल्पभाष्यकार हैं । कल्पभाष्य में ही सर्वप्रथम बार द्विविध उपलब्धि एवं त्रिविध अनुपलब्धि की बात व उनका विवरण आता है । कल्पभाष्य - गा. ४५ से गा. ५४ में इस विषय का निरूपण है, और इसी का खण्डन 'अण्णे' कहते हुए महाभाष्यकार ने किया है । अब अगर कल्पभाष्यकार पूर्ववर्ती न होते तो उनकी बात का निर्देश व निरसन महाभाष्यकार श्रीजिनभद्रगणि कैसे करते ? ।

अब रही बात 'सिद्धसेन' की, या उस नाम की । तो भाष्य की गाथा ३२८९ में आते 'सिद्धसेणो' पद से 'भाष्यकार सिद्धसेन हो और दोनों नाम एक

व्यक्ति के ही हो' ऐसी जो कल्पना पुण्यविजयजी ने की है, उसका प्रतिविधान[५२] मालवणियाजी ने कर ही दिया है, अतः कुछ कहने की जरूर नहीं । और पं. मालवणिया की कल्पनाओं का उत्तर यहाँ उपर दिया गया है, अतः कल्प व व्यवहार के भाष्यों के कर्ता सिद्धसेन नहि, अपितु संघदासगणि ही हैं और वे महाभाष्यकार के पूर्ववर्ती हैं यह उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध हो जाता है ।

अब सवाल यह आता है कि संघदासगणि नामक आचार्य कितने हुए - एक या दो ? और दोनों का समय और पौर्वापर्य क्या हो सकता है ? ।

मुनि श्रीपुण्यविजयजी ने लिखा है कि "प्रस्तुत कल्पभाष्यना प्रणेता श्रीसंघदासगणि क्षमाश्रमण छे. संघदासगणि नामना बे आचार्यो थया छे. एक वसुदेवहिंडि - प्रथम खण्डना प्रणेता अने बीजा प्रस्तुत कल्पलघुभाष्य अने पंचकल्पभाष्यना प्रणेता. आ बन्नेय आचार्यो एक नथी पण जुदा जुदा छे, कारण के वसुदेवहिंडि - मध्यम खण्डना कर्ता आचार्य श्रीधर्मसेनगणि महत्तरना कथनानुसार, वसुदेवहिंडि - प्रथम खण्डना प्रणेता श्रीसंघदासगणि 'वाचक' पदालंकृत हता, ज्यारे कल्पभाष्यना प्रणेता संघदासगणि 'क्षमाश्रमण' पदविभूषित छे. उपरोक्त बन्नेय संघदासगणिने लगती खास विशेष हकीकत स्वतंत्र रीते क्यांय जोवामां आवती नथी. एटले तेमना अंगेनो परिचय आपवानी वातने आपणे गौण करीए तो पण बन्नेय जुदा छे के नहि तेम ज भाष्यकार अथवा महाभाष्यकार तरीके ओळखाता भगवान् जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण करतां पूर्ववर्ती छे के तेमनी पछी थयेला छे ए प्रश्नो तो सहज रीते उत्पन्न थाय छे. भगवान् श्रीजिनभद्रगणिए तेमना विशेषणवती ग्रन्थमां वसुदेवहिंडि ग्रन्थना नामनो उल्लेख अनेकवार कर्यो छे. एटलुं ज नहि, किन्तु वसुदेवहिंडि - प्रथम खण्डमां आवता ऋषभदेवचरित्रनी संग्रहणी-गाथाओ बनावीने पण तेमां दाखल करी छे. एटले वसुदेवहिंडि - प्रथम खण्डना प्रणेता श्रीसंघदासगणि वाचक तो निर्विवाद रीते तेमना पूर्वभावी आचार्य छे. परंतु कल्पभाष्यकार श्रीसंघदासगणि क्षमाश्रमण तेमना पूर्वभावी छे के नहि ए कोयडो तो अणउकल्यो ज रही जाय छे."[५३]

इस लेख में मुनिजी का तात्पर्य ऐसा है कि १) संघदासगणि दो हुए । २) वसुदेवहिंडिवाले संघदासगणि जिनभद्रगणि के पूर्वभावी हैं । ३) भाष्य के प्रणेता संघदासगणि कब हुए यह अनिश्चित है ।

किन्तु इनका यह लेख ई. १९४२ का है। बाद में सन् १९६४ में उनके विचारों में जो परिवर्तन आया, वह इस प्रकार है : 'संघदासगणि क्षमाश्रमण (वि. ५ वीं शताब्दी) - ये आचार्य वसुदेवहिंडि - प्रथम खण्ड के प्रणेता संघदासगणि वाचक से भिन्न हैं एवं इनके बाद के भी हैं। वे महाभाष्यकार जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण के पूर्ववर्ती हैं'[५४]।

अर्थात् १) यहाँ उन्होंने भाष्यकार का निश्चित समय दिखाया है, और २) वे महाभाष्यकार के पूर्ववर्ती हैं ऐसा भी स्पष्ट किया है। यद्यपि इन मुद्दों के लिए प्रमाण क्या ? यह वे स्पष्ट नहि करते हैं। और संघदासगणि दो हुए थे, और वसुदेवहिन्डीकार से भाष्यकार संघदासगणि परवर्ती थे ऐसा भी वे कहते हैं। प्रमाण तो इस विषय में भी उन्होंने नहि दिखाये।

हमारी राय में, जैसे उपर सिद्ध किया गया कि कल्प एवं व्यवहार - दोनों के भाष्य के प्रणेता एक ही हैं, तो वे जिनभद्रगणि के पूर्वभावी हैं ऐसा मानने में अब कोई द्विधा या संशय नहि रहता है। और उपर अमुक आन्तर प्रमाण भी तो दिये गए हैं।

दोनों संघदासगणि भिन्न हैं ऐसी मान्यता के पीछे, दो भिन्न पदवी के सिवा, कोई प्रमाण प्रस्तुत नहीं हुआ है। अतः सिर्फ दो समानार्थक पदवीवाचक शब्दों के भेदमात्र से दो भिन्न व्यक्तियों की कल्पना करने में कहाँ तक औचित्य है, यह भी सोचना होगा। दो बात हो सकती है : १) या तो 'वाचक' और 'क्षमाश्रमण' दोनों को पर्यायवाचक समझ लें। कहा भी है ही कि -

'वाई य खमासमणे, दिवायरे वायगे ति एगट्ठा।
पुव्वगयम्मी सुत्ते एए सद्दा पउंजंति ॥'[५५]

अथवा, २) एक ही व्यक्ति को प्रथमतः 'वाचक' पद हो, बाद में 'क्षमाश्रमण' पद मिला हो, ऐसा भी संभवित है। जैसे निशीथचूर्णिकार ने अपने विषय में लिखा कि -

'गुरुदिण्णं च गणित्तं, महत्तरत्तं च तस्स तुट्ठेहिं।
तेण कयेसा चुण्णी, विसेसनामा निसीहस्स ॥'[५६]

इन्हें प्रथम 'गणि' पद मिला, पश्चात् 'महत्तर' पद। क्या संघदासगणि के

साथ भी ऐसा हुआ हो यह संभावना अधिक उचित नहीं ? ।

इतिहास में एवं प्रमाणों से दो संघदासगणि की सिद्धि नहि हुई है । इसलिए एक ही आचार्य हो, और इन्होंने ही वसुदेवहिंडी - प्रथम खण्ड की तथा बाद में इन भाष्यों की रचना की हो, ऐसा मानने में कोई आपत्ति नहि लगती है । यदि ऐसा मानने में कोई स्पष्ट प्रमाण नहि है ऐसा कोई कहे, तो 'दो संघदासगणि' को मानने में और दोनों का उपरि-कथित पौर्वापर्य मानने में भी कौन-सा प्रमाण है ? यह भी पूछा जा सकता है ।

कल्पचूर्णिकार के विषय में विमर्श

अब कल्पचूर्णि के कर्ता के विषय में थोडा उहापोह करें । मुनिराज श्रीपुण्यविजयजी से लेकर सभी विद्वज्जनों ने इस चूर्णि के कर्ता को अज्ञात ही माना है । आज तक यह चूर्णि 'अज्ञातकर्तृक' कही जाती है ।

हमारे विचार से इस कल्पचूर्णि के प्रणेता वही है जो नन्दीचूर्णि के प्रणेता हैं, यानी कि जिनदासगणि महत्तर । इस बात के समर्थन में हम कुछ प्रमाण पेश करेंगे । जैसे कि -

नन्दीचूर्णि में एक प्रतिपादन आता है जिस में स्थावर - एकेन्द्रिय जीवों के चैतन्य की वृद्धि का क्रम निर्दिष्ट है । यह प्रतिपादन प्रायः अन्यत्र कहीं भी हो ऐसा देखने - जानने में नहीं आया । वह प्रतिपादन इस प्रकार है – "अहवा सव्वजहण्णो अणंतभागो निच्चुग्घाडो पुढविक्काइए, चैतन्यमात्रमात्मनः । तं च उक्कोस-थीणिद्धि-सहितनाण-दंसणावरणोदए वि णो आवरिज्जति । ... ततो पुढविकाइतेहिंतो आउक्कातियाण अणंत-भागेण विसुद्धतरं नाणमक्खरं । एवंकमेणं तेउ-वाउ-वणस्सति-बेइंदिय-तेइंदिय-चतुरिंदिय-अस्सण्णिपंचेंदिय-सण्णिपंचेंदियाण य विसुद्धतरं भवतीत्यर्थः"[५७] ।

यह एक महत्त्वपूर्ण और विलक्षण निरूपण है, जो शायद ही अन्यत्र कहीं मिले । मगर कल्पचूर्णि में यही बात निरूपित है – "अतस्तेन थीणगिद्धिसहिएणं णाणावरणोदएणं । तं च सव्वत्थोवं पुढविकाइयाणं । कस्मात् ? निश्चेष्टत्वात् । ततः क्रमाद् यावद् वनस्पतिकायिकानां विसुद्धतरं । ततो परं बेंदियमादी कमविसोही जाव अणुत्तरोववातियाणं, ततो वि चोद्दसपुव्वीणं विसुद्धतरं"[५८] ।

तो शब्दभेद से एकसमान निरूपण दोनों चूर्णियों में मिलता है, और अन्यत्र कहीं भी नहीं मिल रहा है, तो यह निरूपण-साम्य हमें ऐसा मानने में बाध्य करता है कि दोनों चूर्णियों के कर्ता एक ही होंगे। जरा स्पष्टता से इस विषय को देखें -

कल्पभाष्य की गा. ७६ के अनुसार, 'पंचण्ह वि' और 'बेंदियमादी कमविसोही' पाठ का, 'एकेन्द्रियों में सर्व-अल्प अक्षर, उससे अधिक अधिक द्वीन्द्रिय आदि में' ऐसा विवरण तो शास्त्रों में सर्वत्र मिलता है। इसी बात को मन में रखकर कल्प-वृत्तिकार ने इस गाथा की वृत्ति में लिखा कि "पञ्चानामपि पृथिवीकायिकादीनां वनस्पतिकायपर्यन्तानां स्त्यानगृद्धिनिद्रासहितेन ज्ञानावरणोदयेन 'अक्षरं' ज्ञानं 'अव्यक्तं' सुप्त-मत्त-मूर्च्छितादेरिवाऽस्फुटम्, अतो न तत्रापि सर्वथा ज्ञानमावृतम्"। वृत्तिकार का यहाँ तक का निरूपण परम्परागत रूप का है। आगे चलकर वे चूर्णिकार के अभिप्राय को भी बता देते हैं – "तथापि पृथिवीकायिकानामत्यस्फुटम्, ततोऽप्कायिक-तेजस्कायिक-वायुकायिक-वनस्पतिकायिकानां क्रमेण विशुद्धतरम्"। इतना लिखकर वे स्पष्टता देते हैं कि - "इदं चूर्णिकारवचनाल्लिखितम्"[५९]।

ऐसा लिखने का मतलब इतना ही कि स्वयं वृत्तिकार के पास, चूर्णिकार के उक्त वचन के अलावा, इस बात के लिए, यानी पांच स्थावरकायों में चैतन्य-विशुद्धि की क्रमिक वृद्धि के बारे में, कोई आधार नहि होगा। तो उन्होंने कह दिया कि यह बात हमने 'चूर्णिकार के वचन के आधार पर' लिखी है। और अपना आरूढ मन्तव्य तो उन्होंने पहलेवाली पंक्तियों में लिख दिया है। मतलब कि 'पांचों स्थावरों में सर्वाल्प चैतन्य है, मगर परस्पर में अल्प-बहुत्व की बात नहि'।

अब हमारी मूल बात : यह निरूपण कल्पचूर्णि में और नन्दीचूर्णि में - दो में ही प्राप्त है, अतः इन दोनों का कर्ता एक ही व्यक्ति होना चाहिए, ऐसा हमें लगता है।

दूसरी बात : नन्दीचूर्णि में 'अक्षरपटल' (अक्खरपडलं) नाम का खास अधिकार चूर्णिकार ने रखा है। उसमें उन्होंने कल्पभाष्य की ४ संपूर्ण गाथाएँ एवं एक गाथा का प्रतीकांश उद्धृत कर उन सभी पर विवरणात्मक चूर्णि भी लिखी

है[६०] । यह एक विलक्षण बात है । आवश्यकता के अनुसार गाथाएँ उद्धृत की जाय यह तो आम स्थिति है, मगर उन पर अलग से चूर्णि भी लिख दे, कल्पचूर्णि का सन्दर्भ उद्धृत न कर दे, यह भी जरा विलक्षण महसूस होता है । हमारा अभिप्राय होता है कि कल्पचूर्णिकार स्वयं ही नन्दीचूर्णिकार हो तो ही वे ऐसी छूट ले सकते हैं ।

तीसरी बात : कल्पचूर्णि में गा. २७० 'पज्जव पुव्वुद्दिट्ठा'[६१] के विवरण में चूर्णिकार ने लिखा कि - 'एयं नंदीए पुव्वुत्तं' । इसका अर्थ : 'यह बात (हमने) नन्दीसूत्र (की चूर्णि / विवरण) में पहले कह दी है' ऐसा होगा । अगर उन्हें यहाँ 'नंदी' से 'नन्दिसूत्र' (मूल ग्रन्थ) अभिप्रेत होता तो 'नंदीए उत्तं' अथवा 'जहा नंदीए' ऐसा कुछ लिखते, 'पुव्वुत्तं' न लिखते । इससे सिद्ध होता है कि नन्दीचूर्णिकार ही कल्पचूर्णि के प्रणेता है ।

कल्पभाष्य गा. ८० की चूर्णि में भी 'जहा णंदीए आवस्सए मणवग्गणासु' ऐसा उल्लेख है[६२]। उपरोक्त विवरण के बाद लगता है कि यह पाठ भी नन्दीचूर्णिपरक ही है और दोनों चूर्णियाँ एककर्तृक हो ऐसा संकेत दे रहा है ।

एक और बात : १६वीं - १७वीं शताब्दी में हुए तपागच्छीय उपाध्याय श्रीधर्मसागर गणि ने स्वरचित 'तपागच्छीय पट्टावली' ग्रन्थ में निशीथ, बृहत्कल्प, आवश्यक आदि की चूर्णि के कर्ता के रूप में जिनदासगणि महत्तर का नाम बताया है[६३] । इसका अर्थ है कि १७वीं शती तक तो कल्पचूर्णिकार के रूप में जिनदासगणि का नाम प्रख्यात एवं स्पष्ट या निश्चित होगा ही । यद्यपि पुण्यविजयजी ने, आवश्यकचूर्णि के सन्दर्भ में, धर्मसागरजी की बात को नकार दिया है[६४], लेकिन वैसा करना ठीक नहि लगता है । धर्मसागरजी की बात पर भी जरा गौर तो करना ही चाहिए, जो यहाँ आगे हम करेंगे । यहाँ तो इतना ही कहना है कि धर्मसागरजी के अनुसार भी कल्पचूर्णि के कर्ता जिनदासगणि ही हैं ।

एक ऐसी विचित्र भ्रान्ति भी चल रही है कि तदनुसार कोई कहते हैं कि 'बृहत्कल्पचूर्णिकार का नाम प्रलम्बसूरि है'[६५] । ऐसा विधान करने का आधार है, 'जैन ग्रन्थावली' नामक प्राचीन सूचि का पुस्तक । उसमें, पूणे स्थित डेक्कन कोलेज के संग्रह की ताडपत्र-प्रति के प्रान्त भाग में ऐसा नामोल्लेख होने का सूचन

हुआ है। उसके अनुसार वह प्रति सं. १३३४ में लिखी गई बृहत्कल्पचूर्णि की है[६६]।

स्पष्टतया यह वाचनदोष के कारण पैदा हुआ भ्रम है। 'प्रलम्ब' नामक आचार्य कोई हुए नहीं, और ऐसा नाम हो भी नहि सकता। हाँ, बृहत्कल्प में 'प्रलम्बप्रकृत' नामक प्रकरण जरूर है, और प्रत के वाचक ने उसके 'प्रलम्ब' शब्द के साथ 'सूरि' को जोड दिया हो तो अशक्य नहीं। वस्तुतः बिना जांच-पडताल किये इतिहास के ग्रन्थ में ऐसी भ्रमित करनेवाली बातें जोड देना - यह एक अपराध है। क्या इतिहास नई दन्तकथाएँ पैदा करने का साधन है? अस्तु।

जिनदासगणि-रचित चूर्णिग्रन्थ कितने ?

अब प्रसंगवश एक नये मुद्दे पर विमर्श करना है। हमारे दिमाग में एक प्रश्न उठ रहा है कि जिनदासगणि महत्तर ने कितनी चूर्णियों की रचना की थी?।

श्रीपुण्यविजयजी के अनुसार उन्होंने तीन चूर्णियाँ बनाई हैं यह निश्चित है: १. नन्दीसूत्रचूर्णि, २. अनुयोगद्वारचूर्णि, ३. निशीथचूर्णि[६७]। श्रीमोहनलाल मेहता के कथनानुसार, इन ३ के अतिरिक्त आवश्यक, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन और सूत्रकृतांग की चूर्णियाँ भी इन्हीं की रचना हैं ऐसी परम्परागत मान्यता है[६८]। तो आगमोद्धारक आचार्यश्री आनन्दसागरसूरिजी के मत से जिनदासगणि ने ९ चूर्णियाँ बनाई थी, और उनका रचनाक्रम इस प्रकार है - नन्दी, अनुयोगद्वार, आवश्यक, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, आचारांग, सूत्रकृतांग, व्याख्याप्रज्ञप्ति[६९] (यहाँ नाम ८ ही दिए है।) उल्लेखनीय है कि एक भी मन्तव्य में कल्प-व्यवहार की चूर्णि का उल्लेख नहि हुआ है।

यहाँ पर जिनदासगणि के द्वारा कितनी व कौन कौन ग्रन्थ पर चूर्णि लिखी गई थी, इस विषय में उपलब्ध होते कुछ प्रमाणों का विमर्श करना चाहिए-

१. व्यवहारचूर्णि में उल्लेख है कि 'पुव्वभणिया ओघनिर्युक्तौ कल्पे वा'[७०]। इससे प्रतीत होता है कि व्यवहारचूर्णिकार ने ओघनिर्युक्ति पर एवं कल्प पर चूर्णि लिखी है।

२. व्यवहारचूर्णि का प्रारम्भ बिना मंगलाचरण के, इस प्रकार किया गया है - 'उक्तः कल्पः, अधुना व्यवहारस्य अवसरः प्राप्तः। तत्र कल्प-व्यवहारस्याऽयं

सम्बन्धः - कप्पे आभवंतपच्छित्तं वुत्तं, ववहारे दाणपच्छित्तं वत्तव्वं । जं च कप्पे ण भणितं, तं ववहारे भण्णति । आलोयणविही ववहारे भण्णति। अनेन सम्बन्धेनाऽऽयातस्य व्यवहाराध्ययनस्य...'[७१] ।

यहाँ प्रथम वाक्य से दोनों का एककर्तृकत्व सिद्ध हो सकता है । अगर अलग चूर्णिकार होते तो वे मङ्गलोपचार अवश्य करते । परन्तु वैसा नहीं किया गया है । जैसे 'कप्प-ववहार' एक सुयखंध के दो अध्ययन माने गये हैं, वैसे ही एक चूर्णिकार के द्वारा रची गई चूर्णि के दो विभाग ही कल्पचूर्णि एवं व्यवहारचूर्णि के नाम से जाने जाते हैं । संघमाणिक्यगणि-कृत 'आगमवाचनानुक्रम' नामक कृति (हस्तलिखित ग्रन्थ : वि. सं. १५९८) में ऐसा उल्लेख है कि 'इति श्रीकल्प-व्यवहारचूर्णिः' । यह उल्लेख प्रमाणित करता है कि कल्प की एवं व्यवहार की - दोनों चूर्णि एकग्रन्थरूप थी, और इससे दोनों के कर्ता एक होगे यह भी अनुमान किया जा सकता है ।

३. व्यवहारचूर्णि में ऐसा उल्लेख है कि ''पूर्वं पंचकल्पे व्याख्याता''[७२] । अर्थात् इन्होंने पञ्चकल्पभाष्य पर भी चूर्णि बनाई है ऐसा स्पष्ट होता है ।

४. पञ्चकल्पचूर्णि में ऐसा उल्लेख पाया जाता है कि ''एतद् उपरिष्टात् तस्मिन्नेव कल्पे प्रथमोद्देशके मासकल्पद्वितीयसूत्रे व्याख्यास्यामः'' । ''दशमे उद्देशे व्यवहारस्य वक्ष्यामः''[७३] । इन दोनों उल्लेखों का तात्पर्य एक ही है : तीनों की चूर्णि के प्रणेता एक हैं ।

५. व्यवहारचूर्णि में कहा : ''जहा णिसीहे व्याख्यातं''[७४] । इसका तात्पर्य निशीथचूर्णिकार ही व्यवहारचूर्णिकार हैं - ऐसा स्पष्ट है । और व्यवहारचूर्णि से पहले निशीथचूर्णि की रचना हुई है यह भी प्रतीत होता है ।

६. व्यवहारचूर्णि में ही ''एयं पिंडनिज्जुत्तीए व्याख्यातं''[७५] ऐसा भी पाठ प्राप्त है । इससे 'पिंड-निज्जुत्ती' अर्थात् 'दशवैकालिक' पर भी इनकी चूर्णि है ऐसा स्पष्ट प्रतीत होता है ।

७. अब आवश्यकचूर्णि के बारे में -

१) व्यवहारचूर्णि में ''जहा आवस्सए भणिया''[७६] ऐसा निर्देश हुआ है । और कल्पचूर्णि के तो प्रारम्भ में ही लिखा है कि ''एताणि आवस्सए

पुव्वभणिताणि''[७७] । ये निर्देश इनके द्वारा रचित आवश्यकचूर्णि की ओर ही संकेत करते हैं, ऐसा मानना चाहिए । और ऐसे उल्लेख अनेक स्थल पर देखे जाते हैं । इनका क्या मतलब होगा ? । यही कि इन्होंने आवश्यकचूर्णि की रचना की है ।

२) यहाँ सवाल यह उठता है कि यदि वर्तमान में उपलब्ध आवश्यकचूर्णि जिनदासगणि की हो, तो उसमें कहीं भी विशेषावश्यकमहाभाष्य का उल्लेख क्यों नहीं ?, अपने सभी ग्रन्थ में उन्होंने महाभाष्य का आधार या संकेत दिया है, तो इसमें क्यों नहि ? । इसका अर्थ यही होगा कि यह चूर्णि उनकी रचना नहि हो सकती ।

३) एक और भी विचार उपस्थित हुआ है कि महाभाष्य में कई मत ऐसे बताये गये हैं कि जिनका महाभाष्यकार ने खण्डन किया है या तो अस्वीकार किया है । अब विचित्रता यह है कि ये सभी मत आवश्यकचूर्णि में प्रतिपादित मिल रहे हैं ![७८] । जिनदासगणि का समय तो जिनभद्रगणि के बाद का निश्चित है । वे स्वयं महाभाष्य को जगह जगह पर आधार बनाकर चले हैं । अब आवश्यकचूर्णि में वे ही महाभाष्यकार जिससे संमत न हो उन बातों या मतों को स्थान दे, यह तो कितना विचित्र-सा प्रतीत होता है ? ।

ये दो तर्क आवश्यकचूर्णि को जिनदासगणि की रचना मानने में बाधक हैं । और हमारी राय में यह सत्य भी है । उपलब्ध आवश्यकचूर्णि जिनदासगणि की नहि है - ऐसा ही मानना चाहिए ।

अब पुनः प्रश्न उठेगा कि, तो वर्तमान में, वस्तुतः परम्परा से, आवश्यकचूर्णि जिनदासगणि की है ऐसी जो मान्यता है वह गलत ही हुई न ?, और, तो, उपर जो व्यवहारचूर्णि के उल्लेखों का हवाला दिया है, उसका क्या करेंगे ?, इस सवाल के जवाब में हमारी सोच ऐसी है -

आवश्यकसूत्र पर दो चूर्णियाँ लिखी गई हैं । एक पुरातन, जो आज उपलब्ध है, और जिनदासगणि के नाम से प्रचलित है वह, और दूसरी जो अलब्ध-अप्राप्त है मगर वास्तव में जिनदासगणि ने रची होगी वह ।

उपलब्ध चूर्णि पुरातन है, शायद कल्पभाष्यकार संघदासगणि से भी पहले की है। भाष्यकार ने अपने पञ्चकल्पभाष्य में एक गाथा लिखी है, उसमें 'आवस्सए' ऐसा शब्द है। उस गाथा में जिस उदाहरण का निर्देश है उसे 'आवश्यक' में देख लेने की सूचना वहाँ दी गई है। अब उक्त उदाहरण आवश्यकनिर्युक्ति में या भाष्य में तो है नहीं; हाँ, चूर्णि में अवश्य मिलता है[७९]। अतः 'आवस्सए' पद से 'आवश्यकचूर्णि' का ही अतिदेश होता है ऐसा मानना होगा। और तो यह चूर्णि पञ्चकल्प-भाष्यकार के समक्ष थी ऐसा मानना ही होगा।

और अगर यह कल्पना यथार्थ है, तो स्पष्ट है कि इस चूर्णिकार के सामने जिनभद्रगणि कृत महाभाष्य नहीं ही होगा, और तो उसमें महाभाष्य का कोई उल्लेख या सन्दर्भ कैसे मिलेगा ?, महाभाष्य तो बहुत परवर्ती है। और अब यह भी कहना आसान बनेगा कि इस पुरातन चूर्णि में जिन मतों का उल्लेख है, उन मतों पर, समय के बहेते, विमर्श एवं ऊहापोह बढते गये होगे, और अन्ततोगत्वा महाभाष्यकार ने उन मतों का खण्डन किया होगा।

इसके बाद भी, यदि यह चूर्णि जिनदासगणि की नहि है, तो उनका नाम इस चूर्णि के साथ कैसे जुड गया ? और व्यवहार व पञ्चकल्प आदि की चूर्णि में वे आवश्यक(चूर्णि) का हवाला देते हैं उसका हल क्या होगा ?, ये प्रश्न तो खडे ही हैं।

इसका एक ही खुलासा हो सकता है : उन्होंने भी आवश्यक पर चूर्णि (या विशेषचूर्णि) बनाई होगी, मगर किसी भी कारण से वह आज उपलब्ध नहि है। जैसे अनुयोगद्वार, दशवैकालिक, जीतकल्प इत्यादि ग्रन्थों पर दो दो चूर्णियाँ हैं ही। बृहत्कल्प पर भी चूर्णि एवं विशेषचूर्णि दो चूर्णि हैं ही; निशीथ पर जिनदासगणि ने 'विशेषचूर्णि' ही लिखी है, उसका मतलब कि उसकी भी अन्य चूर्णि होनी चाहिए। *ठीक इसी प्रकार, आवश्यकसूत्र की एक प्राचीन चूर्णि के उपरांत, इन्होंने* नयी चूर्णि या तो विशेषचूर्णि बनाई हो ऐसा हम मान सकते हैं; और तो ही 'पुव्वं आवस्सए भणियं' जैसे उल्लेख सार्थक हो सकते हैं।

इस तरह नन्दी, अनुयोगद्वार एवं निशीथ के उपरांत, उपर उल्लिखित प्रमाणों के आधीन, पंचकल्प, कल्प-व्यवहार, ओघनिर्युक्ति, पिण्डनिर्युक्ति या तो दशवैकालिक, आवश्यक - इन सब की चूर्णियों के प्रणेता भी जिनदासगणि

महत्तर हैं ऐसा सिद्ध होता है। और यह तो प्रथमदर्शी प्रमाणों पर आधारित बात है। अधिक एवं बारीकी से इन चूर्णियों का अध्ययन होगा, तब हमारे द्वारा की गई उक्त कल्पनाएँ तो यथार्थ साबित हो सकती हैं, किन्तु अन्य चूर्णियों के तथ्य भी प्रकाश में आ जाएंगे।

बृहत्कल्पबृहद्भाष्य के विषय में विमर्श

अब कुछ विचार बृहद्भाष्य के सन्दर्भ में -

सामान्यतः परम्परा के अनुसार भाष्ययुग की पूर्वसीमा विक्रमसंवत् से पूर्व तीसरी सदी, एवं उत्तरसीमा विक्रम की ७वीं शताब्दी है, ऐसा माना जाता है। परन्तु इस विषय में किसी संशोधक ने विचार किया हो ऐसा देखने में नहि आता। भाष्यकार के तौर पर, अभी तक तीन ही नाम हमें उपलब्ध हुए हैं : श्रीसंघदासगणि, श्रीसिद्धसेनगणि एवं श्रीजिनभद्रगणि। इनमें श्रीसंघदासगणि पाँचवी शताब्दी के हैं ऐसा श्रीपुण्यविजयजी का मत है[८०]। परन्तु इसके लिये उन्होंने कोई प्रमाण नहि दिया। हमें वह ढूँढना चाहिए।

'पाक्षिकसूत्र' हमारे संघ में, 'आगम' न होने पर भी, आगम जैसा दर्जा पाया हुआ सूत्र है। आवश्यकसूत्र के बाद तुरन्त उसका स्थान रहा है; या तो ऐसा कहे कि वह आवश्यकसूत्र के साथ का सूत्र है तो भी गलत नहि होगा। 'आगमवाचनानुक्रम'[८१] में संघमाणिक्यगणि ने लिखा है कि 'आवश्यकानन्तरं पाक्षिक-सूत्रवाचनानुक्रमो ज्ञेयः'। इससे उक्त धारणा को पुष्टि मिलती है।

वैसे तो यह सूत्र प्राचीन है। लेकिन शायद इसमें पश्चात्काल में कुछ अंश प्रक्षिप्त हो, अथवा इसका पुनर्घटन या संकलन हुआ हो, ऐसा लगता है। इसमें जिन आगमों के नाम आते हैं उनमें 'नन्दी' का भी नाम है। अतः श्रीदेवर्धिगणि क्षमाश्रमण की वलभीवाचना के दौरान इसका संकलन व लेखन किया गया है ऐसा मानना चाहिए। तो ही इसमें 'नन्दी' का नाम आ सकता है, क्योंकि 'नन्दी' की रचना (या संकलना) तो देववाचक ने की है। और देववाचक ही देवर्धिगणि हैं ऐसा कई विद्वज्जनों का मत है[८२]।

अब इस सूत्र में 'ससुत्ते सअत्थे सगंथे सनिज्जुत्तीए ससंगहणीए' ऐसा पाठ आता है। यहाँ 'भाष्य' का उल्लेख नहीं है। इससे ऐसा लगता है कि इस

सूत्र के लेखन के समय तक 'भाष्य' की रचना नहि हुई होगी। यदि हुई होती तो यहाँ 'भाष्य' का भी उल्लेख अवश्य करते। यहाँ 'संग्रहणी' का उल्लेख हुआ है। संग्रहणी के प्रणेता आर्य कालक है, जिनका समय वीरात् ६०५ यानी वि.सं. २३५ लगभग का अंदाजा गया है[८३]। चूंकि आर्य कालक से पहले 'संग्रहणी' नहि थी, अथवा उसके होने का कोई प्रमाण प्राप्त नहि है, और 'पाक्षिकसूत्र' तो था ही; वह तो निर्युक्ति-काल से भी पूर्व का, सूत्र-काल का है; इसलिए हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि 'संग्रहणी'-निर्माण-काल के बाद में ही कभी इस सूत्र का पुनः संकलन हुआ है, और वह अरसा वीरात् ९८० का अर्थात् वलभी वाचना का ही हो सकता है। मुनि पुण्यविजयजी ने भी लिखा है कि "आजना जैन आगमोमां एवा घणा घणा अंशो छे, जे जैन आगमोने पुस्तकारूढ करवामां आव्या त्यारे के ते आसपासमां उमेराएला के पूर्ति कराएला छे"[८४]। अतः भाष्य का समय वीरात् ९८० यानी वि.सं. ५१० के पहले का हो, पाँचवी शताब्दी हो, ऐसा मानना जल्दबाजी ही होगी।

इसी तरह, स्वयं नन्दीसूत्र में भी, जहाँ आगमों का विवरण किया गया है वहाँ, 'संखेज्जाओ णिज्जुत्तीओ, संखेज्जाओ संगहणीओ, संखेज्जाओ पडिवत्तीओ' ऐसा पाठ आता है। यहाँ भी भाष्य के बारे में एक शब्द भी नहीं है। अगर भाष्य होते तो वे क्यों न लिखते ?, पश्चात्कालीन 'संग्रहणी' का यदि समावेश किया जा सकता है तो पश्चाद्वर्ती 'भाष्य' का समावेश भी क्यों न होता ?, इसलिए यही मानना अधिक उचित होगा कि भाष्य की रचना ५१० के बाद की है, और इसलिए संघदासगणि का समय अथवा उनका भाष्यरचना-समय ५१० के बाद का ही हो सकता है। उनको ५ वीं शताब्दी के मानना ठीक नहि होगा।

इतने विमर्श से स्पष्ट होता है कि भाष्ययुग की पूर्वसीमा ९८० या ५१० है, और उत्तरसीमा सातवीं शताब्दी (६३७) है।

इस बात के परिप्रेक्ष्य में अब बृहद्भाष्य के समय के विषय में विचारणा करे :

मुनि श्रीपुण्यविजयजी के मतानुसार, बृहद्भाष्य की रचना, चूर्णि एवं विशेषचूर्णि के भी बाद की है। क्योंकि कल्पलघुभाष्य की गाथा १६६१ में प्रतिलेखना के काल का निरूपण किया गया है। इस गाथा के विवरण में

चूर्णिकार ने एवं विशेषचूर्णिकार ने जितने आदेशान्तरों का उल्लेख किया है, उसकी अपेक्षा बृहद्भाष्य में नई नई अनेक अधिक मान्यताओं की बात की गई है। ये सभी मान्यताएँ हरिभद्रसूरि-कृत 'पञ्चवस्तुक' की स्वोपज्ञ वृत्ति में उपलब्ध होती हैं। इसका तात्पर्य हम निश्चित रूप से ऐसा निकाल सकते हैं कि बृहद्भाष्य के प्रणेता आचार्य, चूर्णिकार एवं विशेषचूर्णिकार के बाद में ही हुए हैं'[८५]।

मुनिजी के इस मत के उपर जब सोचा तब कुछ समस्याएँ खडी होने लगी - चूर्णिकार (जिनदास-गणि) का समय आठवीं शताब्दी का पूर्वार्ध है। विशेषचूर्णिकार तो चूर्णिकार के बाद के हैं। उनको आठवीं शती के उत्तरार्ध में रखने चाहिए, और चूर्णि और विशेषचूर्णि - दोनों के बीच में ४०-५० साल का अन्तर तो अवश्य होने का मानना चाहिए। बृहद्भाष्य उसके बाद का है ऐसा अगर मानों तो उसे जल्दी से जल्दी भी नवीं शताब्दी से पहले हम नहि रख पाएंगे। फलतः हमने उपर जो भाष्ययुग की उत्तर-सीमा आंकी, उससे पीछे दो या ढाई सौ साल तक भाष्ययुग को ले जाना पडेगा। यह किसी भी स्थिति में संभवित नहि लगता।

क्योंकि १) चूर्णियुग में भाष्य - आगमिक भाष्य लिखे गये हो ऐसा कोई निर्देश प्राप्य नहि है। २) एकबार गद्य व्याख्या शुरू हो गई, तो फिर पद्य व्याख्या लिखी जाय ऐसा प्रायः कहीं पर भी देखने नहि मिलता। यहाँ तो लघुभाष्य के उपर चूर्णि व विशेषचूर्णि जैसे दो दो गद्य विवरण लिखे जाने के बाद बृहद्भाष्य की रचना हुई हो ऐसा प्रतिपादन है !। क्या ऐसा संभवित है ?। ३) यदि चूर्णि या विशेषचूर्णि पूर्वकालीन और बृहद्भाष्य उत्तरकालीन - ऐसा मान भी लें, तो भी इन दोनों के बीच का अन्तर, अधिक से अधिक, सौ साल का हो सकता है। और सिर्फ इतने काल में इतने सारे आदेशान्तर या मतान्तर पैदा हो गये, ऐसा मानना जरा मुश्किल सा लगता है।

हमारे अभिप्राय से ये 'मतान्तर' पहले से ही चले आते होंगे। उनमें से कुछ का संग्रह चूर्णि में हुआ, बृहद्भाष्यकार ने अधिक मतान्तरों का संग्रह किया। बाकी कम या ज्यादा संग्रह करने से, एक पूर्वकालीन और दूसरा पश्चात्कालीन - ऐसा मानना तर्कसंगत नहि लगता। बल्कि इससे ऊलटा तर्क भी किया जा सकता है कि बृहद्भाष्य में सभी प्रचलित मतों का समावेश हुआ था, और बाद में

चूर्णिकार ने उसी के आधार पर थोडे कम मतों को संगृहीत किये ।

मतान्तरों के कम-ज्यादा संग्रह को आधार बनाकर ही यदि 'यह पहला, यह बाद का' ऐसा निश्चय किया जाय तो, बृहद्भाष्य में 'हेट्ठिल्ला उवरिल्लाहि०'[८६] गाथावाले प्रकरण में बहुत मतों या मतान्तरों का उल्लेख मिलता है, और कल्पवृत्तिकार ने उनमें से एक मत का भी उल्लेख नहि किया है - तो क्या इस बात को आधार बनाकर बृहद्भाष्य को वृत्तिकार से भी पश्चाद्वर्ती मान लेंगे ? ।

कोई ऐसा भी तर्क उठा सकता है कि चूर्णि में बृहद्भाष्य का कोई उल्लेख नहि है, अतः वह पश्चात्कालीन है । इसके सामने ऐसा भी तर्क हो सकता है कि बृहद्भाष्य में चूर्णि के बारे में कोई निर्देश नहीं, इसलिए चूर्णि पश्चात् है और भाष्य पूर्व । वस्तुतः ऐसे अवास्तविक तर्कों का कोई मूल्य नहीं होता ।

विक्रम की १२वीं - १३वीं शताब्दी में हुए चन्द्रकीर्तिगणि नामक श्रमण ने 'निःशेषसिद्धान्त-विचारपर्याय' नामक ग्रन्थ रचा है । उसमें कल्पलघुभाष्य के एवं कल्पचूर्णि के पर्याय लिखे हैं । वहाँ ऐसा पाठ है : ''भाष्ये 'भय सेवणाए धाउ' त्ति, भज् श्रिंग् सेवायाम् धातुः''[८७] ।

अब वृत्तिसंमत एवं चूर्णिसंमत भाष्य-वाचना में, यहाँ, ऐसा पाठ गाथा में नहि है । जब कि बृहद्भाष्य में इस पाठ का विवरण है । इसका मतलब यह हुआ कि चन्द्रकीर्तिगणि के समक्ष एवं बृहद्भाष्यकार के समक्ष भाष्य की जो वाचना थी, उसमें यह पाठ था । किन्तु चूर्णिकार के सामनेवाली वाचना में यह पाठ नहि होगा, ऐसा हठात् मानना पडेगा । क्योंकि ऐसा पाठ होता तो वे व्याख्या भी करते ।

और इस गाथा में 'भज्' के दो अर्थ हैं : 'विचारेहिं' एवं 'सेवायाम्' । क्या चूर्णिकार के समक्ष इन दो अर्थवाली परम्परा भी नहि रही होगी ? । बृहद्भाष्य के कर्ता के पास दो अर्थ की परम्परा[८८] है, अत एव उन्होंने वैसी व्याख्या भी की है, जो कि चूर्णिकार ने और वृत्तिकार ने भी नहि की है[८९] । और इन दो अर्थों के बिना गाथार्थ पूर्ण नहि होता है ।

इसका मतलब इतना ही होगा कि चूर्णिकार को जहाँ जितना उचित व आवश्यक लगा उतना ही उन्होंने लिया व उतने अंश को ही व्याख्यायित किया । जब कि बृहद्भाष्य बृहद्-व्याख्यारूप है, अतः उन्होंने जहाँ विषय और प्रकरण के

अनुरूप जो भी जितना भी था उसका संग्रह किया, व्याख्या की, और खुद की बृहत्ता सार्थक ठहराई।

प्रतिलेखना-काल के आदेशान्तरों के बारे में एवं 'हेट्ठिल्ला' गाथा के विविध अर्थघटन व मतान्तरों के बारे में भी यही बात लागू हो सकती है। चूर्णिकार को संक्षेप अपेक्षित था इसलिए उन्होंने ज्यादा मतान्तर आदि का ग्रहण एवं व्याख्यान नहि किया। बृहद्भाष्यकार का लक्ष्य विस्तृत विवरण था, तो उन्होंने सभी आदेशान्तर एवं मतान्तरों का संग्रह एवं विवरण कर दिया।

लेकिन इस कारण से चूर्णि पूर्व की और बृहद्भाष्य पीछे का - ऐसा निष्कर्ष निकालना औचित्य नहि रखता।

हमारी स्पष्ट और दृढ धारणा है कि बृहद्भाष्य की रचना चूर्णि से पहले हुई है। यद्यपि उपलब्ध पूरे बृहद्भाष्य का अवलोकन करना अभी बाकी है। परन्तु जैसे जैसे अवगाहन होता जाएगा, वैसे कोई प्रमाण मिल जा सकता है, और तब यह धारणा यथार्थ सिद्ध भी हो सकती है।

बृहद्भाष्य एक भाष्य है, उसका स्थान एवं निर्माण 'भाष्ययुगीन' ही होना चाहिए। 'चूर्णियुग' में उसका निर्माण हुआ मानना, हमारी दृष्टि में उचित नहि लगता।

आगे संघमाणिक्यगणि के 'आगमवाचनानुक्रम' की बात हुई है। उसमें बृहद्भाष्य के लिए ऐसी नोंध है –

- काऊण नमुक्कारं० (पूरी गाथा)।
- कृगि करणत्थो धातू० (पूरी गाथा, बृहद्भाष्य की)।

इति श्रीकल्पव्यवहारबृहद्भाष्यं। ग्रन्थागं १२००० ॥

इस नोंध के फलितार्थ -

१. कल्प-व्यवहार का बृहद्भाष्य एक व अखण्ड होना चाहिए।

२. उसका कर्ता एक ही होगा।

३. आज बृहद्भाष्य अपूर्ण उपलब्ध है, और जितना अंश प्राप्य है वह प्रायः ७००० गाथा प्रमाण है, और प्राप्त अंश बृहत्कल्प के भाष्य का ही है, तो

कल्पमहाभाष्य का थोडा अंश अलब्ध है और व्यवहारमहाभाष्य पूर्णतया अलब्ध - ऐसा मानना होगा।

४. दोनों महाभाष्य मिलकर १२००० गाथाएँ होगी।

५. संघमाणिक्यगणि के सामने यह पूरा बृहद्भाष्य ग्रन्थ उपस्थित होगा।

बृहत्कल्पसूत्र और उसके विवरणों का वर्णन

अब थोडी बातें इस ग्रन्थ के बारे में -

इस ग्रन्थ का नाम 'बृहत्कल्पसूत्र' है।

जैन संघ के मान्य, विद्यमान आगम-ग्रन्थ ४५ हैं। उनमें छ आगम 'छेदसूत्र' के नाम से जाने जाते हैं। साध्वाचारों के विषय में उत्सर्ग और अपवाद - मार्ग का एवं प्रायश्चित्तविधि का प्रतिपादन, मुख्यतया, इन ग्रन्थों में हुआ है। इन छ ग्रन्थों में एक बडा एवं मुख्य ग्रन्थ है बृहत्कल्पसूत्र। पाक्षिकसूत्र में तीन कल्प-सूत्र के नाम आते हैं - 'कप्पो', 'चुल्लकप्पसुयं', 'महाकप्पसुयं'। इनमें से 'कप्पो' नाम इसी ग्रन्थ के लिए प्रयुक्त है।

यह 'कल्प' ग्रन्थ सूत्रात्मक है। इसका प्रथम सूत्र -

'नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा आमे तालपलंबे अभिन्ने पडिगाहित्तए'[९०] ॥

और अन्तिम सूत्र -

'छव्विहा कप्पट्ठिती पण्णत्ता ... थेरकप्पट्ठिति त्ति बेमि'[९१]।

इस सूत्र के प्रणेता चतुर्दश पूर्वधर स्थविर आर्य भद्रबाहुस्वामी हैं। उन्होंने ही इस सूत्र पर निर्युक्ति भी बनाई है। 'निर्युक्ति' गाथाबद्ध होती है। वह बहुत संक्षेप में विवरण देती है, अतः उस पर 'भाष्य' बनाया जाता है।

'कल्प' के उपर दो भाष्य रचे गये हैं : लघुभाष्य और बृहद्भाष्य। लघुभाष्य का मुद्रित गाथा-प्रमाण ६४९० है। इसके प्रणेता श्रीसंघदासगणि क्षमाश्रमण हैं।

वैसे भाष्य, निर्युक्ति का विस्तृत विवरण ही होता है। परन्तु आगे चलकर, निर्युक्ति का कद अत्यन्त लघु होने के कारण, ऐसी स्थिति बनी कि

निर्युक्ति को भाष्य बहुधा निगल गया यानी दोनों एकमेक में ऐसे घुलमिल गये[१२] कि बाद में यह निर्युक्ति की गाथा है और यह भाष्य की - ऐसा पृथक्करण कर पाना अशक्य हो गया।

परन्तु छोटे छोटे थोडे सूत्रों के उपर साढे छ हजार गाथाएँ विवरण के रूप में लिखी जाय, यह अपने आप में एक चमत्कृति तो है ही, साथ ही साथ इससे 'सूत्र' की गंभीरता का और गंभीर सूत्रार्थों को समझने की - पकड लेने की भाष्यकार महर्षि की प्रचण्ड प्रज्ञा का भी परिचय होता है।

वैसे तो भाष्य सूत्र के उपर विवरण के रूप में बना है। परन्तु सूत्रांश का विवरण करने से पहले भाष्यकार ने एक पूर्वभूमिका का निर्माण किया है जिसे 'पीठिका' कहा जाता है। किसी सूत्र के विवरणरूप नहि होने से, यह अंश, भाष्यकार के द्वारा रचे गये एक स्वतंत्र ग्रन्थ जैसा है। 'पीठिका' रूप इस अंश में, ८०० से भी अधिक गाथाओं में, भाष्यकार ने, सूत्र को पढने-समझने से पहले क्या *क्या जानना व सीखना चाहिए, यह बात प्रतिपादित की है*। चूंकि यहाँ उन्हें 'सूत्र' के बन्धन में नहि चलना था, अतः उन्होंने यहाँ अनेक अनेक ज्ञेय विषय लिख दिये हैं। इन विषयों में दार्शनिक बातें भी हैं, और द्रव्यानुयोग के पदार्थ भी हैं। अनेक नई बातें भी हैं, जिन बातों के विषयों को लेकर हमने परिशिष्ट क्र. १ बनाया है। जिज्ञासु वहाँ से ये बातें जान सकते हैं।

दूसरा 'बृहद्भाष्य' है, जो कि लघुभाष्य के विवरण-स्वरूप है। उसका भी यहाँ पीठिकांश ही सम्पादित किया गया है। वह अंश १६६२ गाथाप्रमाण है। उसकी चर्चा आगे की जाएगी। पहले कल्पचूर्णि की चर्चा करेंगे।

चूर्णि

चूर्णि का स्थूल शब्दार्थ सोचें तो 'चूर्णनं चूर्णिः' ऐसी व्युत्पत्ति की जा सकती है। अर्थात् 'चूर्ण करना - चूरा करना'। जिस ग्रन्थ के उपर व्याख्या की जाती हो उस के पदों का, वाक्यों का, गाथाओं का चूर्ण कर देना, यानी उनके अर्थों को - रहस्य को खोलना, यह है चूर्णि।

यद्यपि चूर्णि हमेशा संक्षिप्त ही होती है; थोडे शब्दों में बहुत सारा तात्पर्य बता देना उसका प्रमुख लक्षण होता है; कई जगह तो विवरण या व्याख्या करना ही

चूर्णिकार टाल देते हैं और 'कंठा/कंठं' कहकर बात निपटा देते हैं। तो भी इतना निश्चित है कि चूर्णिकार यदि भाष्य के पदार्थों को खोलकर न दिखाते तो कई बातें या रहस्य हमारे लिए अछूते ही - अज्ञात ही रह जाते। जैसे कि -

भाष्यगाथा में विविध कथाओं के संकेत एक-दो पदों से लिख दिये हैं। मगर इतने से वह किसकी व कौनसी कथा है इसका पता हम नहि लगा सकते थे। लेकिन चूर्णिकार ने उन संकेतित कथाओं को विस्तार में लिख दी हैं। उदा. 'वच्छग गोणी खुज्जा०' (१७२)[९३]- इस गाथा में सूचित कथाओं को चूर्णि में स्पष्ट एवं विस्तृत रूप से समझा दी गई हैं।

उपमा और दृष्टान्त भी इसी प्रकार समझाये हैं। जैसे कि उक्त गाथा में ही 'वच्छग-गोणी' का दृष्टान्त। अथवा गा. १९२[९४] में 'पेडा' का दृष्टान्त, जिसे चूर्णि में खोलकर समझाया गया है। गा. १९० में भी अनेक दृष्टान्तों के संकेत[९५] दिये हैं, जिन्हें बिना चूर्णि की मदद के समझ पाना कठिन था।

कौनसी गाथा किस पद की व्याख्यारूप है यह भी चूर्णि के जरिये ही समझ में आता है। जैसे कि 'अणु बायरे य उंडिय०'[९६] (१९०) में अनेक पद हैं, उन पदों की भाष्य में व्याख्या तो है, मगर कौनसी गाथा किस पद को व्याख्यायित करती है, वह तो चूर्णि से ही मालूम पडता है। यहाँ 'उंडिय' की व्याख्या 'अधितो जोग णियोगो०'[९७] (१९६-९७) में है, उसका बोध चूर्णि के अवतरण से ही होता है। वैसे ही अन्य पदों के विषय में भी, और अन्यत्र भी समझना है।

चूर्णि गाथाओं का सम्बन्ध भी जोड देती है। जैसे कि गा. १०९ की चूर्णि में लिखा कि "एत्थ वक्कं पडितं - कोद्दवा चेव"[९८], चूर्णिकार ने यह संकेत गा. ९७ में आते पद 'कोद्दवा चेव' की ओर किया है और सूचित किया कि अब उन पदों की व्याख्या हो रही है। चूर्णि न होती तो यह सम्बन्ध जोडना जरा विकट होता।

प्रायश्चित्त के विषय में भी चूर्णि में पर्याप्त स्पष्टता की गई है। अन्यथा कहाँ - किस विषय में कितना व क्या प्रायश्चित्त इसका स्पष्टीकरण नहि हो पाता। जैसे कि 'छक्काय चउसु लहुगा०'[९९] (गा.४६२) में जो प्रायश्चित्त के संकेत हैं, वे चूर्णि से ही स्पष्ट हो सकते हैं। बिना चूर्णि के उन संकेतों को समझ पाना मुश्किल है।

भाष्यकार के अभिप्राय को भी चूर्णि ही खोलती है । जैसे कि ' पढमासति वाघाए०'[१००] (गा. ४६४) में भाष्यकार ने तो 'पढमासति वाघाए' कहकर बात पूरी कर दी है । उसका तात्पर्य कहाँ तक पहुंचता है यह तो जब चूर्णि पढते हैं तब ही समझ में आता है । यहाँ 'जतणाए' पद है, और उसका सम्बन्ध गा. ४१९ गत 'जयणा'[१०१] पद के साथ जोडने का है, इसका पता तो, चूर्णिगत 'एत्थ जयण त्ति वाक्यं पडितं'[१०२] इस वाक्य से ही चलता है ।

भाष्य में मुनिजीवन की अनेकविध सामाचारी का निर्देश दिया गया है । उन सामाचारी की बातें समझने के लिए चूर्णि की सहायता अनिवार्य है । यदि केवल भाष्य के शब्दों से सामाचारी को समझने का प्रयत्न किया जाय, तो वह विफल ही रहेगा, इसमें कोई शंका नहीं ।

यह चूर्णि भी यहाँ पीठिकांश की ही सम्पादित की गई है । यह चूर्णिग्रन्थ, जैसा कि इस लेख के प्रारम्भ में कहा है वैसे, पुनः सम्पादित हुआ है, और पुनः प्रकाशित हो रहा है ।

बृहद्भाष्य

चूर्णि के बाद हम बृहद्भाष्य के बारे में कुछ लिखना चाहेंगे । सर्वप्रथम एक बात स्पष्ट होनी आवश्यक है कि 'कल्प-बृहद्भाष्य' स्वतंत्र ग्रन्थ नहीं, अपि तु कल्प-लघुभाष्य का विवरण-ग्रन्थ है । जैसे लघुभाष्य पर चूर्णि एवं वृत्ति लिखी गई हैं, उसी प्रकार उस पर यह बृहद्भाष्य भी लिखा गया है ।

बृहद्भाष्य की विवरण-पद्धति जरा विलक्षण है । उसका परिचय इस प्रकार है —

बृहद्भाष्यकार को जहाँ आवश्यक लगा वहाँ - १. लघुभाष्य की गाथा के उपर एक या एकाधिक गाथात्मक विवरण लिखा है । २. जहाँ जरूरी नहि लगा वहाँ लघुभाष्य की गाथा पर कुछ नहि लिखा । ३. कई स्थान पर लघुभाष्य की गाथा के अंशों को पकडकर एक गाथा पर नई ४-६ गाथाएँ बनाई हैं । देखते ही खयाल आ जाता है कि ये गाथाएँ अमुक गाथा के विवरण में बनी हैं । ऐसे स्थान पर लघुभाष्यवाली मूल गाथा को वे ग्रहण नहि करते, सिर्फ उसके अंशों को लेकर बनी नई गाथाएँ ही रखते हैं ।

लघुभाष्य की उपलब्ध मुद्रित वाचना के साथ बृहद्भाष्य में स्वीकृत वाचना का मिलान करते वक्त अनेक पाठभेद प्राप्त हुए । उनका संग्रह हमने परिशिष्ट क्र. ४ में किया है ।

हमारे यहाँ लघुभाष्य और बृहद्भाष्य - ऐसे दो भाष्यों की परम्परा रही है। जैसे कि कल्प और व्यवहार का लघुभाष्य उपलब्ध है ही, और अब उन दोनों का यह बृहद्भाष्य भी, भले अपूर्ण ही हो, मिल रहा है। वैसे ही अन्य ग्रन्थों पर भी ऐसे दो भाष्य बने हैं, चाहे उनमें से कोई आज उपलब्ध न भी हो ।

विशेषावश्यकभाष्य 'महाभाष्य' के नाम से प्रख्यात है। वैसे 'बृहद्' व 'महा' दोनों शब्द समानार्थक ही हैं, फिर भी उसे 'बृहद्भाष्य' नहि कहा जाता। दोनों बडे भाष्यों की विवरण-पद्धति में काफी भिन्नता भी है। महाभाष्यकार ने आवश्यकनिर्युक्ति की एवं मूल भाष्य की गाथा को लेकर उस पर विवरण किया है ऐसा नहीं। उन्होंने, उन गाथाओं को आधार बनाकर, अपने चित्त में जिन विषयों एवं पदार्थों का प्रतिपादन व विवेचन करने का ठाना है, वह पूरी स्वतन्त्रता से और बडे विस्तार के साथ किया है। कल्प के बृहद्भाष्य में यह पद्धति नहि दिखाई देती। यहाँ तो स्पष्टतया लघुभाष्य की गाथाओं पर, चूर्णि एवं वृत्ति के ज्यूं ही, बृहद्भाष्य विवरण ही करता है। दोनों बडे भाष्यों का यह तफावत है ।

तो भी इस बृहद्भाष्य में विशेषताएँ कम नहि हैं। चूर्णि एवं वृत्ति की तुलना में यह अनेक रीति से विशिष्ट विवरण है, इतना तो इसके थोडे अध्ययन के बाद भी मानना पडेगा। उन विशेषताओं पर एक दृष्टिपात करें -

१) अनेक महत्त्वपूर्ण विषयों पर चूर्णि एवं वृत्ति में जहाँ स्पष्टता नहि मिलती, वहाँ बृहद्भाष्य स्पष्टता देता है। उदाहरणार्थ –

   १. 'हेट्ठिल्ला' (गा. ६००) गाथा पर बृहद्भाष्य में ४३ गाथा प्रमाण (१२७८ - १३२१) विस्तृत विवेचन हुआ है, और उसमें जो स्पष्टता होती है वह वृत्ति या चूर्णि से नहि होती ।

   २. इसी प्रकार, 'पिण्ड' के दोषों के अधिकार में, चूर्णि व वृत्ति, भेदों का बहुत संक्षिप्त वर्णन कर प्रायश्चित्त बताकर रुक गये हैं । जब कि बृहद्भाष्य में सभी दोष-भेदों का विस्तृत वर्णन किया गया है - गा.

११५३ - ११९८ ।

३. 'मंगल' के अधिकार में 'लोणुण्हपदीवमादिव्व' (लघुभाष्य गा. २३) में तीन दृष्टान्त की घटना चूर्णि एवं वृत्ति में जिस तरीके से की गई है, उसकी तुलना में बृहद्भाष्य (गा. १४६ - ४८) में, वह अधिक प्रतीतिकर व तर्कसंगत तरीके से की गई है ।

४. गा. १९० 'अणु बादरे य उंडिय०' में उल्लिखित दृष्टान्तों की घटना चूर्णि और वृत्ति में हुई जरूर है, लेकिन उन दृष्टान्तों का विशद व व्यवस्थित निरूपण तो बृहद्भाष्य (गा. ५०२ से) में ही मिल रहा है । उसमें भी 'मंखसुत' के दृष्टान्त की अत्यन्त समुचित घटना (गा. ५३२ - ३३) यहाँ है वैसी चूर्णि-वृत्ति में नहि है ।

५. कभी तो एक ही दृष्टान्त को विभिन्न रीति से यहाँ समझाया गया है (गा. ११४१ - ४३) ।

२) कभी ऐसा भी हुआ है कि लघुभाष्य की गाथा का पाठ अधूरा या अपर्याप्त हो, और उसका सही पाठ बृहद्भाष्य देता हो । जैसे कि –

१. लघुभाष्य गा. ३३६ 'सेल-घण-कुडग-चालिणि' में 'भोम्म' और 'कढिण' ये दो दृष्टान्त छूट गयें हैं । जब कि गा. ३४० में 'भोम्म' की एवं ३४७ में 'कढिण' की बात तो आती ही है । बृहद्भाष्य में ये दोनों दृष्टान्त उक्त गाथा में ही समाविष्ट देखे जाते हैं (गा. ८४९) ।

२. 'हरिते बीएसु तहा०' (लघुभाष्य गा. ५०१) के पाठ से बृहद्भाष्यगत इसी गाथा का (गा. ११०६) पाठ जरा जुदा है । परन्तु यहाँ लघुभाष्य के चूर्णि एवं वृत्ति के स्वीकृत पाठ में १-१ चतुर्भङ्गी छूट गई है, जब कि बृहद्भाष्यवाले पाठ में सभी चतुर्भङ्गियाँ समा गई हैं ।

३. लघुभाष्य गा. ५०५ में 'वित्तसचलणे य आयाए' पाठ है, और बृहद्भाष्य में यहाँ 'वित्तसणे संजमाताए' पाठ है । जाहिर है कि लघुभाष्य के चूर्णि और वृत्ति द्वारा स्वीकृत पाठ में संयम की विराधना की बात रह गई है, जो बृहद्भाष्यवाले पाठ में नहि छूटती है ।

ऐसे तो कई उदाहरण या स्थान हैं जहाँ लघुभाष्य के मुद्रित या चूर्णि-

मान्य पाठ की तुलना में बृहद्भाष्य के पास अधिक अच्छे व उपयुक्त पाठ हैं। इसका एक अर्थ हम ऐसा निकाल सकते हैं कि बृहद्भाष्यकार के पास कल्पलघुभाष्य की जो वाचना होगी वह अधिक शुद्ध, अर्थसंगत व प्रमाणभूत रही होगी।

३) कोई प्रश्न आता है तो उसका समाधान सर्वत्र मिलता तो है, लेकिन कोई कोई स्थान में चूर्णि-वृत्ति के समाधान की अपेक्षा बृहद्भाष्य का समाधान अधिक वास्तविक एवं बुद्धिगम्य होता है। जैसे कि लघुभाष्य की गा. ४०६ (बृहद्भाष्य गा. ९२९) में प्रश्न आता है कि 'कम्हा उ बहुस्सुओ पढमं'। इसका चूर्णि-वृत्ति-प्रदत्त समाधान अस्पष्ट एवं अधूरा प्रतीत होता है। बृहद्भाष्य में दिया गया समाधान सुस्पष्ट, सम्पूर्ण एवं बुद्धिगम्य लगता है (गा. ९३०)।

४) गाथा में निरूपणीय विषय की अवतरणिका या उत्थानिका देने की प्रथा शास्त्रों में होती है। यहाँ भी है। लेकिन चूर्णिकार की उत्थानिका कईबार अपूर्ण लगती है, या तो वे संकेत देकर छोड देते लगते हैं। ऐसे स्थानों में बृहद्भाष्य की उत्थानिका पदार्थ को इतना अच्छा खोल देती है कि तनिक भी गरबडी तो न रह पाए, अपि तु चूर्णि में नहि मिला हो ऐसा अर्थ भी मिल जाय। उदा. लघुभाष्य गा. ४०९ 'सुत्तं कुणति परिजितं०' की उत्थानिका में चूर्णिकार लिखते हैं कि -'आह, तिसु वरिसेसु अपुण्णेसु आयारे पढिए किं करेउ'। अब बृहद्भाष्य की उत्थानिका देखें -

> "किं पुण तिवरिसमाती पकप्पसुत्तातिकप्पितो होति।
> आरेण ण भवति त्ती - भण्णति तिण्हमो णिसामेहि ॥ ९३४ ॥

दोनों का अन्तर स्वयंस्पष्ट है।

५) कभी कभी ऐसा भी दिखाई दिया कि लघुभाष्य की कोई गाथा के शुद्ध पाठ तक और उसके अर्थ-तात्पर्य तक चूर्णि एवं वृत्ति नहि पहोंच पाई हैं। यथा - लघुभाष्य गा. ७२६ में 'पच्चंतुस्सारणे अवोच्छित्ती०' पाठ। यहाँ 'अ वोच्छित्ती' ऐसा पाठ समझा गया होता, पदच्छेद करके लिया गया होता, तो अर्थघटन समुचित हो पाता, और 'पच्चंत' का तात्पर्य 'प्रत्यन्त-ग्राम' तक न जाता।

यहाँ सही पाठ एवं अर्थ के लिए बृहद्भाष्य का आधार लेना अनिवार्य है। यदि बृहद्भाष्य न मिला होता, और अद्ययावत् नहि ही था, तो हम कितने विचित्र अर्थघटन पर अड जाते ?, बृहद्भाष्य गा. १५१४-१६ का सूक्ष्मता से पठन करें तो पाठ एवं अर्थ - दोनों शुद्ध हो जाएंगे। गा. १५१६ में जो वाक्य है - 'पच्चंतुस्सारणम्मि वोच्छित्ती', इसी में समाधान निहित है। 'पच्चंत' यानी अन्तिम उत्सारकल्पिक शिष्य, उसको 'उत्सार' कराने से 'सूत्र' का विच्छेद (वोच्छित्ती) हो जाएगा - ऐसा यहाँ तात्पर्य है।

यहाँ कोई ऐसा तर्क करे कि यदि चूर्णि बृहद्भाष्य के बाद की होती तो चूर्णिकार के सामने बृहद्भाष्य अवश्य होता, और तो वे भी ऐसा ही लिखते। परन्तु उनके सामने वह नहि होगा, क्योंकि वह बाद में रचा गया होगा; तो वह तर्क अनुचित है। चूर्णि से पूर्व में बृहद्भाष्य की रचना हो ही गई हो, लेकिन चूर्णिकार के सामने वह उपस्थित न हो, ऐसा भी हो सकता है। और तो और, अगर वृत्तिकार के सामने तो बृहद्भाष्य था। तो भी उन्होंने इस पाठ को नजरअंदाज कर चूर्णिकार-स्वीकृत पाठ को ही क्यों अपनाया ?। 'अव्वोच्छित्ती' ही क्यों रखा ?। पच्चंत का 'प्रत्यन्त-ग्राम' अर्थ ही क्यों किया ?। तात्पर्य कि जैसे वृत्तिकार के सामने बृहद्भाष्य के होने पर भी उन्होंने उसका अनुसरण नहि किया, वैसे ही चूर्णिकार ने भी बृहद्भाष्य की बात न स्वीकार की हो ऐसा भी संभवित है। अतः ऐसी बात को लेकर चूर्णि की पूर्वता व बृहद्भाष्य की परवर्तिता सिद्ध करना उचित नहीं।

६) कितनीक गाथाएँ लघुभाष्य में थी, और अभी भी हैं, परन्तु बृहद्भाष्यकार को वे अनावश्यक लगने पर उन्होंने उन गाथाओं को निकाल दिया हैं, या नहि लिया हैं। उदा. लघुभाष्य गा. १२८ (वृत्ति गा. ११४) 'मिच्छत्ता संकंती०' यह गाथा। इस गाथा का अर्थ अन्य गाथाओं में कह दिया गया है, अतः उसकी ग्रन्थ में अनिवार्यता नहीं है, तो भी लघुभाष्य में उसे स्थान मिला है, और चूर्णि-वृत्तिकार ने भी उसे मान्य की है। बृहद्भाष्य में ऐसा नहीं। वहाँ यह गाथा टाल दी गई है।

७) लघुभाष्य में गाथाओं के क्रम में कहीं कहीं उत्क्रम भी मालूम पडता है। जैसे कि गा. १९३/१९४। यहाँ वास्तव में १९४ वाली गाथा पहली और

१९३ वाली गाथा उसके पश्चात् हो तो क्रमौचित्य होता। परन्तु व्याख्याकारों ने इसी क्रम से विवरण लिखा है, अतः परिवर्तन को अवकाश नहीं। बृहद्भाष्य में यह क्रम सुआयोजित है। यहाँ पहले 'अत्थं भासति अरहा०' (५०७) आती है, और उसके अनुसन्धान की बात कहते कहते भाष्यकार 'उक्खित्तणाते०' (५११) गाथा लिख देते हैं। यद्यपि लघुभाष्य की गा. १९३ से बृहद्भाष्य की गा. ५११ का पाठ अंशतः भिन्न है, तो भी दोनों का निरूपण तो एक ही है।

ऐसी तो अनेक विशेषताएँ इस बृहद्भाष्य में देखने मिल सकती हैं। और अभी तो बृहद्भाष्य का 'पीठिका-अंश' ही हमने पढा है। आगेवाला हिस्सा पढेंगे तब ऐसी अनेक विशिष्ट बातें सामने आएगी, ऐसा विश्वास के साथ कह सकते है।

बृहद्भाष्य के पीठिकांश में कहीं कहीं पर अमुक अंश त्रुटित भी है। जैसे कि लघुभाष्य ३३६ में 'सेल-घण' आदि दृष्टान्त दिये हैं। उनमें से 'कुट' दृष्टान्त से लेकर 'मशक' दृष्टान्त तक का वर्णन करनेवाली गाथाएँ यहाँ नहि मिली हैं, यानी वह पाठ त्रुटित है।

ऐसा अन्यत्र भी है। परन्तु ऐसी जगह में कभी मुद्रित लघुभाष्य में से त्रुटित अंश को लेकर [ ] में लिया है और वहाँ नीचे प्रायः टिप्पणी भी दी है। तो अमुक जगह पर त्रुटित पाठ के स्थान पर क्या पाठ होना चाहिए, एतद्विषयक सन्दिग्धता रह जाने के कारण, कुछ भी न लिखकर, वह स्थान खाली ही रखा गया है।

पीठिका के प्रान्त भाग में लिखी पुष्पिका में गाथासंख्या "षोडश शतानि द्विनवतीनि' ऐसा वाक्य है। इससे स्पष्ट है कि बृहद्भाष्य-पीठिकांश का गाथासमूह १६९२ का था। लेकिन आज तो १६६२ ही उपलब्ध हैं। यदि उद्धरण की हुई गाथाओं (संस्कृत) को भी यहाँ क्रम दिया जाय तो कोई ५ या ७ गाथाएँ बढ सकती हैं। जैसे - बृहद्भाष्य गा. २१७-१८ के मध्य में आती उद्धरणात्मक गाथा - 'वाग्-दिग्-भू-रश्मि-वज्रेषु०' इत्यादि।

८) बृहद्भाष्य में प्राकृत का पुरातन स्वरूप महत्तम मात्रा में सुरक्षित रहा है। महाराष्ट्री का प्रभाव यहाँ बहुत ही कम मात्रा में दिखाई देता है। यहाँ जो

शब्द-प्रयोग मिलते हैं उन में त,द,ध,प,व इत्यादि वर्णश्रुति अत्यधिक प्रमाण में है। उदाहरणार्थ -

बातर - बादर, पातुता - प्रावृता, पतीतंत - प्रतितंत्र, तिणमो - इणमो, वेताणि - वेदानीं - वा इदानीम्। यहाँ सर्वत्र 'त' श्रुति है। कधमेध - कथमेतत्, भणध - भणथ, कधा - कथा, कधग - कतक, धू - हू। यहाँ 'ध' श्रुति। तथा तोधी - ओधी - ओही। तोगऽणुतोगो - योगणुयोगो। तोभावण - ओभावण। ऐसे आद्य 'ओ - यो' का 'तो'। पेति - बेति, वाधण्णं - पाधण्णं, संकेस - संक्लेश, पुरेखडे - पुरस्कृते इत्यादि।

सामेते - सामी - स्वामी एते। साग - सावग - श्रावक। साक - श्रावक। साकेते - सावके (श्रावके) एते। अण्णं धुवयारं - अन्नं हु उवयारं। ऐसे अनेक प्रयोग बृहद्भाष्य में मिलते हैं। इन प्रयोगों को देखकर स्पष्ट होता है कि इस ग्रन्थ में भाषा का पुरातन स्वरूप सुरक्षित रहा है और अत एव वह भाषास्वरूप इस ग्रन्थ की प्राचीनता का साधक प्रमाण बन सकता है। किसी भाषाशास्त्री के लिए अध्ययन करने लायक यह ग्रन्थ है।

चूर्णि की प्रतियाँ देखें तो पता चलेगा कि उन प्रतियों में जो भाषास्वरूप है उस पर महाराष्ट्री प्राकृत का गहरा प्रभाव स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है। वैसा प्रभाव बृहद्भाष्य की भाषा के उपर नहि हुआ लगता। चूर्णि की एक भी प्रति में, प्रायः, ऐसी पुरातन प्राकृत भाषा प्रयुक्त हुई हो ऐसी जानकारी नहि मिलती। उसका एक तात्पर्य ऐसा भी हो सकता है स्वयं चूर्णिकार ने ही ग्रन्थ में परवर्ती-भाषा-स्वरूप प्रयोजा है। अगर यह कल्पना उचित हो, तो चूर्णि का बृहद्भाष्य से परवर्तित्व स्वयमेव सिद्ध हो जाएगा।

उपयुक्त प्रतियाँ एवं सम्पादनपद्धति

इस चूर्णिग्रन्थ के सम्पादनहेतु हमने पाँच प्रतियों का उपयोग किया है : ४ ताडपत्रप्रतियाँ, १ कागजपत्रप्रति। कागजपोथी का उपयोग अत्यन्त अल्प ही हुआ है, जहाँ हुआ वहाँ **पा.२** संज्ञा से उसका जिक्र किया गया है, क्योंकि वह भी पाटण के भण्डार की थी। ताडपत्रप्रतियों का सामान्य परिचय इस प्रकार है -

१. **पा.** संज्ञक प्रति। पाटण-स्थित श्रीहेमचन्द्राचार्य ज्ञानभण्डार की यह

प्रति है। मूलतः संघ के भण्डार की यह प्रति है। इसका क्र. वहाँ 'पाताहेसं९' है। पृष्ठ १ - ३९३ हैं। मुनि श्रीजम्बूविजयजी के द्वारा की गई जेरोक्स-नकल हमें प्राप्त हुई है। इस प्रति के दो विभाग हैं। प्रथम विभाग में ३८३ पत्र तक चूर्णि है, और शेष १० पत्रों में मूल सूत्र-ग्रन्थ है।

प्रारंभ : नमः सिद्धं ॥ मंगलादीणि सत्थाणि...॥

अन्त (पीठिका का) : इति कल्पचूर्ण्यां पेठिका समत्ता ॥ पत्र ९१/२।

अन्त (ग्रन्थ का) : (हमारे सामने ग्रन्थ का अन्तिम पत्र इस वक्त मौजूद नहि। अतः पूर्व की ग्रन्थावृत्ति में से -) लेखन संवत् १२९१ वर्षे पोस सुदि ४ सोमे ॥ पृ. ३९३।

यह प्रति अशुद्ध है।

२. **भां.** संज्ञक प्रति। पूणे-स्थित भाण्डारकर इन्स्टिट्यूट की यह प्रति है। उसे 'भांता ३९' ऐसी संज्ञा दी गई है। पृष्ठ संख्या १ - ४६६ है। इसकी भी श्रीजम्बूविजयजी के द्वारा की गई जेरोक्स-प्रति हमें प्राप्त हुई है।

प्रारंभ : नमः प्रवचनाय। मंगलादीणि सत्थाणि... ॥ जे. पत्र १३५।

अन्त (पीठिका का) : इति कल्पचूर्ण्यां पीठिका परिसमाप्ता ॥ पृ. १९०।

अन्त (ग्रन्थ का) : कल्पचूर्णी समाप्ता। संवत् १३३४ वर्षे मार्गशुदि १३ गुरौ। कल्पचूर्णी समाप्ता। शुभं भवतु सर्वजगतः ॥ पृ. ४६६।

इस प्रति में पहले मूलसूत्र, फिर लघुभाष्य और उसके बाद में चूर्णिग्रन्थ है।

३. **पू.२** संज्ञक प्रति। यह भी पूणे-स्थित भाण्डारकर इन्स्टिट्यूट के संग्रह की प्रति है। पत्र २८१ हैं। उसे 'भांता ४२' ऐसी पहेचान दी गई है। इसकी भी श्रीजम्बूविजयजी के द्वारा की गई जेरोक्स-प्रति हमें प्राप्त हुई है।

प्रारंभ : ॐ नमो वीतरागाय। मंगलादीणि सत्थाणि... ॥

अन्त (पीठिका का) : कल्पचूर्ण्यां पीठिका परिसमाप्ता ॥ जेरोक्स पत्र ५३।

अन्त (ग्रन्थ का) : कल्पचूर्णी समाप्ता ॥ ग्रन्थ १६००० अंकतोऽपि । संवत् १२१८ वर्षे द्वि. आषाढ शुदि ५ गुरावद्येह श्रीमदणहिलपाटके समस्तराजावलीविराजितसमलंकृत महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक उमापतिवरलब्धप्रसाद महाहवसंग्रामनिर्वूढप्रतिज्ञाप्रौढनिजभुजरणाङ्गणविनिर्जितशाकंभरीभूपाल श्रीमत्कुमारपालदेवकल्याणविजयराज्ये तत्पादपद्मोपजीवित महामात्य-श्रीयशोधवले श्रीश्रीकरणादौ समस्तमुद्राव्यापारान् परिपन्थयति सतीत्येवंकाले प्रवर्द्धमाने । गम्भूता-चतुश्चत्वारिंशच्छतपथके देवश्रीभोपलेश्वरशासनारूढभुज्यमानराजश्रीवैजलदेवेन पट्टितचाहरपल्लिग्रामे तद्वास्तव्य श्रे० साउकउ व्यव० शोभनदेवेन कल्पचूर्णिपुस्तकं पुस्तकसवलकद्रव्यं वृद्धिं नीत्वा तेनैव श्रीमज्जिनभद्राचार्याणामर्थे लेखक सोहडपार्श्वाल्लिखापितेति । यादृशं पुस्तके दृष्टं० ॥

सुरसरि सुरगिरि सुरतरु सुरनाहो जाव सुरालया संति ।

विउसेहि पढिज्जंतं ताव इमं पुत्थयं होउ ॥

मंगलं महाश्रीः । शुभं भवतु लेखक-पाठकयोः ॥ पत्र २८१ ।

४. **खं.** संज्ञक प्रति । यह प्रति खंभात-स्थित शान्तिनाथ जैन ताडपत्रीय भण्डार की क्र. २५ वाली प्रति है । इसमें २४० पत्र हैं, और संभवतः १४वीं शताब्दी की है । इसमें कल्पचूर्णि - प्रथम उद्देश पर्यन्त है । इसकी जेरोक्स नकल हमारे समक्ष थी ।

आरंभ : नमः प्रवचनाय । मंगलादीणि सत्थाणि... ॥

अन्त : इति भगवतः कल्पचूर्ण्यां प्रथमोद्देशकः परिसमाप्तः ॥ बृहच्चूर्णि ग्रन्थाग्रं ८७०० ॥

इस सम्पादन में हमने **भां.** संज्ञक प्रति पर अधिक आधार रखा है । क्योंकि उसमें शुद्धि अधिक लगी, और पाठ भी सुसंगत मिलते थे । तथापि दूसरी सभी प्रतियों में भी जहाँ अर्थसंगति की दृष्टि से अधिक योग्य पाठ प्राप्त हुआ, वहाँ उन प्रतियों का भी उपयोग किया ही है । ऐसे स्थानों पर भां. प्रति का पाठ टिप्पणी में पाठान्तर-स्वरूप रखा है ।

लघुभाष्य की एक स्वच्छ वाचना कल्पवृत्ति-ग्रन्थ में मुद्रित है । सामान्यतया तो यहाँ वह वाचना ही ली गई है । फिर भी जहाँ जहाँ चूर्णिसम्मत पाठ और

वृत्तिमुद्रित पाठ भिन्न भिन्न होते थे, वहाँ वृत्ति-मुद्रित गाथापाठों को पाठान्तर के रूप में टिप्पणी में लिखे हैं, और वहाँ **मु.** या **वृ.** संज्ञा दी है। गाथा के क्रम में जहाँ भिन्नता हो, अथवा कोई गाथा चूर्णिग्रन्थ में हो पर वृत्तिग्रन्थ में नहि हो, तो इन विषयों की नोंध भी टिप्पणी में ली है।

वृत्तिकार ने कथाओं की वाचना कई जगह पर चूर्णि में से शब्दशः ले ली है। इन कथाओं को चूर्णि-गत वाचना के साथ मिलाई हैं, और जहाँ पाठभेद मिले उन्हें टिप्पणी में रखे हैं।

कहीं कहीं कठिन शब्दों के अर्थ भी टिप्पणी में दिये हैं, और विविध उद्धरणों के मूल स्थान खोजने का व देने का भी प्रयत्न किया है।

चूर्णि में पद पद पर आगे-पीछे की गाथाओं का एवं द्वारगाथा का सम्बन्ध या सन्दर्भ आता रहता है। पाठक के लिए यह सन्दर्भ ढुंढना या याद रखना जरा कठिन होता है। हमने प्रायः ऐसे सर्व स्थानों पर, यथासम्भव, उन सम्बन्धित गाथाओं के क्रमाङ्क लिख दिये हैं। इससे पाठकों का काम सुकर हो जाएगा।

चूर्णिकार चूर्णि में कभी पूरी गाथा लिखते नहीं, ऐसी सामान्य शिस्त चूर्णियों में सर्वत्र देखी जाती है। वे सर्वत्र गाथा के प्रतीक ही लेकर चलते हैं। प्रस्तुत चूर्णि में चूर्णिकार ने सिर्फ दो गाथाएँ संपूर्ण लिखी हैं। एक, गा. २७६ 'छव्विह सत्तविहे या०', यह गाथा पञ्चकल्प-भाष्य की आधारभूत गाथा है। दूसरी, गा. २५७ - ५८ के बीच 'कप्प-व्ववहाराणं०' गाथा। इस गाथा का कर्तृत्व, अमुक व्यक्ति के मत से, चूर्णिकार का है। हमारी राय में ऐसा मानना उचित या आवश्यक नहीं। इस बात पर अन्यत्र हमारे विचार हमने लिखे हैं। तो, चूर्णिकार सिर्फ गाथा-प्रतीक देते हैं। उन प्रतीकों के आधार पर, मुद्रित वृत्तिगत लघु-भाष्य की वाचना यहाँ ली है, और उन गाथाओं के पाठ में, चूर्णिसम्मत पाठ के अनुसार, यथास्थान परिवर्तन कर दिया है।

यद्यपि कई गाथाओं पर चूर्णिकार ने व्याख्या ही नहि की है, और 'कंठा' कहकर वे आगे बढ गये हैं। ऐसे स्थान पर चूर्णि-सम्मत पाठ की कल्पना करना अशक्य ही था, अतः वहाँ तो मुद्रित गाथा-वाचना का ही यथातथ स्वीकार किया गया है।

कल्प-बृहद्भाष्य की हमारे पास ४ प्रतियाँ थी। उनमें दो प्रति जैसलमेर की ताडपत्र-प्रतियाँ, और दो कागज की प्रतियाँ थी। उनका परिचय इस प्रकार है-

१. **ता.१** संज्ञक प्रति। प्रतिपरिचय : जेसलमेर, जिनभद्रसूरि ज्ञानभण्डार, प्रति क्र. ४९, कल्प-बृहद्भाष्य, प्रथम खण्ड। पत्र २०२।

आरंभ : नमो वीतरागाय। काऊण नमोक्कारं... ॥

अन्त : ०जक्खो च्चिय होति तरोपलि (?) ॥ संवत् १४९० वर्षे मार्गशीर्षशुदिपञ्चम्यां तिथौ गुरुवासरे श्रीमति स्तंभतीर्थे अविचलत्रिकालज्ञाज्ञापालनपटुतरे श्रीमत्-खरतरगच्छे श्रीजिनराजसूरिपट्टे लब्धिलीलानिलयबन्धुरबहुबुद्धिबोधित-भूवलयकृतपापपूरप्रलय चारुचारित्रचन्दनतरुमलय युगप्रवरोपम मिथ्यात्वतिमिर-करदिनकरप्रसरसम श्रीमद्गच्छेश भट्टारक श्रीजिनभद्रसूरीश्वराणां सूपदेशात् परीक्ष गूजरसुतेन रेखाप्राप्तसुश्रावकेन सा. धरणाकेन पुत्रसाइयासुतसहित श्रीसिद्धान्तकोशे बृहत्कल्पभाष्यपुस्तकं लिखापितं ॥ पत्र २०२।

२. **ता.२** संज्ञक प्रति। प्रतिपरिचय : जेसलमेर, जिनभद्रसूरि ज्ञानभण्डार, प्रति क्र. ४८, पत्र ३११, कल्प-बृहद्भाष्य - प्रथम खण्ड। पत्र १ तथा अन्तिम पत्र नहि हैं। बीच के अमुक पत्र भी नहीं हैं। अन्तिम पत्र का एक खण्ड फोटोकोपी में देखा जाता है। इसमें दृश्यमान अक्षर -

अन्त : राज.प.जिणदासादिपरिवारयुतेन श्रीकल्पबृहद्भा० ॥

अन्य एक खण्ड में 'अक्खरमत्ताहीणं जं...' 'लीलानिलयबन्धुरबहुबुद्धि-बोधित...' ऐसा पढा जाता है।

स्पष्ट है कि दोनों प्रतियाँ सं. १४९० की हैं, धरणाक ने लिखाये चित्कोश की हैं। दोनों एकमेक की नकल जैसी हैं और अत्यन्त अशुद्ध एवं भ्रष्ट पाठ से भरी हैं। फिर भी हमारे लिए तो ये प्रतियाँ ही मुख्य आधार रही है।

३. **अ.** संज्ञक प्रति। यह कागज की प्रति है। पाटण के मोदी भण्डार की और अब श्रीहेमचन्द्राचार्य ज्ञानभण्डार की प्रति है। पाताहेम १००४० क्र. की है। पत्र २०७। हमारे पास श्रीजम्बूविजयजी के द्वारा की हुई जेरोक्स नकल है। यह प्रति तो बृहद्भाष्य की है, लेकिन उसके उपर जम्बूविजयजी ने नाम ऐसा

लिखा है - 'कल्पविशेषचूर्णि, बृहत्कल्पसूत्रविशेषचूर्णि' ।

आरंभ : नमो जिनाय । काऊण नमोक्कारं... ॥

अन्त : जक्खो च्चिय होति पलि... (?) । अक्खरमत्ताहीणं जं च मया अग्गलं इहं लिहियं । खमियव्वं तं सव्वं बुहेहिं मम मंदंमय(इ)णो वि ॥ इति श्रीबृहत्कल्पभाष्यम् ॥ पत्र २०७ ।

४. **ब.** संज्ञक प्रति । यह प्रति पूणे-स्थित भाण्डारकर इन्स्टिट्यूट क्र. १५०/१८८१/८२ की है । हमारे पास उसकी जेरोक्स नकल है, जो भाण्डारकर इन्स्टिट्यूट से प्राप्त की है । पत्र १२८ । नाम है कल्पबृहद्भाष्य ।

आरंभ : नमो जिनाय । काऊण नमोक्कारं...॥

अन्त : जक्खो च्चिय होति पलि (?) ॥ साहश्रीवच्छा-सुत सहसकिरणेण पुस्तकमिदं गृहीतं, सुत-वर्धमान-शान्तिदास-परिपालनार्थम् । ग्रन्थाग्र ८६०० । माहजनइ ॥ पत्र १२८ ।

ये दोनों प्रतियाँ भी ताडपत्र जैसी ही अशुद्ध हैं । फिर भी अमुक स्थान पर अच्छे पाठ देने के कारण वह बहुत उपयुक्त रही हैं ।

बृहद्भाष्य में जहाँ भी लघुभाष्य की गाथा आती है, वहाँ उन गाथाओं को मुद्रित वृत्तिगत वाचना के साथ मिलाई हैं, और जहाँ कोई पाठभेद या पाठान्तर मिला उसे **मु.** संज्ञा से टिप्पणी में लिख दिया है । कभी कभी ऐसा भी हुआ है कि कागजप्रति की वाचना मुद्रित वाचना के समान हो, और ताडपत्र-प्रति अलग पाठ देती हो ।

कुछ कठिन शब्दार्थ भी टिप्पणी में दिये हैं ।

बृहद्भाष्य की जो जो गाथाएँ कल्पवृत्ति में उद्धृत की गई हैं उन सब की नोंध बृहद्भाष्य में उस उस स्थान पर टिप्पणीरूप से की गई है । पाठभेदों की एवं अन्य सूचनात्मक टिप्पणी देवनागरी अङ्को में की गई हैं । और टिप्पणी में जो इंग्लिश अङ्कोंवाली टिप्पणी हैं, वहाँ जो गाथाङ्क हैं वे चूर्णि-सम्मत लघुभाष्य की वाचना के अङ्क हैं । वहाँ दो बात की गई हैं : दोनों की गाथाओं में शाब्दिक समानता हो तो केवल गाथाङ्क दिये हैं, और शब्दों से गाथा भिन्न होने पर भी अर्थ से समानता है वहाँ 'तुलना' शब्द लिखकर गाथाङ्क दिये हैं ।

परिशिष्टों का परिचय

इस सम्पादन के अध्ययन में अध्येताओं की सुगमता के लिए हमने कितनेक परिशिष्ट परिश्रमपूर्वक तैयार किये हैं उनका ब्यौरा इस प्रकार है :

परिशिष्ट १ : बृहत्कल्पसूत्र का स्वाध्याय । इसमें चूर्णि, वृत्ति एवं बृहद्भाष्य - इन तीनों में या तो तीन में से किसी एक या दो में, जहाँ जहाँ प्रतिपादन में, पाठ में, अर्थघटन में, गाथाक्रम आदि में भिन्नता, समानता या न्यूनाधिकता मालूम हुई, वहाँ विमर्शपूर्वक विस्तृत नोंध या टिप्पणी हमने लिखी है। अन्य ग्रन्थों के आवश्यक या विषयानुरूप सन्दर्भों का भी वहाँ यथाशक्य उपयोग किया है। अभ्यासी संशोधकों के लिए अत्यन्त उपयोगी बन सके वैसा यह परिशिष्ट है।

परिशिष्ट २ : प्रायश्चित्तविधान । इसमें चूर्णि, वृत्ति एवं बृहद्भाष्य में प्ररूपित प्रायश्चित्तों के अनेक कोष्ठक बनाकर रखे हैं। तीनों में वर्णित प्रायश्चित्तों की तुलना नोंधरूप से की है। इससे तीनों के प्रायश्चित्त-निरूपण में कहाँ - क्या - कितना तफावत है यह ज्ञात हो सकेगा।

परिशिष्ट ३ : शास्त्रान्तरसन्दर्भ । यहाँ १. निशीथलघुभाष्य, २. व्यवहारलघुभाष्य, ३. जीतकल्प-भाष्य, ४. ओघनिर्युक्ति एवं उसका भाष्य, ५. यतिजीतकल्प - इन सब ग्रन्थों के साथ समानता रखती, कल्पलघुभाष्य की चूर्णि-मान्य गाथाओं की तालिका, तीन प्रकार से दी है –

१) उक्त सब ग्रन्थों की, कल्पभाष्य की गाथा के साथ समान हो ऐसी गाथाओं की, गाथा के क्रमाङ्क एवं पाठभेदों के साथ क्रमशः अलग अलग तालिका।

२) गाथाओं की संयुक्त तालिका, यानी कि लघुभाष्य की गाथा के अङ्क के साथ उक्त पांचों ग्रन्थगत उस उस गाथा के क्रमांक एकसाथ में।

३) पाठभिन्नता के कारण जहाँ विशेष अर्थभेद प्रतीत हुआ, वहाँ उस उस चूर्णि-वृत्ति के पाठ की नोंध।

परिशिष्ट ४ : पाठभेदसूचि । चूर्णि, वृत्ति, बृहद्भाष्य - इन तीनों में

आती लघुभाष्य की गाथाओं में मिलते पाठभेदों की सूचि इस परिशिष्ट में दी गई है।

परिशिष्ट ५ : लघुभाष्य की पीठिका-खण्ड-गत सभी गाथाओं के आदि-पद की अकारादि अनुक्रमणिका। इसमें चूर्णि, वृत्ति एवं बृहद्भाष्य - इन तीनों के गाथाङ्क दिये गये हैं। और जहाँ पर बृहद्भाष्य की गाथा के साथ लघुभाष्य की गाथा की तुलना करने योग्य है वहाँ बृहद्भाष्य के गाथांक के साथ 'तु.' शब्द भी लिख दिया है।

परिशिष्ट ६ : लघुभाष्य की गाथाओं की तालिका। चूर्णि-स्वीकृत लघुभाष्य-वाचना के गाथा-क्रमांक को मुख्य बनाकर, वह गाथा वृत्ति में एवं बृहद्भाष्य में कहाँ - कौन से क्रम पर है उसकी यह तालिका है। यहाँ भी 'तु.' लिखकर तुलना का संकेत यथास्थान दे ही दिया है।

इस परिशिष्ट की मदद से कोई भी गाथा, तीनों ग्रन्थ में कहाँ पर है, यह आसानी से पकडा जाएगा।

परिशिष्ट ७ : बृहद्भाष्य के पीठिकाखण्ड की गाथाओं के आदिपद की अकारादि क्रम से अनुक्रमणिका इस परिशिष्ट में मिलेगी।

परिशिष्ट ८ : कल्पवृत्ति के पीठिकाखण्ड का नया शुद्धिपत्रक। इस अध्ययन के दौरान वृत्ति में अमुक अशुद्धियाँ हमारे ध्यान में आई, उसका एक छोटा-सा पत्रक, अध्येताओं के उपयोग के खातिर यहाँ रखा है।

परिशिष्ट ९ : चूर्णि में उद्धृत किये गये उद्धरण या पाठसन्दर्भों की सूचि। यथासम्भव उनके मूल स्थानों के निर्देश के साथ।

परिशिष्ट १० : चूर्णिगत विशेषनामों की अवर्गीकृत सूचि।

परिशिष्ट ११ : उक्त विशेषनामों की वर्गीकृत सूचि।

परिशिष्ट १२ : लघुभाष्यगत एवं चूर्णिगत कथाओं के संकेत, उनके स्थान एवं विषय की नोंध।

परिशिष्ट १३ : ऐसे ही, लघुभाष्य व चूर्णि में आते दृष्टान्तों के संकेत, स्थान एवं विषय की नोंध।

परिशिष्ट १४ : चूर्णि में निर्दिष्ट अन्य मतों के उल्लेखों की नोंध ।

परिशिष्ट १५ : लघुभाष्य में व चूर्णि में 'निक्षेप' के विषयभूत शब्दों की नोंध ।

परिशिष्ट १६ : लघुभाष्य में व चूर्णि में आते निरुक्त शब्द व निरुक्तियाँ ।

परिशिष्ट १७ : चूर्णि में आते एकार्थक शब्दों की सूचि ।

परिशिष्ट १८ : वाचनाचार्य चन्द्रकीर्तिगणि के ग्रन्थ 'निःशेषसिद्धान्त-विचारपर्याय' में कल्पभाष्य एवं चूर्णि के पीठिकांश को स्पर्श करते पर्यायों की स्थानदर्शक संकेतों के साथ सटिप्पण नोंध ।

परिशिष्ट १९ : सन्दर्भशब्दसूचि । इसमें लघुभाष्य में और चूर्णि में आनेवाले, विविध विषय के और चाभीरूप महत्त्वपूर्ण सैंकडो शब्दों की सुसंकलित सूचि दी है । इसकी मदद से वाचक आसानी से उस उस विषय के ग्रन्थसन्दर्भ तक पहुंच पाएगा ।

यह है इस ग्रन्थ के परिशिष्टों का परिचय ।

कृतज्ञता-ज्ञापन

यह ग्रन्थ श्रीतीर्थङ्करदेव वीर-वर्धमानस्वामी की आज्ञास्वरूप है, और हमारे श्रीसंघ के आदिपुरुष भगवान् श्रीसुधर्मास्वामी गणधर की पट्ट-परम्परा में हुए श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहुस्वामी महाराज, श्रीसंघदासगणि क्षमाश्रमण भगवन्त, श्रीजिनदासगणि महत्तर एवं बृहद्भाष्य के अद्ययावत् हमसे अज्ञात रहनेवाले श्रुतधर महर्षि - इन सभी भगवन्तों की वाणीस्वरूप है । यदि इन महर्षिओं ने ऐसे भवजल-तारक ग्रन्थ न रचे होते तो प्रभु की मंगलकारिणी आज्ञा हम जैसे अबोध लोगों तक कैसे पहुंचती ? । अतः उन सभी महान् श्रुतपुरुषों के चरण-कमलों में हम वन्दन करते हैं और उनका ऋणस्वीकार करते हुए भावपूर्वक कृतज्ञता-ज्ञापन करते हैं ।

कल्पवृत्तिकार महर्षि भगवान् श्रीमलयगिरिजी महाराज एवं आचार्यदेव श्रीक्षेमकीर्तिसूरि महाराज - इन दो महापुरुषों के श्रीसंघ के उपर उपकार अनन्य - असामान्य है । उन्होंने यदि इस छेदसूत्र पर वृत्ति न रची होती और वृत्ति में

लघुभाष्य के एवं चूर्णि के भी भावों को एवं प्रतिपादनों को विशदता के साथ समझाया न होता, तो ये ग्रन्थ हमारे लिए केवल पूजनीय व दर्शनीय ही बने रहते। वृत्ति के आलोक में हमने कितना भव्य और अपरिचित ज्ञान पाया है यह केवल अवर्ण्य बात ही है। हम यानी श्रीसंघ इन श्रुतधर महापुरुषों के प्रति सदैव कृतज्ञ रहेगा। इन भगवंतों के पद-कमलों में भी हम हमारी वन्दना रखते हैं।

वर्तमान युग में श्रीजिनागमों के एवं अन्य शास्त्रों के वैज्ञानिक एवं आधारभूत संशोधन - सम्पादन का प्रशस्त, महान् उपकारक एवं शासनसेवा - श्रुतोपासनारूप कार्य, आगमप्रभाकर पूज्यपाद मुनिराज श्रीपुण्यविजयजी महाराज ने प्रारंभ किया है। हमारा लक्ष्य, उन्हीं के पथ पर चलने का रहा है। हम कितना चल पाए ? या ठीक से चले या नहीं ? इसका निरीक्षण व निर्णय तो, इस मार्ग पर चलने में निष्णात सुज्ञ विद्वज्जन ही कर सकते हैं। लेकिन हमारा आदर्श पथ तो वो ही रहा है। इस कार्य को करते समय हम सैंकडो बार उनका स्मरण करते रहे हैं। आज जब यह पहला खण्ड पूर्णतः तैयार होने जा रहा है तब हम उनके चरणों में हमारी विनम्र वन्दना अर्ज करते हैं।

अन्त में, हमारी सज्जता एवं सूझ-बूझ के अनुसार इस सम्पादन-कार्य को करने का हमने प्रयत्न व परिश्रम किया है। फिर भी, इस कार्य में जानते - न जानते, कहीं भी, श्रीजिनेश्वर प्रभु की आज्ञा से विपरीत बात हुई हो, और भाष्यकार, चूर्णिकार, वृत्तिकार एवं बृहद्भाष्यकार आदि सर्व शास्त्रकारों की आशातना या अनादर हो जाय ऐसा शब्द / वाक्यप्रयोग अनजाने में हो गया हो, अथवा पूरे ग्रन्थ के सम्पादन में कोई क्षति हो गई हो, तो उन सब के लिए हम श्रीसंघ के प्रति नतमस्तक होकर क्षमायाचना करते हैं। हमारी क्षति के प्रति हमारा ध्यान खींचने के लिए मध्यस्थ सुज्ञजनों को हमारी विनम्र प्रार्थना है। अस्तु।

नन्दनवन तीर्थ - तगडी
दीपावली - श्रीवीर-कल्याणक पर्व,
सं. २०७३ आसो कृष्ण अमावस

विजयशीलचन्द्रसूरि एवं
मुनि त्रैलोक्यमण्डनविजय

प्रस्तावना की टिप्पणियाँ

१. ''संघदासगणि नामना बे आचार्यो थया छे : एक वसुदेवहिंडि - प्रथम खण्डना प्रणेता, अने बीजा प्रस्तुत कल्पलघुभाष्य अने पंचकल्पभाष्यना प्रणेता।'' - *'बृहत्कल्पसूत्र : प्रास्ताविक', 'ज्ञानांजलि', (गुजराती) पृ. ८४, सागरगच्छ उपाश्रय, वडोदरा, ई. १९६९।*

२. ''.. वसुदेवहिंडि - प्रथम खण्डना प्रणेता श्रीसंघदासगणि 'वाचक' पदालंकृत हता, ज्यारे कल्पभाष्यप्रणेता संघदासगणि 'क्षमाश्रमण' पदविभूषित छे।'' - *वही, पृ. ८५।*

३. ''..वसुदेवहिंडि - प्रथम खण्डना प्रणेता श्रीसंघदासगणि वाचक तो निर्विवाद रीते तेमना (जिनभद्रगणिना) पूर्वभावी आचार्य छे।'' - *वही, पृ. ८५।*

४. ''परन्तु भाष्यकार श्रीसंघदासगणि क्षमाश्रमण तेमना (जिनभद्रगणिना) पूर्वभावी छे के नहि ए कोयडो अणउकल्यो ज रही जाय छे।'' - *वही, पृ. ८५।*

५. ''संघदासगणि क्षमाश्रमण (वि. ५ वीं शताब्दी) : ये आचार्य वसुदेवहिंडि - प्रथम खण्ड के प्रणेता संघदासगणि वाचक से भिन्न हैं एवं इनके बाद के भी हैं। इन्होंने कल्पलघुभाष्य और पञ्चकल्पभाष्य की रचना की है। वे महाभाष्यकार जिनभद्रगणि के पूर्ववर्ती हैं।'' - *वही, 'जैन आगमधर और प्राकृत वाङ्मय', (हिन्दी) पृ. ३७।*

६. ''एम लागे छे के कल्प, व्यवहार अने निशीथ लघुभाष्यना प्रणेता श्रीसंघदासगणि क्षमाश्रमण होय तेवो ज संभव वधारे छे। कल्पलघुभाष्य अने निशीथलघुभाष्य ए बेमांनी भाष्यगाथाओनुं अतिसाम्यपणुं आपणने आ बन्ने भाष्यकारो एक होवानी मान्यता तरफ ज दोरी जाय छे।'' - *वही, (गुज.) पृ. ८६।*

७. ''.. बृहत्कल्पलघुभाष्यना प्रथम उद्देशनी समाप्तिमां भाष्यकारे 'उदिण्णजोहाउलसिद्धसेणो, स पत्थिवो णिज्जियसत्तुसेणो' (गा. ३२८९) आ गाथामां, के जे आखुं प्रकरण अने आ गाथा निशीथलघुभाष्यना सोळमा उद्देशामां छे तेमां, लखेला 'सिद्धसेणो' नाम साथे भगवान श्रीसंघदासगणि क्षमाश्रमणने कोई नामान्तर तरीकेनो संबंध तो नथी ?। ... 'सिद्धसेन' शब्द एवो छे के सहजभावे आपणुं ध्यान खेंचे छे।'' - *वही, पृ. ८६-८७।*

८. ''व्यवहारभाष्यना प्रणेता कया आचार्य छे, ते क्यांय मळतुं नथी; तेम छतां ए आचार्य एटले के व्यवहारभाष्यकार, श्रीजिनभद्रगणि क्षमाश्रमणथी पूर्वभावी होवानी मारी दृढ मान्यता छे। ... आ उपरथी श्रीजिनभद्रगणि करतां

व्यवहारभाष्यकार पूर्ववर्ती छे एमां लेश पण शंकाने स्थान नथी ।'' - *वही*, पृ. ८६ ।

९. 'बृहत्कल्पसूत्र : प्रास्ताविक' - आ प्रस्तावना सं. २००८, ई. १९४२ मां मुद्रित छे । ज्यारे 'जैन आगमधर और प्राकृत वाङ्मय' - ए लेख सने १९६४ नो छे ।

१०. ''... केवल पदवीभेद से व्यक्तिभेद की कल्पना नहीं की जा सकती । एक ही व्यक्ति विविध समय में विविध पदवियाँ धारण कर सकता है । ... कभी कभी तो कुछ पदवियाँ परस्पर पर्यायवाची भी बन जाती हैं । ऐसी दशा में केवल 'वाचक' और 'क्षमाश्रमण' पदवियों के आधार पर यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि इन पदवियों के धारण करनेवाले संघदासगणि भिन्न भिन्न व्यक्ति थे ।'' - *जैन साहित्य का बृहद् इतिहास* - ३, पृ. १३५-१३६, *मोहनलाल मेहता, पार्श्वनाथ विद्याश्रम, बनारस, ई. १९६७ ।*

११. ''एक मूर्ति के पद्मासन के पिछले भाग में 'ॐदेवधर्मोऽयं निर्वृतिकुले जिनभद्रवाचनाचार्यस्य' ऐसा लेख है ।'' - *वही*, पृ. १३१ ।

१२. **वाचक**मुख्यस्य शिवश्रियः प्रकाशयशसः प्रशिष्येण ।
शिष्येणघोषनन्दि-**क्षमण**स्यैकादशाङ्गविदः ॥
वाचनया च **महावाचकक्षमण**मुण्डपादशिष्यस्य ।
शिष्येण **वाचका(ना?)चार्य**-मूलनाम्नः प्रथितकीर्तेः ॥ - *तत्त्वार्थसूत्र-अन्तिमोपदेशकारिका-प्रशस्तिः ।*

१३. देखें जैन साहित्य का बृहद् इतिहास - ३, पृ. १३६-१३७ ।

१४. ''कल्प और व्यवहारभाष्य के कर्ता एक ही हैं ।'' - *निशीथसूत्रम् - पीठिकाखण्ड १ में प्रस्तावना, पृ. ३८ (टि.), सं. उपा. अमरमुनि, मुनि कन्हैयालाल, प्र. अमर पब्लिकेशन, वाराणसी, ई. २००५ ।*

१५. *वही, पृ. २९-३० ।*

१६. *वही, पृ. ३८-३९ ।*

१७. ''हाँ, तो उक्त गाथा में आचार्य ने अपने नाम की कोई सूचना नहीं दी है, ऐसा माना जा सकता है ।'' - *वही, पृ. ४० ।*

१८. *वही, पृ. ३९ ।*

१९. देखें टि. क्र. ६ ।

२०. ''उपर्युक्त सभी उल्लेखों के आधार पर यह निश्चय किया जा सकता है कि निशीथभाष्य तो निर्विवाद रूप से सिद्धसेन क्षमाश्रमण कृत है । और क्योंकि

बृहत्कल्प और व्यवहार के कर्ता वे ही हैं, जिन्होंने निशीथभाष्य की संकलना की है, अत एव कल्प, व्यवहार और निशीथ इन तीनों के भाष्यकर्ता सिद्धसेन हैं ऐसा माना जा सकता है।'' - *वही, पृ.* ४३।

२१ ''... क्षेमकीर्ति ने भाष्यकार के रूप में सिद्धसेन का नाम न देकर संघदास का नाम क्यों दिया - इसका उचित स्पष्टीकरण अभी तो लक्ष्य में नहीं है। संभव है, भविष्य में कुछ सूत्र मिल सकें और उक्त प्रश्न का समाधान हो सके।'' - *वही, पृ.* ४३।

२२ ''... स्वयं बृहत्कल्प और निशीथभाष्य में विशेषावश्यक की अनेक गाथाएँ उद्धृत हैं। देखिए, निशीथ गा. ४८२३-२४-२५ विशेषावश्यक की क्रमशः गा. १४१-४२-४३ हैं। विशेषावश्यक की गा. १४१-४२ बृहत्कल्प में भी हैं गा. ९६४-६५। ... अथवा कुछ देर के लिए यही मान लिया जाए कि जिनभद्र को भाष्य ही अभिप्रेत है, निर्युक्ति नहीं; तब भी प्रस्तुत असंगति का निवारण यों हो सकता है कि सिद्धसेन को जिनभद्र का साक्षात् शिष्य न मानकर उनका समकालीन ही माना जाय। ऐसी स्थिति में सिद्धसेन के व्यवहारभाष्य को जिनभद्र देख सकें, तो यह असंभवित नहीं।'' - *वही, पृ.* ४५।

२३ ''... ऐसी स्थिति में जिनभद्र और भाष्यकार सिद्धसेन का पौर्वापर्य अंतिम रूप में निश्चित हो गया है, यह नहीं कहा जा सकता। ... जिनभद्र के जीतकल्पभाष्य और सिद्धसेन के निशीथभाष्य तथा व्यवहारभाष्य की संलेखनाविषयक गाथाएँ एक जैसी ही हैं। ... ये गाथाएँ किसी एक ने अपने ग्रन्थ में दूसरे से ली हैं या दोनों ने ही किसी तीसरे से - यह प्रश्न विचारणीय है।'' - *वही, पृ.* ४५।

२४. *व्यवहारसूत्रम् - ३, सं. आ. मुनिचन्द्रसूरि, प्र. आ. ॐकारसूरि ज्ञानमन्दिर - सूरत, ई. २०१०। व्यवहारभाष्य, प्र. जैन विश्वभारती - लाडनूं, ई. १९९६ (इसमें गा. १२२६)।*

२५. *बृहत्कल्पसूत्रम् - ५, पृ. १३४५-४६, सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. जैन आत्मानन्द सभा, भावनगर, ई. १९३८।*

२६. *बृहत्कल्पसूत्रम् - १, पृ. ११४, सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. जैन आत्मानन्द सभा, भावनगर, ई. १९३३।*

२७. *व्यवहारसूत्रम् - ४, पृ. ९९८-९९, सं. आ. मुनिचन्द्रसूरि, प्र. आ. ॐकारसूरि ज्ञानमन्दिर, सूरत, ई. २०१०।*

२८. *वही, पृ. १०३३।*

२९. *वही, पृ. १०६४-६५।*

३०. *वही*, पृ. १०६९ ।
३१. *वही*, पृ. ११५८ ।
३२. *वही*, पृ. ११६० ।
३३. *व्यवहारसूत्रम्* - ५, पृ. १२९६, *सं. आ. मुनिचन्द्रसूरि, प्र. आ. ॐकारसूरि ज्ञानमन्दिर -सूरत, ई. २०१०* ।
३४. *वही*, पृ. १३१६ ।
३५. *वही*, पृ. १३२६-२७ ।
३६. *वही*, पृ. १३३६ ।
३७. *वही*, पृ. १३६७ ।
३८. *व्यवहारसूत्रम्* - ६, पृ. १५४२, *सं. आ. मुनिचन्द्रसूरि, प्र. आ. ॐकारसूरि ज्ञानमन्दिर -सूरत, ई. २०१०* ।
३९. *वही*, पृ. १५९७ ।
४०. *वही*, पृ. १६२३ । (यहाँ 'द्वितीय-तृतीययोरुद्देशयोः' के स्थान पर 'प्रथम-द्वितीययोरुद्देशयोः' होना चाहिए था ।)
४१. *बृहत्कल्पसूत्रम्* - १, पृ. १७७-७८, *सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. जैन आत्मानन्द सभा - भावनगर, ई. १९३३* ।
४२. *वही*, पृ. १७८ ।
४३. उदाहरण के तौर पर देखें निशीथचूर्णि के २० वें उद्देश के अन्त में चूर्णिकार की लिखी यह गाथा -
ति-चउ-पण-अट्ठमवग्गे ति-पणग-ति-तिग अक्खरा व तेसिं ।
पढम-ततिएहि ति-दु-सरजुएहि णामं कयं जस्स ॥
४४. ''जीतकल्पभाष्य की रचना जिनभद्र क्षमाश्रमण ने की है । और उसकी चूर्णि के कर्ता सिद्धसेन हैं । मेरे विचार से ये सिद्धसेन ही प्रस्तुत (निशीथ के भाष्यकार) सिद्धसेन क्षमाश्रमण हैं । ... इससे प्रतीत होता है कि सिद्धसेन आचार्य, जिनभद्रक्षमाश्रमण के साक्षात् शिष्य हो, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं ।'' - *निशीथसूत्रम् - पीठिकाखण्ड १ में प्रस्तावना, पृ. ४४, सं. उपा. अमरमुनि, मुनि कन्हैयालाल, प्र. अमर पब्लिकेशन, वाराणसी, ई. २००५* ।
४५. देखें टि. २० ।
४६. ''मुनिराज श्रीपुण्यविजयजी ने जिनभद्र को व्यवहारभाष्य के बाद का माना है । और प्रमाणस्वरूप विशेष-णवति की गा. ३४ गत 'ववहार' शब्द को उपस्थित करते हुए कहा है कि स्वयं जिनभद्र, प्रस्तुत में, 'ववहार' शब्द से व्यवहारभाष्य-

गत गा. १९२ (उद्देश - ६) की ओर संकेत करते हैं । (बृहत्कल्पसूत्र : प्रास्ताविक, पृ. २२) । यदि सिद्धसेन व्यवहारभाष्यकार माने जाय तो इस प्रमाण के आधार से उन्हें जिनभद्र से पूर्व माना जा सकता है, पश्चात्कालीन या उनके शिष्यरूप नहीं माना जा सकता । अस्तु । सिद्धसेन जिनभद्र के शिष्य कैसे हुए - यह प्रश्न यहाँ सहज ही उपस्थित हो सकता है । किन्तु इसका स्पष्टीकरण यह किया जा सकता है कि स्वयं बृहत्कल्प और निशीथभाष्य में विशेषावश्यकभाष्य की अनेक गाथाएँ उद्धृत हैं । देखिए, निशीथ गा. ४८२३-२४-२५ विशेषावश्यक की क्रमशः गा. १४१-४२-४३ हैं । विशेषावश्यक की गा. १४१-४२ बृहत्कल्प में भी हैं - गा. ९६४-६५ । हाँ, तो जीतकल्पचूर्णि की प्रशस्ति के आधार पर यदि सिद्धसेन को आचार्य जिनभद्र का शिष्य माना जाए तब तो जिनभद्र के उक्त गाथागत 'ववहार' शब्द का अर्थ 'व्यवहारभाष्य' न लेकर 'व्यवहारनिर्युक्ति' लेना होगा । जिनभद्र ने केवल 'ववहार' शब्द का ही प्रयोग किया है, 'भाष्य' का नहीं किया । और बृहत्कल्प आदि के समान व्यवहार-भाष्य में भी व्यवहारनिर्युक्ति और भाष्य दोनों एकग्रन्थरूपेण संमिलित हो गए हैं, अत एव चर्चास्पद गाथा को एकान्त भाष्य की ही मानने में कोई प्रमाण नहीं है । अथवा कुछ देर के लिए यदि यही मान लिया जाए कि जिनभद्र को भाष्य ही अभिप्रेत है, निर्युक्ति नहीं, तब भी प्रस्तुत असंगति का निवारण यों हो सकता है कि सिद्धसेन को जिनभद्र का साक्षात् शिष्य न मानकर उनका समकालीन ही माना जाय । ऐसी स्थिति में सिद्धसेन के व्यवहारभाष्य को जिनभद्र देख सकें, तो यह असंभवित नहीं ।'' - *वही, पृ.* ४५ ।

४७. *बृहत्कल्पसूत्रम् - २, पृ. ३०४, सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. जैन आत्मानन्द सभा - भावनगर, ई. १९३६ ।*

४८. *विशेषावश्यकभाष्य - १, पृ. ४५, प्र. दिव्यदर्शन ट्रस्ट - मुंबई, सं. २०३९ ।*

४९. ''जओ सुएऽभिहियं' ... इसका अर्थ कोई यह कर सकता है कि गा. १४१ को विशेषावश्यक के कर्ता उद्धृत कर रहे हैं । क्रिन्तु गा. १४१ का वक्तव्यांश श्रुत में कहा गया है, न कि स्वयं वह गाथा - ऐसा मानकर ही मैंने प्रस्तुत में १४१-४२-४३ गाथाओं को विशेषावश्यक से निशीथ में उद्धृत माना हैं ।'' - *निशीथसूत्रम् - पीठिकाखण्ड १ में प्रस्तावना, पृ. ४५, सं. उपा. अमरमुनि, मुनि कन्हैयालाल, प्र. अमर पब्लिकेशन, वाराणसी, ई. २००५ ।*

५०. *बृहत्कल्पसूत्रम् - २, पृ. ३०४, सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. जैन आत्मानन्द*

सभा - भावनगर, ई. १९३६।

५१. *विशेषावश्यकभाष्य - १, पृ. १२९-१३१, प्र. दिव्यदर्शन ट्रस्ट - मुंबई, सं. २०३९।*

५२. ''अब मुनिराज पुण्यविजयजी ने संघदास और सिद्धसेन की एकता या उन दोनों के सम्बन्ध की जो संभावना की है, उस पर भी विचार किया जाता है। जिस गाथा का उद्धरण देकर संभावना की गई है, वहाँ 'सिद्धसेन' शब्द मात्र श्लेष से ही नाम की सूचना दे सकता है। क्योंकि सिद्धसेन शब्द वस्तुतः वहाँ संप्रति राजा के विशेषण के रूप में आया है, नाम-रूप से नहीं। बृहत्कल्प में उक्त गाथा प्रथम उद्देशक के अंत में (३२८९) आई है, अतएव श्लेष की संभावना के लिए अवसर हो सकता है। किन्तु निशीथ में यह गाथा किसी उद्देश के अन्त में नहीं, किन्तु १६ वें उद्देशक के २६ वें सूत्र की व्याख्या की अंतिम भाष्यगाथा के रूप में (५७५८) है। अतएव वहाँ श्लेष की संभावना कठिन ही है। अधिक संभव तो यही है कि आचार्य को अपने नाम का श्लेष करना इष्ट नहीं है, अन्यथा वे भाष्य के अंत में भी इसी प्रकार का कोई श्लेप अवश्य करते। हाँ, तो उक्त गाथा में आचार्य ने अपने नाम की कोई सूचना नहीं दी है, ऐसा माना जा सकता है।'' - *वही पृ. ४०।*

५३. *बृहत्कल्पसूत्रम् - ६, 'बृहत्कल्पसूत्र : प्रास्ताविक', पृ. २०, सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. जैन आत्मानन्द सभा - भावनगर, ई. १९४२।*

५४. *ज्ञानांजलि, हिन्दी विभाग, पृ. ३७।*

५५. *गाथासाहस्री ।*

५६. *निशीथचूर्णि* में २० वे उद्देश में अन्तिम गाथा।

५७. *नन्दीसूत्र-चूर्णिः, पृ. ५६, सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. म. जै. वि. - मुंबई, ई. १९६६।*

५८. *मूलग्रन्थ में पृ. २३।*

५९. *बृहत्कल्पसूत्रम् - १, पृ. २७, सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. जैन आत्मानन्द सभा - भावनगर, ई. १९३३।*

६०. *नन्दीसूत्र-चूर्णिः, पृ. ५२-५५, सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. म. जै. वि. - मुंबई, ई. १९६६।*

६१. *मूल ग्रन्थ में पृ. ७३-७४।*

६२. *मूल ग्रन्थ में पृ. २४।*

६३. *नन्दीसूत्र-चूर्णिः, प्रस्तावना पृ. १२ टि. १, सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. म. जै. वि. - मुंबई, ई. १९६६।*
६४. *वही, पृ. १२।*
६५. *'जैन साहित्य का बृहद् इतिहास - ३', पृ. २९१, मोहनलाल मेहता, पार्श्वनाथ विद्याश्रम - बनारस, ई. १९६७।*
६६. *जैन ग्रन्थावली, पृ. १२।*
६७. *नन्दीसूत्र-चूर्णिः, प्रस्तावना पृ. ९, सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. म. जै. वि. - मुंबई, ई. १९६६।*
६८. *'जैन साहित्य का बृहद् इतिहास - ३', पृ. २९१, मोहनलाल मेहता, पार्श्वनाथ विद्याश्रम - बनारस, ई. १९६७।*
६९. *वही, पृ. २८९।*
७०. *देखें टि. २७।*
७१. *व्यवहारचूर्णि की हस्तलिखित प्रति, पत्र - १।*
७२. *पंचकप्पभासं, सं. लाभसागर गणि, प्र. आगमोद्धारक ग्रन्थमाला - कपडवंज, सं. २०२८, प्रस्तावना पृ. ९-१०, हस्तप्रतियों से लिए उद्धरण।*
७३. *वही।*
७४. *वही।*
७५. *वही।*
७६. *वही।*
७७. *मूल ग्रन्थ में पृ. १।*
७८. *आवश्यकचूर्णि, पृ.९/२* में - 'अहवा अणक्खरं आभिणिबोहितं, सुयं अक्खरं वा होज्ज अणक्खरं वा, एस विसेसो' यह मत 'अहवा' कहते हुए चूर्णिकार ने प्रतिपादित किया है। अब इसी मत को लेकर महाभाष्यकार ने लिखा कि -
"अन्ने अणक्खर-ऽक्खरविसेसओ मइ-सुयाइं भिंदंति।
जं मइनाणमणक्खर-मक्खरमियरं च सुयनाणं ॥१६२॥"
स्पष्ट रूप से इसमें आवश्यकचूर्णिवाली ही बात है। आगे इसका खण्डन करने में अनेक गाथाएँ हैं। वृत्तिकार ने 'अत्राऽऽचार्यो दूषणमाह' कहकर १६३ वीं गाथा की व खण्डन-पक्ष की उत्थानिका दी है। गा. १७० तक यह प्रतिविधान किया गया है। आवश्यकचूर्णि में ही, उपरोक्त पाठ के बाद में तुरंत 'अथवा' से शुरू करके 'एवं आभिणिबोहियणाणं मूकसरिसं दट्ठव्वं, सुयणाणं पुण अमूकसरिसं ति' ऐसा मत-निरूपण हुआ है। इस मत का भी महाभाष्य की गा. १७१ से

लेकर १७५ तक कडी आलोचना के साथ निरसन किया गया है ।
ऐसे तो अनेक स्थान हैं, जहाँ चूर्णिकार के प्रतिपादित मत की जिनभद्रगणि ने आलोचना या खण्डन किये हो । यदि इस चूर्णि के कर्ता बाद में हुए या वे जिनदासगणि हैं ऐसा स्वीकार करें तो, महाभाष्यकार निर्दिष्ट 'अन्ने' कौन है वह खोजना होगा, और महाभाष्य को अनुकूल या मान्य नहि थे ऐसे अभिप्रायों को जिनदासगणि ने मान्यता दी, ऐसा मानना पडेगा । यह तो बिल्कुल गलत होगा । यहाँ चूर्णि व चूर्णिकार को महाभाष्य से प्राचीन मानना ही उचित हल है ।

७९. ''परिजुण्णेसा भणिता सुविणे देवीए पुप्फचूलाए ।
नरगाण दंसणेण पव्वज्जाऽऽवस्सए वुत्ता ॥ ६०९ ॥ पंचकल्पभाष्ये
आमां भाष्यकार पुष्पचूलाना दृष्टान्त माटे 'आवश्यक' नो निर्देश करे छे । आ दृष्टान्त आवश्यकनिर्युक्ति के भाष्यमां क्यांय नथी । आवश्यकचूर्णिमां छे । जो चूर्णि पहेलां आनी रचना होय तो आ निर्देश न होय । आथी सिद्ध थाय छे के आनी (पंचकल्पभाष्यनी) रचना आवश्यकचूर्णि पछी थई छे ।'' *ले. मुनि पुण्योदयसागर, पंचकल्पभाष्य-प्रस्तावना, पृ. ९, कपडवंज ।*

८०. *ज्ञानांजलि, हिन्दी विभाग, पृ. ३७ ।*

८१. यह कृति अप्रकाशित है । हस्तप्रति के रूप में है ।

८२. *ज्ञानांजलि, हिन्दी विभाग, पृ. ७२-७३ ।*

८३. *वही, पृ. २७ ।*

८४. *ज्ञानांजलि, गुजराती विभाग, पृ. ८५ ।*

८५. *बृहत्कल्पसूत्रम् - ६, 'बृहत्कल्पसूत्र : प्रास्ताविक', पृ. ६५, सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. जैन आत्मानन्द सभा - भावनगर, ई. १९४२ ।*

८६. *बृहत्कल्पसूत्रम् - १, भाष्यगाथा - ६००, पृ. १७३, सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. जैन आत्मानन्द सभा - भावनगर, ई. १९३३ ।*

८७. *'निःशेषसिद्धान्तविचारपर्यायः', पृ. ४०, सं. पं. लाभसागर गणि, प्र. जैनानंद पुस्तकालय - सूरत, सं. २०२९ ।*

८८. देखें गा. १२९१ एवं १३१३ ।

८९. *बृहत्कल्पचूर्णिः - गा. ६०१, पृ. १५५,* 'भयत्ति वियारेहिं । ... एस विचारणा' ।
बृहत्कल्पवृत्तिः - १, पृ. १७३, गा. ६००, 'भज - विकल्पय, जानीहीत्यर्थः' ।

९०. *बृहत्कल्पसूत्रम् - २, पृ. २५६, सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. जैन आत्मानन्द सभा - भावनगर, ई. १९३६ ।*

९१. *बृहत्कल्पसूत्रम्* - ६, पृ. १६७६, *सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. जैन आत्मानन्द सभा - भावनगर, ई.* १९४२।

९२. 'सूत्रस्पर्शिकनिर्युक्तिर्भाष्यं चैको ग्रन्थो जातः ॥' *बृहत्कल्पसूत्रम्* - १, पृ. २, *सं. मुनि पुण्यविजयजी, प्र. जैन आत्मानन्द सभा - भावनगर, ई.* १९३३।

९३. *मूल ग्रन्थ*, पृ. ४२।

९४. *मूल ग्रन्थ*, पृ. ४२।

९५. *मूल ग्रन्थ*, पृ. ५३।

९६. *मूल ग्रन्थ*, पृ. ५३।

९७. *मूल ग्रन्थ*, पृ. ५५।

९८. *मूल ग्रन्थ*, पृ. ३०।

९९. *मूल ग्रन्थ*, पृ. १२३।

१००. *मूल ग्रन्थ*, पृ. १२४।

१०१. *मूल ग्रन्थ*, पृ. ११४।

१०२. *मूल ग्रन्थ*, पृ. १२४।

* * *

माहिती

नवां प्रकाशनो

१. रागोपनिषद्

विविध साधु-कविओअे रचेल 'रागमालाओ'नो संचय : सं. आ. तीर्थभद्रसूरिजी, प्रका. श्रीकनकसूरि प्राचीन ग्रंथमाला, ध्रांगध्रा, सं. २०७४.

मध्यकालना विविध जैन कविओअे भारतीय शास्त्रीय संगीतना विविध रागोने केन्द्रमां राखीने जिनभक्तिपरक गेय गुर्जर के मारुगुर्जर रचनाओ करी छे. तेवी आशरे २० करतां अधिक रागमालाओनो सचित्र संग्रह. असंख्य चित्रो तथा सुशोभनोथी विभूषित आर्ट पेपरमां मुद्रित दळदार - वजनदार ग्रन्थ. आमां शास्त्रीय रागोनां लक्षणो, वर्णनना दुहा, गीत तथा श्लोको वगेरे पण संगृहीत छे. रागमालानां प्रख्यात चित्रो तथा राग-परिचय वगेरे पण समावेल छे.

२. बृहद् निर्ग्रन्थस्तुतिमणिमञ्जूषा : प्रथम खण्ड

सं. मधुसूदन ढांकी, जितेन्द्र शाह. प्र. ला.द. विद्यामन्दिर, अमदावाद, ई. २०१७.

ईसा पूर्व २०० थी ई. ९००ना कालखण्डमां रचायेलां जैन स्तोत्रोनो एक अनुपम अने ऐतिहासिक संचय. भाषा प्राकृत-संस्कृत-अपभ्रंश. विस्तृत भूमिकालेख तथा बे सुन्दर प्रस्तावना-लेखो वडे अलङ्कृत ग्रन्थ. सद्गत ढांकीसाहेबना जीवननां केटलांक श्रेष्ठ सम्पादनो-सर्जनो पैकी एक, मात्र डॉ. ढांकी ज करी शके तेवुं सम्पादन. आनुं प्रकाशन जोईने जवानी ढांकीजीनी तीव्र झंखना रहेती. परन्तु तेमनी ते इच्छा सफल न थई - एनो वसवसो तेओ छेक सुधी करता रहेला.

आ ग्रन्थना बीजा खण्डो केटला होय ते समजायुं नथी, केम के प्रकाशके ते विषे कोई स्पष्टता आपी नथी. परन्तु बाकीना जे पण खण्ड होय ते सत्वरे प्रगट थाय तेनी राह विद्वज्जगतने रहेवानी.

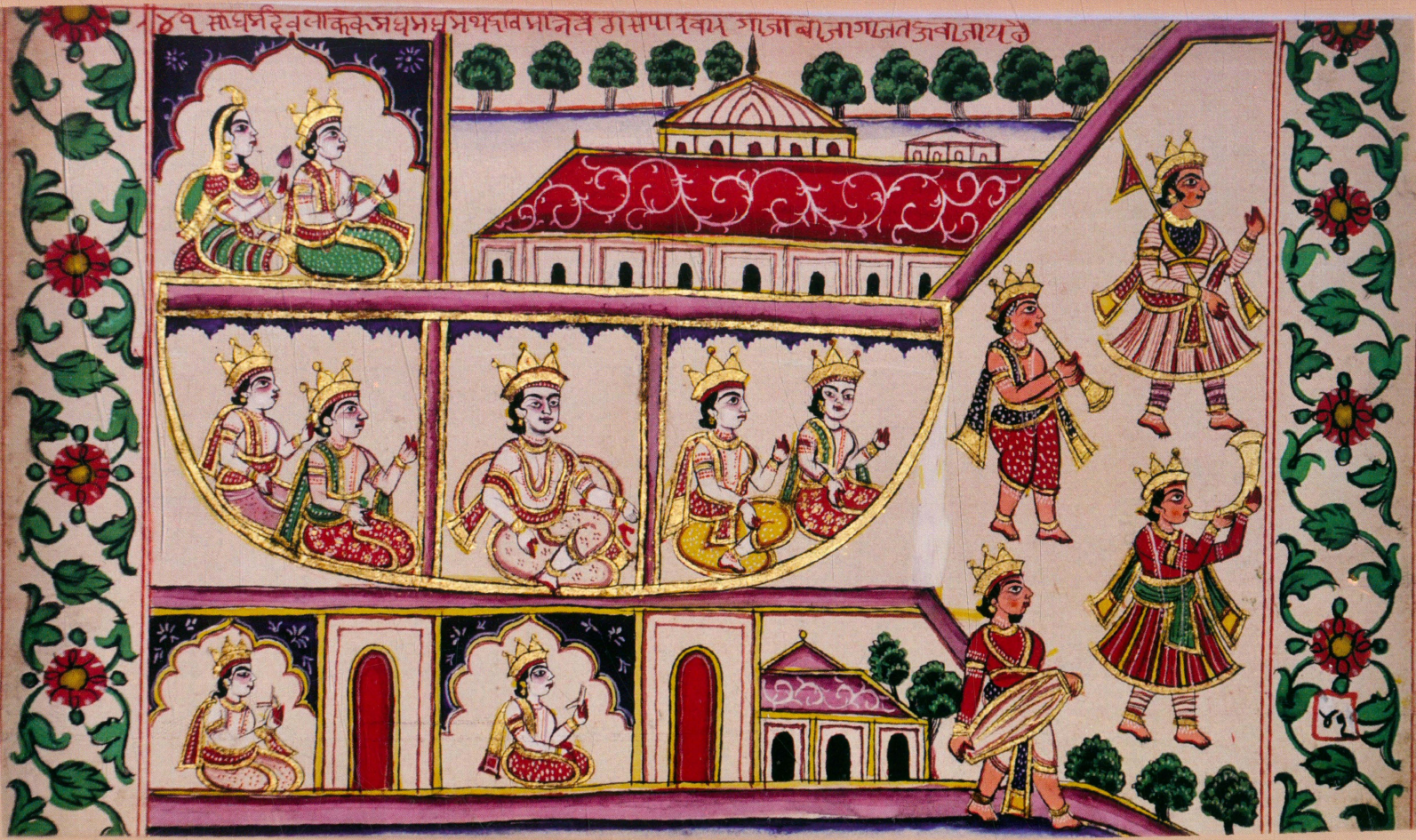

इतीश्रीरायप्रसेनवीजा अंगनाः सूत्रतब्याटबीर्थ समाप्तं ॥ इबापुरा लीषा आहासुदि १५ को पुरा लीष्या

इतीश्रीरायप्रसेणीसूत्र टबाअर्थ समाप्त संबत १८८२३ ॥ आषाढ सुदि १५ बुधवासरे लिषतं

सुश्रावक पुन्यप्रभावक तनसाली गोत्रे साहजी श्री ५ सुनकरणदास ततपुत्र कूलदीपकं

सुषराद्रास्येने लिषावितं आपणआत्मा हेते लीषतं सहोदर ना दं गंगाराम येणं ॥ श्री कल्याणं ॥

सुसाधुजी रायप्रसेनी वाचरहे हैः सुषराद्रास सपरिवारस्ं